सरस्वती आश्रम

ॐ

संस्कृत का स्वयं-शिक्षक

द्वितीय भाग

लेखक

श्रीपाद दामोदर सातवलेकर

(अग्नि सूक्त, वैदिक देवता, वैदिक सभ्यता, वेद में जंतु शास्त्र, वेद में वद्यशास्त्र, उत्तम ज्ञान इत्यादि पुस्तकों का लेखक)

प्रकाशकः

राजपाल-प्रबंधकर्त्ता

सरस्वती आश्रम, लाहौर

प्रथमबार १००० | संवत् १९७३ सन् १९१७ | मूल्य १।) सजिल्द १॥)

॥ ओ३म् ॥

सावधान होकर पढ़ें ।

जिस समय "संस्कृत स्वयंशिक्षक" का पहला भाग प्रकाशित किया गया, उस समय न इसके निर्माण कर्त्ता श्री पंडित सातवलेकर जी को और ना मुझे ही आशा थी, कि यह पुस्तक जो सर्वथा नई शैली पर लिखी गई है, इतना सन्मान पाएगी, कि इसका पहला संस्करण केवल चारमास में समाप्त हो जाएगा। उर्दू हिन्दी समाचार पत्रों ने दिल खोल कर इसकी प्रशंसा की, स्थान नहीं कि उनकी सम्मतियों का इस जगह उल्लेख किया जावे, जनता ने, जिस में बड़े २ प्रसिद्ध कीर्तिवान् सनातनधर्म्मी और आर्य्यसमाजी दोनों संमिलत हैं, हृदय से इसका स्वागत किया, वह लोग, जो संस्कृत भाषा को अति कठिन समझ कर इसकी पढ़ाईसे निराश होचुके थे, उन्हों ने इसके प्रथम भाग को पढ़कर संस्कृत के पवित्र मंदिर में प्रवेश किया। सब से अधिक खुशी की बात यह है इस पुस्तक से मुसलमान भाईयों ने भी लाभ उठाया और इसकी शैली को पसंद किया। इस सन्मानता के लिए मैं पंडित जी की ओर से और अपनी ओर से जनता का धन्यवाद करता हूं, और संस्कृत के प्रचारकों की दृष्टि इस ओर आकर्षित करता हूं, कि जिस पुस्तक के द्वारा केवल चार मास में एक हज़ार मनुष्यों में संस्कृत का प्रचार होगया, क्या उनका कर्तव्य नहीं कि वह उस पुस्तक का अपने विद्यालयों पाठशालाओं और गृहोंमें प्रचार करके लेखक के उत्साह को बढ़ावें ॥

पुस्तक के प्रथम भाग की अपेक्षा यह दूसरा भाग बहुत बड़ा है और उन दिनों की अपेक्षा काग़ज का मूल्य भी बहुत बढ़ चुका है तो भी इसका मूल्य केवल १।) सवा रुपया रखा गया है, इसकी कीमत पाठकों के लिए इतनी ही है कि वह संस्कृत का प्रचार करने के लिये इस पुस्तक की अपने इष्ट मित्रों से सिफ़ारश करें ॥

प्रकाशक
राजपाल
(उप सम्पादक प्रकाश) लाहौर ।

इस पुस्तक का अभ्यास करने का प्रकार

(१) इस पुस्तक का अभ्यास प्रारंभ करने के पूर्व इस पुस्तक के ७ पृष्ठ पर दिये हुए प्रश्नों का यथा योग्य उत्तर देना चाहिए।

(२) प्रश्नों का उत्तर देने के पश्चात् प्रथम पाठ तक जो कुछ लिखा हुआ है उसे पढ़ना। तत् पश्चात् प्रथम पाठ से पढ़ने का प्रारंभ पाठक कर सकते हैं।

(३) हर एक पाठ का अभ्यास करने का प्रकार यह है:—

(अ) प्रथम सब पाठको एक बार पढ़ें।

(इ) तत् पश्चात् उस उस पाठ में जो व्याकरण के नियम आदि लिखे हैं उनको अच्छी प्रकार स्मरण करें। तथा हरएक नियम के जो उदाहरण दिये हैं उनको विचार की दृष्टि से देख, अच्छी प्रकार जान, नियमानुकूल उनको घटाकर देखें।

(उ) इतना होने के बाद जिन जिन शब्दों के रूप उस उस पाठ में दिये गये है उनको कण्ठ कर, पूर्व पाठों के शब्दों के साथ उनकी तुलना करके, उनकी विशेषता की ओर खास ध्यान दे दें। तथा चलाये हुवे शब्दों के साथ साथ जो जो समान शब्द दिये हैं उनको इसी प्रकार चला कर उनके सब रूप लिखें।

(ऋ) जब शब्द ठीक प्रकार स्मरण हों, तब उस पाठ में दिये हुए संस्कृत वाक्य, उनके भाषा में दिये हुए अर्थ की ओर न देखते हुए, पढ़ें।

(ऌ) संस्कृत वाक्य तथा संस्कृत पाठ पढ़ने के समय, भाषा के अर्थ की ओर न देखते हुए हरएक वाक्य तथा हरएक संस्कृत पाठ बड़ी आवाज में पढ़ें। आवाज इतनी बड़ी हो कि जो १५।२० आदमी अच्छी प्रकार सुन सकें।

(ए) हर एक संस्कृत पाठ न्यून से न्यून दस बार पढ़ना तथा पढ़ने के समय भाषा में दिये हुए अर्थों से जहां तक होसके वहां तक सहायता नहीं लेनी। परंतु पूर्व दिये हुये शब्द तथा वाक्य देखकर अपने आप अर्थ करने का यत्न करना। जो पाठक पूर्व पाठ ठीक तैयार करके आगे चलेंगे उनको इस प्रकार अर्थ जानने में कोई कठिनता नहीं होगी।

(ऐ) जहां परीक्षा के प्रश्न दिये हैं वहां उनके उत्तर दिये बिना आगे नहीं बढ़ना। अन्यथा दुबारा पढ़ने का व्यर्थ कष्ट उठाना पड़ेगा।

(ओ) जहां पूर्व पाठ दुबारा पढ़ने के लिये लिखा है. वहां पाठक अवश्य उनको दुबारा पढ़ें। यद्यपि उनकी राय में पूर्व के पाठ उनको ठीक स्मरण होंगे। तो भी दुबारा पढ़ना उनके लाभ के लिये ही होगा यह उन्होंने ध्यान रखना चाहिये।

(औ) हर एक पाठ में कई विशेषण दिये हैं। उनके रूप विशेष्य के अनुसार किस प्रकार बदलते रहते हैं यह बात विशेष सूक्ष्म दृष्टि से देखनी उचित है।

(अं) प्राचीन ग्रंथों में से जो जो कथायें दीं हुईं हैं उनको प्रारंभ से अंत तक स्मरण (याद) करना उचित है। जो पाठक उन को अच्छी प्रकार स्मरण (याद) करेंगे न केवल वे अच्छी संस्कृत बोल सकेंगे परन्तु प्रौढ संस्कृत में व्याख्यान भी दे सकेंगे। परन्तु जो पाठक इन कथाओं को स्मरण नहीं करेंगे वे इस योग्यता से वंचित रहेंगे।

(अः) हर एक पाठ में दिये हुवे समास विवरण को ध्यान से देखना उचित है। इस प्रकार जो पाठक पढ़ेंगे उनको ही इस पुस्तक माला से लाभ हो सकेगा॥ ग्रंथ लेखक।

'संस्कृत स्वयं शिक्षक' के प्रथम भाग की परीक्षा के नियम ।

(१) परीक्षा के लिये २ घण्टे का समय निश्चित है ।

(२) प्रश्नों के उत्तर लिखने के समय पुस्तक, देख कर लिखना नहीं चाहिए । परन्तु केवल स्मरण से लिखना चाहिये ।

(३) जिनको आर्यभाषा (हिंदी) के नागरी अक्षर लिखने का बहुत अभ्यास नहीं ऐसे उर्दू दां भाईयों के लिये चार घण्टे का समय दिया जा सकता है । परन्तु शर्त यह है कि पाठक जिस समय प्रश्नों के उत्तर लिखने के लिये बैठें उस समय से लेकर उत्तर का लेख समाप्त होने तक बीच में उठें नहीं ।

(४) प्रश्नों के उत्तर लिखे जाने पर उसी समय उस लेख को बंद करके डाकद्वारा मेरे पास रवाना करना चाहिए और साथ अपना पूरा पता देना चाहिए । ताकि परिणाम की सूचना भेजी जा सके ।

(५) जो समय के अन्दर ठीक उत्तर देंगे वे दूसरा भाग प्रारंभ कर सकते हैं । जो समय के अंदर संपूर्ण प्रश्नों का उत्तर न सकेंगे उनके लिये आवश्यक है कि वे प्रथम भाग को दुबारा पढ़ें अथवा मेरे उत्तर का इंतजार करें, और जिन २ हिस्सों को

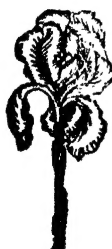
दुबारा देखने के लिये मैं लिखूंगा उन २ को दुबारा देखें तत् पश्चात् दूसरे भाग को प्रारंभ करें।

(६) प्रश्नों का उत्तर स्याही से कागज के एक ओर लिखना चाहिए और जहां तक होसके पढ़ा जाने योग्य सुवाच्य लिखना चाहिए।

(७) जो शुद्ध किये हुये प्रश्न पत्र अपने देखने के लिये वापस चाहते हैं वे एक आने का टिकट भेजने की कृपा करें।

(८) उत्तर लिखने से पहिले पाठकों को उचित है कि वे सब प्रश्नों को एक बार पढ़ें। और बाद उत्तर लिखना प्रारंभ करें।

आशा है कि पाठक इन नियमों का पालन करेंगे।



संस्कृत स्वयं शिक्षक प्रथम भाग की

परीक्षा के प्रश्न

(१) निम्न शब्दों का अर्थ भाषा में लिखिए:—

दासः। मह्यम्। तस्मै। खनति। क। पादत्राणं। पिष्टम्। रजकः। हसनम्। विष्टरः। पुत्रेण। पिहितम्। नेत्राभ्याम्। विषम्। प्रपा। तडागः। निःशेषं। परीक्ष्य।

(२) निम्न लिखित शब्दों के लिए संस्कृत शब्द दीजिये:—

तब। वैसा। सियाही। कलम। पूरी। दूध। कद्दू। मेरे लिये। पीयेगा। नहीं तो। गिर गया। कीचड़। आओ। प्रतीक्षा। गैया। टेबल। झोला। गेंद। घूमना। दोस्त। जंगल। गुन्हा।

(३) जिस प्रकार 'गच्छति' क्रिया के 'गच्छति, गच्छसि, गच्छामि, गमिष्यति, गमिष्यसि, गमिष्यामि' ऐसे रूप बनते हैं, उस प्रकार निम्न क्रियाओं के उक्त प्रकार के छै छै रूप लिखिए:—

नयति। आगच्छति। पठति। पिबति। भवति। प्रक्षालयति। स्थापयति। पीडयति। दर्शयति। परीक्षते। पालयति।

(४) जैसे 'पठति' के 'पठित्वा, पठितुं' ये दो रूप बनते हैं वैसे निम्न क्रियाओं के दो दो रूप देकर उनका अर्थ दीजिये:—

पालयति । दर्शयति । करोति। चलति। नयति। पिबति।
खादति । गृह्णाति। स्थापयति। अटति। लिखति।भक्षयति।

(५) निम्न शब्दों के संधि जोड़कर लिखिए:—

कदा+अपि । न+एव । न+अस्ति । पुष्पं+आनय अधुना+आलेख्यं+आनयति । त्वं+अत्र । यद्+अत्र । त्वं+अपि ।

(६) जोड़े हुए निम्न शब्दों को खोलकर अलग अलग लिखिए:—

(१) त्वमिदानीं जलमानयसि ।

(२) स कदात्र पुस्तकमानयिष्यति ।

(३) कपाटमुद्घाटयाहमभ्यन्तरे तेन सहागन्तुमिच्छामि ।

(४) पूर्वमहमद्य किमपि कर्तुमिच्छामि ।

(५) यदहमिदानीं त्वामाज्ञापयामि किमिति न करोषि तत् ।

(६) स इदानीमेव गृहाद्बहिर्गतः ।

(७) स भोजनायाद्य पक्वमन्नमानयति ।

(७) निम्न लिखित विशेषणों के पुल्लिंगी, स्त्रीलिंगी, नपुंसक-लिंगी रूप दीजिये :—

श्वेत। मधुर। शोभन । उद्यमशील । अंध । पीत। रक्त। सर्व । पुष्ट । कृत । दृष्ट । शील । उष्ण । शुद्ध।सौम्य ।

(८) निम्न वाक्यों का अनुवाद भाषा में कीजिए:—

(१) तस्य वस्त्रं मया प्रक्षालितम् ।

(२) तेन बालकेन तस्मै वृषभाय प्रभूतं शुद्धं जलं दत्तम् ।

(३) यज्ञमित्रः प्रातःकाले शुद्धे स्थाने उपविश्य एकाग्रेण मनसा संध्यां अग्निहोत्रं च करोति ।

(४) अहं एतत् पुस्तकं गृहं नयामि ।

(५) तस्मिन् स्थाने श्वनः अस्ति, तं गृहीत्वा शीघ्रं अत्र आगच्छ ।

(६) स प्रातः प्रतिदिनं कुत्र गच्छति ।

(७) यथा वानरः वृक्षं आरोहति न तथा मनुष्यः कर्तुं शक्नोति ।

(९) भाषा के निम्न वाक्यों के संस्कृत वाक्य लिखिए:—

(१) बंदर रात्रि में वृक्ष के ऊपर सोता है ।

(२) वैद्य रोगी मनुष्य के लिये दवा देता है ।

(३) सुनार सोने का गहना बनाता है ।

(४) उसके घर घोड़ा है तथा बिल्ली भी है ।

(५) तूं कल सवेरे घूमने के लिये चलेगा ।

(६) उस बालक ने वहां तालाब में एक मेंढक देखा ।

(७) वह कलकत्ता शहर में रहता है उसका नाम वंशधर है ।

(८) ठग के मुंह में मीठा भाषण तथा हृदय में विष होता है ।

(९) मैं आंखों से देखता हूं और मुख से पढ़ता हूं।

(१०) वह शूर पुरुष अब जंग में गया है।

(१०) पाठ ४४ में जो संस्कृत भाषा में नारद की कथा दी हुई है उसको पुस्तक खोलकर प्रथम तीन वार जल्दी पढ़िए। फिर ध्यान से दो वार आहिस्ते २ पढ़िए, और पुस्तक बंद करके, पुस्तक न देखते हुवे उस कथा को जैसी लिख सकेंगे वैसी कागज पर लिखिए।

(केवल इसी प्रश्न के लिये पाठक पुस्तक को देख सकते हैं)

(११) किसी एक दिन का अपना व्यवहार संस्कृत में लिखिए। सवेरे किस समय उठे। स्नानादिक किस समय किया। क्या क्या अभ्यास किया। भोजन क्या किया। किन मित्रों से मिले। सायंकाल को क्या किया। किस समय सोये। इत्यादि जो कुछ लिखना उचित है।

(१२) संस्कृत स्वयं शिक्षक के प्रथम भाग में जो जो धर्म के विषय के वाक्य आये हैं। उनमें से जो जो आपको स्मरण हों वे वाक्य जैसे स्मरण हैं उन्हें वैसे ही लिखिए।

(१३) निम्न वाक्य अशुद्ध हैं, उनको ठीक शुद्ध करके लिखिए :—

स वदामि।

त्वं गच्छामि।

अहं ह्यः तत्र गमिष्यामि।

त्वं श्वः मद्रासनगरं गतः।

रामः संध्यां करोमि ।

अहं श्वेतं मालां आनयामि ।

स रक्ता वस्त्रं गृह्णाति ।

शुद्धा नवनीतं शोभनः आस्मि ।

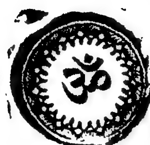
तत्र पक्का फलं स भक्षयामि ।

(१४) ऐसे चार वाक्य लिखिये कि जिनमें निम्न शब्दों का प्रयोग हुवा है । प्रत्येक वाक्य में एक या दो शब्द आजांय ।

शीघ्रं । अध्यापकः । रामस्य । आलस्यं । दीपं ।

कोलाहलः । मंत्रः । नित्यं । ईश्वरः । मिष्टम् ।





"संस्कृत भाषा के स्वयं शिक्षक"

के

द्वितीय भाग के विषय में एक दो शब्द ।



थोड़े दिनों के पूर्व मैंने 'संस्कृत का स्वयं शिक्षक' का प्रथम भाग प्रसिद्ध किया था । उस समय मुझे ऐसी आशा नहीं थी, कि २।३ महिनों के अंदर ही उसके प्रथम वार की पुस्तकें सब की सब लग जांयगीं और द्वितीय भाग की मांग इतनी जलदी हो जायगी । परन्तु बड़ी खुशी की बात है कि, इतने अल्प समय में प्रथम भाग की सब पुस्तकें प्रायः लग चुकीं हैं और द्वितीय भाग की मांग बड़े जोर शोर से होरही है जिस की पूर्ति के लिए यह द्वितीय भाग लिखा है ।

इस द्वितीय भाग में प्रायः सब आवश्यक नाम तथा सर्व नामों के रूप बनाने का सुगम प्रकार बताया है । तथा संधि के अत्यंत आवश्यक नियम भी दिये हुए हैं । इसमें अभ्यास क्रम ऐसा रक्खा है कि जिससे पाठकगण नाटक, रामायण, महाभारत के

सुगम भागों को पढ़कर समझ सकें । रामायण, महाभारत, बाणभट्ट की कादंबरी, दशकुमार चरित, वेणीसंहार, मुद्रा राक्षस, शाकुंतल, उत्तरराम चरित्र, पंचतंत्र, हितोपदेश, कथा कुसुमांजली आदि संस्कृत पुस्तकों से उद्धृत किये हुए ३०, ४० कथा प्रसंग इस पुस्तक में दिये हुए हैं। और शैली ऐसी रक्खी है कि, पाठक पढ़ते पढ़ते स्वयं इस योग्यता को प्राप्त होंगे कि बिना किसी की सहायता के उक्त कथाओं को स्वयं जान सकेंगे।

'संस्कृत स्वयं शिक्षक' की शैली की विशेषता इस एक बात से सिद्ध होती है, कि, इसके प्रथम भाग के पढ़ने से कईयों की योग्यता संस्कृत में बात चीत करने तथा पत्र लिखने तक पहुंच चुकी है। मेरे पास 'स्वयं शिक्षक'के पाठकों से केई चिट्ठीयां संस्कृत में आयीं हैं। वे लिखते हैं कि संस्कृत में पत्र लिखने का धैर्य उनको केवल ' स्वयं शिक्षक' पढ़ने से ही हुआ है।

'स्वयं शिक्षक' प्रणाली की विशेषकर दो खूबियां हैं। एक खूबी यह है कि जो इन पुस्तकोंको पढ़ते हैं उनमें संस्कृत अभ्यास के विषय में आत्म बिश्वास बढ़ता है तथा दूसरी खूबी यह है कि, बड़ी आसानी से पढ़ने वालों का प्रवेश संस्कृत में होता है।:

कई लोक पूंछते हैं कि, 'स्वयं शिक्षक' प्रणाली में ऐसा कौन सा जादू है, कि जिससे संस्कृत भाषा इतनी जलदी आजायगी। इस प्रकार के प्रश्न करने वालों को उत्तर इतना ही है कि वे हमारे छे पुस्तकों में से न्यून से न्यून चार पुस्तकें पढ़ कर देखें कि हमारी प्रतिज्ञा के अनुकूल कार्य होता है अथवा नहीं। सच बात तो यह

है कि जो 'स्वयं शिक्षक' की पुस्तकें पढ़ेंगे, उनको कहने की आवश्यकता नहीं, और जो नहीं पढ़ेंगे उनको कहने से कोई लाभ नहीं। तथापि सर्व साधारण के लिये इतना कहा जा सकता है कि संस्कृत में हजार से अधिक धातु हैं। परन्तु सब धातु विशेष प्रयोग में आने वाले नहीं है, प्रायः तीनसों धातु ऐसे हैं कि जिनका प्रयोग होकर सब संस्कृत ग्रंथ भांडार बना है। इन धातुओं से शब्दों का विस्तार कैसा होता है और उनके प्रयोग आसानी से किस प्रकार किये जा सकते हैं। इसका वर्णन तीसरे भाग मे प्रारंभ होकर चौथे भाग में समाप्त होगा। ये दो भाग हमारी खास प्रणाली के दर्शक होंगे। तीसरे और चौथे भाग को पढ़ने की योग्यता पाठकों मे उत्पन्न करने का कार्य प्रथम तथा द्वितीय भागों ने किया है। इसलिये आशा है कि, पाठक इनको पढ़कर लाभ उठायेंगे।

लाहौर
१-१-१७

ग्रंथकर्ता

मूलाक्षर–व्यवस्था।

(१) स्वर.

अ आ, इ ई, उ ऊ, ऋ ॠ, ऌ ॡ

ए ऐ, ओ औ, अं, अः।

(१) कण्ठ स्थान के स्वर—अ आ आ-३—०
(२) तालु ,, ,, —इ ई ई-३—०
(३) ओष्ठ ,, ,, —उ ऊ ऊ-३—०
(४) मूर्धा ,, ,, —ऋ ॠ ॠ-३—०
(५) दन्त्य ,, ,, —ऌ(*ऌ) ऌ-३—०
(६) कण्ठतालु ,, ,, —ए ऐ
(७) कण्ठौष्ठ ,, ,, —ओ औ
(८) अनुस्वार-(नासिका स्थान) —अं, इं, उं, एं, इत्यादि

---

* ऌ स्वर के लिये दीर्घ नहीं है। परंतु ध्यान में रखना चाहिये कि, विवृत प्रयत्न ऌ वर्ण के लिये दीर्घत्व नहीं है, ईषत्स्पृष्ट प्रयत्न के ऌ वर्ण के लिये दीर्घत्व है। इन प्रयत्नों का विचार आगे के विभागों में होगा। (पृष्ठ १६ देखो)

(६) विसर्ग (कण्ठ स्थान) ः अः, इः, उः, ओः इ०

(१०) ह्रस्व स्वर अ, इ, उ, ऋ, लृ,

(११) दीर्घ स्वर आ, ई, ऊ, ॠ,(*ॡ)

(१२) प्लुत स्वर आ३, ई३, ऊ३, ॠ३, ॡ३,

ह्रस्व स्वर के उच्चारण की लंबाई की एक मात्रा, दीर्घ स्वर का उच्चारण दो मात्रा, प्लुत स्वर का तीन मात्रा का उच्चारण होता है। अर्थात् जितना समय ह्रस्व के लिये लगता है, उसके दुगणा दीर्घ के लिये, तथा तीन गुणा प्लुत के लिये लगता है। दूर से किसी को पुकारने के समय अंतिम स्वर प्लुत होता है जैसा 'हे धनंजया——३——० अत्र आगच्छ' (हे धनंजया—३—० यहां आ)।

इस वाक्य में "धनंजय" के यकार में जो आकार है वह प्लुत है, और उसकी उच्चारण की लंबाई तीन गुणा है। शहरों में मार्ग पर तथा स्टेशन आदि पर चीजें बेचने वाले अपनी चीजों के विषय में प्लुत स्वर से पुकारते हैं। जैसेः—

(१) —खटा—३—इयां—३—०

(२) हिंदू—पा—३—नी——३——०

(३) चा—गा——३——रम्——०

इत्यादि सैंकड़ों स्थानों पर प्लुत स्वर का श्रवण होता है। वेदों के मंत्रों में जहां (३) तीन संख्या दी हुवी रहती है, उसके पूर्व का स्वर प्लुत बोला जाता है। मुरगी 'कु-कू-कू-३-' ऐसा आवाज देती है उसमें पहिला उ ह्रस्व, दूसरा दीर्घ तथा तीसरा प्लुत होता है।

इन स्वरों के भेदों के सिवाय 'उदात्त, अनुदात्त, स्वरित' ऐसे प्रत्येक स्वर के तीन भेद है। जो केवल वेद में आते हैं। इनका वर्णन आगे के विभागों में होगा। अ॒-अ-अ॑-ऐसे स्वर वेद में आते हैं।

(१३) गुण स्वर--अ, ए, ओ, अर्, अल्

(१४) वृद्धि स्वर--आ, ऐ, औ, आर, आल्

उक्त गुण वृद्धि क्रम से अ, इ, उ, ऋ, ऌ इन स्वरों की समझनी चाहिये। इस प्रकार स्वरों का सामान्य विचार समाप्त हुआ।

(२) व्यंजन।

(१) कण्ठ स्थान--कवर्ग-क, ख, ग, घ, ङ

(२) तालु स्थान--चवर्ग-च, छ, ज, झ, ञ

(३) मूर्धा स्थान--टवर्ग-ट, ठ, ड, ढ, ण

(४) दन्त्य स्थान---तवर्ग--त, थ, द, ध, न

(५) ओष्ठ स्थान---पवर्ग--प, फ, ब, भ, म

इन पच्चीस व्यंजनों को 'स्पर्श वर्ण' कहते हैं।

(६) अंतस्थ व्यंजन__य (तालु स्थान), व (दन्त्य तथा ओष्ठ स्थान), र (मूर्धास्थान), ल (दन्त्यस्थान)

'य्, र्, ल्, व्' इन चार वर्णों को 'अंतस्थ व्यंजन' कहते हैं।

(७) उष्म व्यंजन--श (तालव्य), ष (मूर्धन्य), स (दन्त्य) ह (कण्ठ्य)

'श्, ष्, स्, ह्' इन चार वर्णों को 'उष्म व्यंजन' कहते हैं।

(८) मृदु व्यंजन--ग, घ, ङ; ज, झ, ञ;
ड, ढ, ण; द, ध, न;
ब, भ, म; य, र, ल, व,

इन बीस व्यंजनों को मृदु व्यंजन कहते हैं। क्योंकि इनका उच्चारण मृदु-अर्थात्--नरम, कोमल होता है।

(९) कठोर व्यंजन--क, ख; च, छ; ट, ठ; त, थ;
प, फ; श, ष, स

इन तेरह व्यंजनों को कठोर व्यंजन बोलते हैं। इसलिये कि इनका उच्चारण कठोर-अर्थात्--सख्त होता है।

(१०) अल्प प्राण-व्यंजन—क, ग, ङ; च, ज, ञ;
ट, ड, ण; त, द, न;
प, ब, म; य, व, र, ल;

इन उन्नीस व्यंजनों को अल्प प्राण कहते हैं। क्योंकि इनका उच्चारण करने के समय मुख में हवा के ऊपर ज़ोर नहीं दिया जाता।

(११) महा प्राण-व्यंजन—ख, घ; छ, झ
ठ, ढ, थ, ध
फ, भ; श, ष स ह

इन चौदह व्यंजनों को महा प्राण कहते हैं। इसलिये कि इनके उच्चारण के समय मुख में हवा को बहुत दबाना पड़ता है।

(१२) अनुनासिक व्यंजन—ङ, ञ, ण; न; म;
ये पांच अनुनासिक कहलाते हैं। क्योंकि इनका उच्चारण नाक के द्वारा होता है।

(१३) कण्ठ नासिका स्थान—ङ
(१४) तालु नासिका ,, —ञ
(१५) मूर्धा नासिका ,, —ण
(१६) दंत नासिका ,, —न
(१७) ओष्ठ नासिका ,, —म

इस प्रकार व्यंजनों की सामान्य व्यवस्था है। इस से जो और सूक्ष्म भेद है वे अगले विभागों में बताये जांयगे।

वर्णोंकी उत्पत्ति।

मुख के अंदर स्थान स्थान पर हवा को दबाने से भिन्न भिन्न वर्णों का उच्चारण होता है। मुख के अंदर पांच विभाग किये हैं (प्रथम भाग में जो चित्र दिया है वह देखिये) उनको स्थान कहते हैं। इन पांच विभागों में से प्रत्येक विभाग में एक एक स्वर उत्पन्न होता है। स्वर उसको कहते हैं कि जो एक ही आवाज में बहुत देर तक बोला जासके। जैसाः—

अ~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~ अ~~~~~

इ~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~ ई~~~~~

उ~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~ ऊ~~~~~

ऋ~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~ ॠ~~~~~

ऌ~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~ ॡ~~~~~

('ऋ ऌ' स्वरों के उच्चारण के विषय में प्रथम भाग में जो सूचना दी हुई है उसको स्मरण रखना चाहिए। उत्तर हिंदुस्थान के लोग इसका उच्चारण 'री' तथा 'ल्री' ऐसा करते हैं। यह बहुत ही अशुद्ध है। कभी ऐसा उच्चारण नहीं करना चाहिए। 'री' में 'र इ' ऐसे दो वर्ण मूर्धा और तालु स्थान के हैं। 'ऋ' यह केवल मूर्धा स्थान का शुद्ध स्वर है। केवल मूर्धा स्थान के शुद्ध

[illegible] का उच्चारण मूर्धा और तालु स्थान के दो वर्ण मिला कर करना अशुद्धि है और उच्चारण की दृष्टि से बड़ी भारी गलती है।

'ऋ' का उच्चारण, "ध ˆˆˆˆˆर्म" धर्म शब्द बहुत लंबा बोला जाय, और ध और म के बीच का रकार बहुत वार बोला जाय तो उसमें से एक रकार के आधे के बराबर है।. इस प्रकार जो 'ऋ' बोला जाता है वह एक जैसा लंबा बोला जा सकता है। छोटे लड़के आनंद से अपनी जिव्हा को हिला हिला कर इस् ऋकार को बोलते रहते हैं।

जो लोग इसका उच्चारण 'री' करते हैं उनको ध्यान देना चाहिये कि 'री' लंबी बोलने पर केवल 'ई' रहती है। जो कि तालु स्थान की है। इस कारण यह 'री' उच्चारण सर्वथैव अशुद्ध है।

'ऌ' कार का 'ली' उच्चारण भी उक्त कारणों से अशुद्ध है। उत्तरीय लोगों को चाहिए कि वे इन दो स्वरों का शुद्ध उच्चारण करें। अस्तुः—

पूर्व स्थान में कहा है कि, जिनका लंबा उच्चारण होता है वे स्वर कहलाते हैं। गवय्ये लोक स्वरों को ही गा सकते हैं। व्यंजनों को नहीं। क्योंकि व्यंजनों का लंबा उच्चारण होता ही नहीं। इन पांच स्वरों में भी 'अ इ उ' ये तीन स्वर अखंडित पूर्ण है और 'ऋ, ऌ' ये खंडित स्वर हैं। पाठकगण इनके उच्चारण की ओर ध्यान देंगे तो उनको पता लगेगा कि खंडित तथा अखंडित इनको क्यों कहते हैं। जिनका उच्चारण एक रस जैसा होता है वे

अखंडित, पूर्ण स्वर होते हैं तथा जिनका उच्चारण एक रस नहीं होता है उनको खंडित बोलते हैं। इन पांच स्वरों से व्यंजनों की उत्पत्ति हुई है, जिसका क्रम आगे दिया है:—

मूल स्वर

अ इ ऋ ऌ उ

इनको दबाकर उच्चारण करते करते एकदम उच्चारण बंद करने से निम्न लिखित व्यंजन बनते हैं :—

ह य र ल व

इनका मुख में उच्चारण होने के समय हवा के लिये कोई रुकावट नहीं होती। जहां इनका उच्चारण होता है उसी स्थान पर पहिले हवा का आघात करके फिर उक्त व्यंजनों का उच्चारण करने से निम्न व्यंजन बनते हैं :—

घ झ ढ ध भ

इनको जोर से बोला जाता है। इनके ऊपर जो बल-जोर होता है, उस जोर को कम करके यही वर्ण बोले जाय तो निम्न वर्ण बनते हैं :—

ग ज ड द ब

इनका जहां उच्चारण होता है उसी स्थान के थोड़े से ऊपर के भाग में विशेष बल न देने से निम्न वर्ण बनते हैं :—

क च ट त प

इनका हकार के साथ जोरदार उच्चारण करने से निम्न वर्ण बनते हैं :—

ख छ ठ थ फ

अनुस्वार पूर्वक इनका उच्चारण करने से इन्हीं के अनुनासिक बनते हैं :—

अङ्क पञ्च घण्टा इन्द्र कम्बल

सकार का तालु, मूर्धा तथा दंत्य स्थान में उच्चारण किया जाय तो क्रम से श्, ष्, स् ऐसा उच्चारण होता है।
'ल' का मूर्धा स्थान में उच्चारण करने से 'ळ' बनता है।

इस प्रकार वर्णों की उत्पत्ति होती है। इस व्यवस्था से वर्णों के शुद्ध उच्चारण का भी पता लग सकता है।

ऊपर जहां जहां व्यंजन लिखे हैं वे सब 'क, ख, ग,' ऐसे अकारान्त लिखे हैं। इससे उच्चारण करने में सुगमता होती है। वास्तव में वे 'क्, ख्, ग्' ऐसे अकार रहित हैं इतनी बात पाठकों के ध्यान धरने योग्य है।

वर्णों के ऊपर बहुत विचार संस्कृत में किया हुआ है। उसमें से एक अंश भी यहां नहीं दिया। हम ने जो कुछ थोड़ासा दिया है उससे पाठकों के ध्यान में आजायगा कि संस्कृत की वर्ण व्यवस्था बहुत सोचकर बनायी हुई है। अन्य भाषाओं की तरह ऊट पटांग नहीं है।

संस्कृत में कोमल पदार्थों के नाम कोमल वर्णों में पाये जाते हैं। जैसाः—कमल, जल, अन्न इत्यादि।

कठोर पदार्थों के नाम में कठोर वर्ण पाये जांयगे। जैसाः—खर, प्रस्तर, गर्दभ, खड्ग इत्यादि।

कठोर प्रसंग के लिये जो शब्द होंगे उनमें भी कठोर वर्ण पाये जांयगे। जैसाः—युद्ध, विद्रावित, भ्रष्ट, शुष्क इत्यादि।

आनंद के प्रसंगों के लिये जो शब्द होंगे उनमें कोमल अक्षर पाये जांयगे। जैसाः—आनंद, ममता, सुमन, दया इत्यादि।

इस प्रकार बहुत लिखा जा सकता है। परन्तु विस्तार भय से यहां इतना ही पर्याप्त है। यह वर्णन यहां इसलिए लिखा है कि पाठकगण भी इस प्रकार सोचते रहेंगे, तो उनको आगे जाकर बड़ा लाभ होगा, तथा प्रसंग के अनुसार शब्दों को प्रयोग में लाकर संस्कृत के वाक्यों में वे विशेष गौरव ला सकेंगे। आशा है कि पाठक इसका विचार करेंगे।



संस्कृत का स्वयं शिक्षक

द्वितीय भाग

१—प्रथमः पाठः।

जिन पाठकों ने "संस्कृत स्वयं-शिक्षक" का प्रथम भाग अच्छी प्रकार पढ़ा है, और उसमें जो वाक्य तथा नियम दिये हुए हैं उनको ठीक ठीक याद किया है, तथा जिन्होंने प्रथम भाग के परीक्षा प्रश्नों का उत्तर ठीक ठीक दिया है अर्थात् जो परीक्षा में उत्तीर्ण हुए हैं, उनको ही द्वितीय भाग के अभ्यास से लाभ होगा। जो प्रथम भाग की पढ़ाई ठीक प्रकार न कर द्वितीय भाग को प्रारंभ करेंगे उनकी पढ़ाई आगे जाकर ठीक ठीक नहीं होगी, तथा वे लोग अपनी संस्कृत में उन्नति नहीं कर सकेंगे। इसलिए पाठकों से प्रार्थना है कि वे किसी अवस्था में भी शीघ्रता न करें, तथा पहिली पढ़ाई कच्ची रखकर आगे बढ़ने का यत्न न करें।

संस्कृत भाषा उन लोगों के लिये सुगम होगी जो "स्वयं शिक्षक" की शैली के साथ साथ अपनी पढ़ाई करगे। परन्तु जो शीघ्रता करेंगे और कच्ची भूमि पर मकान बनायंगे। उनको आगे बहुत मुश्किल में फंसना पड़ेगा। इसलिये पाठक लोगों को उचित है कि, वे प्रथम, द्वियीय, तथा तृतीय भागों में दिये हुए

किसी विषय को कच्चा न रक्खें. और बार बार उसको याद करके सब विषयों की जागृति सदैव रखने का यत्न करें।

जिन पाठकों ने "स्वयं शिक्षक" का प्रथम भाग पढ़ा होगा, उनके मन में इस शिक्षा प्रणाली की सुगमता विस्पष्ट होगयी होगी। इस दूसरे पुस्तक से पाठकों की योग्यता निःसंदेह बहुत बढ़ेगी। इस पुस्तक में ऐसी व्यवस्था की हुई है कि इसके पढ़ने से पाठक न केवल संस्कृत में अच्छी प्रकार बात चीत करने में समर्थ होंगे, परन्तु वे रामायण, महाभारत तथा नाटक आदि संस्कृत ग्रंथों के सुगम अध्यायों को स्वयं पढ़ सकेंगे। इस लिये प्रार्थना है कि पाठक हर एक पाठ के प्रत्येक नियम तथा वाक्य की ओर विशेष ध्यान दें।

प्रथम पुस्तक में शब्दों की सात विभक्तियों का उल्लेख किया हुआ है। परन्तु उस पुस्तक में केवल एक ही वचन के रूप दिये हैं। अब इस पुस्तक में तीनों वचनों के रूप दिये जाते हैं।

(१) नियम—संस्कृत में तीन वचन हैं (१) एक वचन, (२) द्विवचन, तथा (३) बहुवचन। हिंदी भाषा में केवल दो वचन हैं एक वचन, तथा अनेक वचन।

एक वचन से एक संख्या का बोध होता है जैसाः—**एकः आम्रः** (एक आम)

द्विवचन से दो संख्या का बोध होता है. जैसाः—**द्वौ आम्रौ** (दो आम)

बहुवचन से तीन या तीन से अधिक (अर्थात् दो से अधिक) संख्या का बोध होता है। जैसाः—त्रयः आम्राः (तीन आम) पंच आम्राः (पांच आम), दश आम्राः (दश आम)

हिंदी भाषा में दो संख्या बताने वाला कोई वचन नहीं। परन्तु संस्कृत में दो संख्या बताने वाला "द्विवचन" है। सर्वत्र संस्कृत में दो संख्या के लिये द्विवचन का ही उपयोग करना आवश्यक है यह बात पाठकों को अवश्य ध्यान में रखनी चाहिये। अब सातों विभक्तियों के तीनों वचनों में शब्दों के रूप नीचे देते हैं।

अकारान्त पुंल्लिंगी 'देव' शब्द के रूप।

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा (१)	देवः	देवौ÷	देवाः•
द्वितीया (२)	देवं	देवौ÷	देवान्
तृतीया (३)	देवेन	देवाभ्यां+	देवैः
चतुर्थी (४)	देवाय	देवाभ्यां+	देवेभ्यः*
पंचमी (५)	देवात्	देवाभ्यां+	देवेभ्यः*
षष्ठी (६)	देवस्य	देवयोः×	देवानाम्
सप्तमी (७)	देवे	देवयोः×	देवेषु
संबोधन (हे)	देव	(हे) देवौ÷	(हे) देवाः*

इस प्रकार सब अकारान्त पुंल्लिंगी शब्दों के रूप होते हैं। पाठकों ने ध्यान से देखा होगा कि भिन्न विभक्तियों के कई रूप एक जैसे होते हैं। इस शब्द में जो जो रूप एक जैसे हैं, उनके ऊपर चिन्ह किया है। "÷, +, ×, ●, ✻" ये चिन्ह हैं जो उक्त प्रकार के समान रूपों पर लगाये हैं अगर पाठक इन समान रूपों को ध्यान में रक्खेंगे तो कण्ठ करने का उनका परिश्रम बच जायगा। यह समान रूप ध्यान में आने के लिये "काल" शब्द के रूप नीचे दिये हैं और जो समान रूप हैं वहां कोई रूप दिया नहीं है।

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा (१)	कालः	कालौ	कालाः
संबोधन (हे)	काल	(हे) ,,	(हे) ,,
द्वितीया(२)	कालम्	,,	कालान्
तृतीया (३)	कालेन	कालाभ्यां	कालैः
चतुर्थी (४)	कालाय	,,	कालेभ्यः
पंचमी (५)	कालात्	,,	,,
षष्ठी (६)	कालस्य	कालयोः	कालानाम्
सप्तमी (७)	काले	,,	कालेषु

उक्त रूप देने के समय संबोधन के रूप सदृश होने के कारण प्रथमा विभक्ति के साथ दिये हुए हैं। इन रूपों को

देखने से पता लगेगा कि कौन सी विभक्तियों के कौन से रूप समान होते हैं।

अब पाठकों को उचित है, कि वे इन रूपों को ध्यान में रक्खें, या कण्ठ करें। क्योंकि इसी शब्द के समान सब अकारान्त पुंलिंगी शब्दों के रूप होंगे।

धनंजय, देवदत्त, यज्ञदत्त, नारायण, कृष्ण, नाग, भद्रसेन मृत्युंजय, इत्यादि अकारान्त पुंलिंगी शब्द ठीक उक्त प्रकार से चलते हैं। जिन अकारान्त पुलिंगी शब्दों के अंदर "र" अथवा "ष" वर्ण हुआ करता है, उन शब्दों की तृतीया विभक्ति का एकवचन तथा षष्ठि विभक्ति का बहुवचन करने में नकार का 'ण' बनाना पड़ता है। जैसाः—

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
१	रामः	रामौ	रामाः
२	रामं	,,	रामान्
३	रामेण	रामाभ्यां	रामैः
४	रामाय	,,	रामेभ्यः
५	रामात्	,,	,,
६	रामस्य	रामयोः	रामाणाम्
७	रामे	,,	रामेषु

संबोधन के रूप पूर्ववत् पाठक बना सकेंगे। इस शब्द में तृतीया का एकवचन "रामेण" तथा षष्ठी का बहुवचन "रामाणां" इन दो रूपों में नकार के स्थान पर णकार हुवा है, इसी प्रकार निम्नलिखित शब्दों के रूप होते हैं:—

पुरुष, नृप, नर, रामस्वरूप, सर्प, कर, रुद्र, इंद्र, व्याघ्र, गर्भ, इत्यादि अकारान्त पुंलिंगी शब्दों के रूप उक्त प्रकार से बनते हैं।

परन्तु कई ऐसे शब्द हैं कि जिनमें "र अथवा ष" आने पर भी नकार का णकार नहीं बनता। जैसा—

कृष्णेन । कृष्णानाम् ।

कर्दमेन । कर्दमानाम् ।

नर्तनेन । नर्तनानाम् ।

इस विषय में नियम ये हैं:—

(२) नियम—जिस शब्द में र अथवा ष हो, और उसके परे 'न' आजाय तो उस न का ण बनता है। जैसा:—

कृष्णा, तृष्णा, विष्णु, इत्यादि शब्दों में षकार के बाद नकार आने से नकार का णकार बन गया है।

सूचना—पदान्त के नकार का णकार नहीं बनता जैसा—रामान्, करान् इ०।

(३) नियम—"र अथवा ष" और "न" इनके बीच में, कोई स्वर, ह, य, व, र, कवर्ग, पवर्ग, अनुस्वार इन वर्णों में से एक अथवा अनेक वर्ण, आने पर भी नकार का णकार होता है। जैसाः—

रामेण, पुरुषेण, नरेण, इत्यादि शब्दों में इस नियमानुसार णकार बना है। इन दो नियमों को अधिक स्पष्ट करने के लिए उनको निम्न प्रकार लिखते हैं:—

"र" के पश्चाद् "न" आने से "न" का "ण" बनता है।

"ष" ,, "न" ,, "न" ,, ण ,, ।

"र" अथवा "ष"	बीचमें इतने वर्ण आने पर भी अ आ इ ई उ ऊ ऋ ऌ ए ऐ ओ औ अं ह य व र ं क ख ग घ ङ प फ ब भ म	"न" का ण बनता है।

र् +[आ+म+ए+]न्+अ=रामेन=रामेण । इस शब्द में र् और न् के मध्य में "आ+ म्+ए" ये तीन वर्ण आये हैं इस प्रकार अन्य शब्दों के विषय में जानना चाहिये।

क्+ऋ+ष्+[ण्]+ए+न्+अ=कृष्णेन। इस शब्द में षकार और नकार के बीच में ण् आने से नकार का णकार नहीं हुआ।

क्योंकि जो वर्ण बीच में होने पर भी णकार बनता है ऐसा ऊपर लिखा है, उन वर्णों में ण नहीं है। इसी कारण "मर्त्येन" शब्द में नकार का णकार नहीं होता है। देखिए:—

म्+र्+[त्]+य्+ए+न+अ=मर्त्येन। इनमें अनिष्ट तकार बीच में है और उसके होने से नकार का णकार नहीं बनता हैं।

पाठकों को उचित है कि वे इन नियमों को बार बार पढ़ कर अच्छी प्रकार समझ लेवें। ताकि आगे भ्रम न पड़े।

वाक्य

१ मृगः अरण्ये मृतः	हिरण बन में मर गया।
२ बालकेन क्रीडा त्यक्ता	बालक ने खेल छोड़ा।
३ मनुष्येण नगरं दृष्टम्	मनुष्य ने शहर देखा।
४ जनैः रामस्य चरित्रं श्रुतम्	लोगों ने राम का चरित्र सुना।
५ बालकैः दुग्धं पीतम्	बालकों ने दूध पिया।
६ सर्पेण मूषकः हतः	सांप ने चूहा मारा।
७ मनुष्यैः द्रव्यम् लब्धम्	मनुष्यों ने पैसा प्राप्त किया।
८ पुष्पैः शरीरं भूषितम्	फूलों से शरीर सजाया।
९ आचार्यैः पुस्तकं पाठितम्	अध्यापकों ने पुस्तक पढ़ाया।
१० वृक्षेभ्यः फलानि पतितानि	वृक्षों से फल गिरे हैं।
११ मया इष्टं फलं प्राप्तम्	मैंने इच्छित फल प्राप्त किय

१२ स ब्राह्मणेभ्यः दक्षिणां ददाति	वह ब्राह्मणों के लिये दक्षिणा देता है।
१३ विश्वामित्रः अयोध्यां आगतः	विश्वामित्र अयोध्या को आया।
१४ सूर्यः अस्तं गतः	सूर्य अस्त को प्राप्त हुआ।
१५ दुःखेन हृदयं भिन्नम्	दुःख से हृदय फूट गया।
१६ आकाशे चंद्रः उदितः	आकाश में चंद्र उदय हुआ।

इन वाक्यों में जो जो शब्द हैं, उनके अर्थ भाषा के वाक्यों से जाने जा सकते हैं, इसलिए उनके अलग अर्थ नहीं दिये।

२ द्वितीयः पाठः।

शब्द—पुल्लिंगी

मूषकः—चूहा	काकः—कौवा
शावकः—बच्चा, लड़का	नीवारकणः—धान का कण, सूजी का दाना
बिडालः—बिल्ली	कुक्कुरः—कुत्ता
मार्जारः "	व्याघ्रः—शेर
महर्षिः—बड़ा ऋषि	क्रोडः—गोद, छाती

नपुंसकलिंगी

तपोवनम्—तप करने का स्थान	स्वरूपम्—अपनी खूबसूरती
स्वरूपाख्यानम्—अपने रूप का आख्यान	आख्यानम्—कथा, चरित्र
	संनिधानं—समीप

विशेषण

भ्रष्ट—गिरा हुआ
दृष्ट—देखा हुआ
संवर्धित—फूला हुआ
सव्यथ—दुःख के साथ
अकीर्तिकर—बदनामि करने वाला
वार्धित—पाला, बढ़ाया हुआ
वार्धिता— ,, ,,
वार्धितम्—,, ,,

क्रियापद

धावति—दौड़ता है
पलायते—भागता है
पलायिष्यते—भागेगा
बिभेषि—डरता है (तू)
बिभेति—डरता है (वह)
बिभेमि—डरता हूं (मैं)
विवेश—घुस गया
वदन्ति—बोलते हैं
भव—हो, बन जा
प्रविवेश—घुस गया
आलोकयति—देखता है
आलोकयामि—,, हूं

धातुसाधित

खादितुं—खाने के लिये
हन्तुं—हनन करने के लिये
दृष्ट्वा—देखकर
आलोच्य—देखकर
अवलोक्य—देखकर
जीवितव्यम्—जीने योग्य, जीना चाहिये

स्त्रीलिंगी

कीर्तिः—यश, नाम	व्याघ्रता—शेरपन
अकीर्तिः—बदनामी	व्यथा—बीमारी, दुःख, कष्ट

इतर।

पश्चात्—पीछे से	इमं—यह
यावत्—जबतक	द्रुतं—सत्वर, जलदी
तावत्—तबतक	विलंबितं—देरी से

विशेषणोंका उपयोग और उनके लिंग !

दृष्टं तपोवनम्	वर्धितः वृक्षः
दृष्टा नगरी	वर्धिता लेखमाला
दृष्टः मनुष्यः	वर्धितं कमलम्

भ्रष्टः पुरुषः	अकीर्तिकरः उद्यमः
भ्रष्टा स्त्री	अकीर्तिकरा कथा
भ्रष्टं पात्रम्	अकीर्तिकरं आख्यानम्

पालितः पुत्रः	रक्षितः बालकः
पालिता पुत्रिका	रक्षिता पुष्पमाला
पालितं गृहं	रक्षितं जलम्

शुद्धः विचारः	पवित्रः मंत्रः
शुद्धा बुद्धिः	पवित्रा स्त्री
शुद्धं चरित्रम्	पवित्रं पात्रम्
गतः सूर्यः	आगतः जनः
गता रात्री	आगता अध्यापिका
गतं नक्षत्रम्	आगतं पुस्तकम्
प्राप्तः ग्रीष्मकालः	भक्षितः मोदकः
प्राप्ता यौवनदशा	भक्षिता वटिका
प्राप्तं वृद्धत्वम्	भक्षितं फलम्

पूर्वोक्त शब्दों में "मूषकः,शावकः,काकः,बिडालः, मार्जारः; कुक्कुरः, व्याघ्रः," इत्यादि अकारान्त पुलिंगी शब्द हैं और उनके रूप पूर्वोक्त देव, राम शब्दों के समान होते हैं। पाठकों को उचित है कि वे इन शब्दों के सब रूप लिख कर रक्खें, और उनका उक्त रूपों के साथ मिलान करके ठीक करें। "भ्रष्टः,दुष्टः,संवर्धितः, सव्यथः," इत्यादि शब्द भी अकारान्त पुलिंगी विशेषण होने से देव राम वत् ही चलते हैं। विशेषणों का स्वयं कोई लिंग नहीं होता, परन्तु वे विशेष्य के लिंग के अनुसार चलते हैं इत्यादि वर्णन "संस्कृत स्वयं शिक्षक" के प्रथम भाग के पाठ ३६ मे देख लेना।

वाक्य ।

संस्कृत	भाषा
(१) अस्ति गंगा-तीरे हरिद्वारं नाम नगरम् ।	है गंगा के किनारे पर हरिद्वार नामक शहर ।
(२) अस्ति महाराष्ट्रे मुंबापुरी नाम नगरी ।	है महाराष्ट्र में बंबई नामक शहर
(३) बिडालः मूषकं खादति ।	बिल्लाव चूहे को खाता है ।
(४) व्याघ्रः वृषभं खादितुं धावति ।	शेर बैल को खाने लिये के दौड़ताहै
(५) बिडालः कुक्कुरं दृष्ट्वा पलायते ।	बिल्ली कुत्ते को देख कर भागतीहै
(६) स पुरुषः व्याघ्रं दृष्ट्वा बिभेति पलायते च ।	वह पुरुष शेर को देख कर डरता और भागता है ।
(७) ऋषिणा मूषकः व्याघ्रतां नीतः ।	ऋषी ने चूहे का व्याघ्र बनाया
(८) मुनिना व्याघ्रः मूषकत्वं नीतः ।	मुनी ने व्याघ्र का चूहा बनाया।
(९) स मुनिः अचिंतयत् ।	वह मुनि सोचने लगा ।
(१०) स पुरुषः सव्यथःअचिंतयत्	वहपुरुष कष्टकेसाथ सोचने लगा

उक्त वाक्यों में, पाठकों के लिए कई बातें ध्यान में रखने योग्य है (१) संस्कृत में कथा के प्रारंभ में "अस्ति" आदि क्रिया के शब्द, वाक्य के प्रारंभ में आते हैं। जिनका भाषा में वाक्य के अंतमें अर्थ करना होता है। जैसा—

सस्कत में—'अस्ति' गौतमस्य तपोवने कपिलो नाम मुनिः।

भाषा में—— —— गौतम के आश्रम में कपिल नामक मुनि 'है' सस्कत में इस प्रकार की वाक्य रचना ललित-अच्छी- समझी जाती है।

४ नियम—किसी शब्द को 'त्व अथवा ता' ये शब्द जोड़ने से उसका भाव वाचक नाम बनता है। जैसाः-वृद्धः-बुड्ढा, वृद्धत्वं-बुड्ढापन। मूषकः—चूहा, मूषकता—चूहापन। पुरुषः—मनुष्य, पुरुषत्व—पुरुषपन। पशुः—पशु, हैवान, पशुत्व—पशुता—हैवानपन।

५ नियम—विशेषण का कोई अपना लिंग नहीं होता है परन्तु विशेष्य के लिंग के अनुसार ही विशेषणों के लिंग बनते हैं। जैसाः—

पुल्लिंगी	स्त्रीलिंगी	नपुंसकलिंगी
भ्रष्टः पुरुषः	भ्रष्टा स्त्री	भ्रष्टं पुष्पम्
दृष्टः पुत्रः	दृष्टा नगरी	दृष्टं पुस्तकम्
संवर्धितः हस्तः	संवर्धिता कीर्तिः	संवर्धितं ज्ञानम्
सव्यथः व्याघ्रः	सव्यथा नारी	सव्यथं मित्रम्

इसी प्रकार अन्यान्य विशेषणों के संबंध में भी जानना चाहिए (इस नियम के विषय में स्वयं शिक्षक भाग प्रथम का ३६ वां पाठ देखिए)।

अब हितोपदेश नामक ग्रंथ से एक कथा नीचे देते हैं। पूर्वोक्त शब्द और वाक्य जिन्हों ने कराठ किये होंगे, वे पाठक इस कथा को अच्छी प्रकार समझ सकते हैं। इसलिए पाठकों को उचित है, कि वे भाषा में दिया हुवा अर्थ न देखते हुए केवल संस्कृत पढ़कर ही अर्थ लगाने का यत्न करें। जब संपूर्ण कथा का अर्थ लग जाय तो संपूर्ण पाठ को कंठ करें और पश्चात् भाषा के वाक्य देख कर उसका संस्कृत बनाने का यत्न करें।

[१] मुनिमूषकयोः कथा

(१) अस्ति गौतमस्य महर्षेः तपोवने महातपा नाम मुनिः। तेन आश्रम-संनिधाने मुषिक-शावकः काकमुखाद् भ्रष्टो दृष्टः।

[१] ऋषि और चूहे की कथा

(१) गौतम महर्षि के तपोवन में महातपा नामक (एक) मुनि है। उसने आश्रम के पास चूहे का बच्चा कौवे के मुख से गिरा हुवा देखा।

(२) ततः स स्वभाव-दया-ऽऽत्मना तेन मुनिना नीवार-कणैः संवर्धितः। ततो बिडालः तं मूषिकं खादितुं धावति।

(३) तं अवलोक्य मूषिकः तस्य मुनेः क्रोडं प्रविवेश। ततो मुनिना उक्तम्। "मूषिक, त्वं मार्जारो भव"। ततः स मार्जारो जातः।

(४) पश्चात् स बिडालः कुक्कुरं दृष्ट्वा पलायते। ततो मुनिना उक्तम्। "कुक्कुराद् बिभेषि। त्वं एव कुक्कुरो भव"। तदा स कुक्कुरो जातः।

(५) स कुक्कुरो व्याघ्राद् बिभेति। ततः तेन मुनिना कुक्कुरो व्याघ्रः कृतः। अथ व्याघ्रं अपि तं मूषिक-निर्विशेषं पश्यति स मुनिः।

(२) पश्चाद् उस (बच्चे) को स्वभाविक दया भाव से उस मुनि ने धान के कणों से पाला। पश्चाद् बिल्ली उस चूहे को खाने के लिये दौड़ती (थी)

(३) उस (बिल्ली) को देखकर चूहा उस मुनी के गोद में घुस गया। बाद मुनि ने कहा "चूहे, तू बिल्ली बन"। उससे वह बिल्ली बना।

(४) पश्चाद् वह बिल्ली कुत्ते को देखकर भागती (है)। बाद मुनि ने कहा। "कुत्ते से (तू) डरती है। तू ही कुत्ता बन"। उस समय वह कुत्ता बन गया।

(५) वह कुत्ता शेर से डरता (था)। बाद उस मुनि ने कुत्ते (का) व्याघ्र (शेर) बनाया। अब उस व्याघ्र को भी चूहे के समान ही देखता है वह मुनि।

(६) अथ तं मुनिं दृष्ट्वा व्याघ्रं च सर्वे वदन्ति। "अनेन मुनिना मूषको व्याघ्रतां नीतः"।

(७) एतत् श्रुत्वा स व्याघ्रः सव्यथोऽचिंतयत । "यावद् अनेन मुनिना जीवितव्यं तावद् इमं मे स्वरूपाख्यानं अकीर्तिकरं न पलायिष्यते"। इति आलोच्य मुनिं हन्तुं गतः ।

(८) ततो मुनिना तत् ज्ञात्वा "पुनर्मूषिको भव" इत्युक्त्वा मूषिक एव कृतः ।

हितोपदेशः

(६) पश्चाद् उस मुनि को और (उस) शेर को देखकर सब बोलते हैं। "इस मुनि ने चूहे का (यह) शेर बनाया" ।

(७) यह सुनकर वह शेर कष्ट से सोचने लगा । "जब तक इस मुनि ने जिंदा रहना (है) तब तक यह मेरी रूप (बदलने) की कथा (मेरी) हतक करने वाली नहीं जायगी" । ऐसा देखकर वह (शेर) मुनि को मारने के लिये गया ।

(८) पश्चाद् मुनि ने वह जान कर "फिर चूहा बन" ऐसा बोलकर (फिर) चूहा ही बना दिया ।

हितोपदेश से उद्धृत

उक्त कथा में आये हुए कुछ समासों का वर्णन :—

(१) आश्रमसंनिधानम्—आश्रमस्य संनिधानम् । आश्रमस्य समीपं इत्यर्थः ।

(२) मुषकशावकः—मुषकस्य शावकः ।

(३) काकमुखम्—काकस्य मुखम् । काकस्य तुण्डम् ।

(४) नीवारकणाः—नीवाराणां कणाः । नीवाराणां धान्यविशेषाणां कणाः अंशाः ।

(५) व्याघ्रता—व्याघ्रस्य भावः व्याघ्रता । व्याघ्रत्वं इत्यर्थः ।

(६) मूषकत्वम्—मूषकस्य भावः मूषकत्वम् ।

(७) सव्यथः—व्यथया सहितः सव्यथः । दुःखेन युक्त इत्यर्थः ।

(८) स्वरूपाख्यानम्—स्वस्य रूपं स्वरूपम् । स्वरूपस्य आख्यानं स्वरूपाख्यानम् । स्वरूपकथा इत्यर्थः

---

३ तृतीयः पाठः ।

प्रथम पाठ में अकारान्त पुंलिंगी शब्दों के रूप बताये हैं। संस्कृत में आकारान्त पुलिंगी शब्द बहुत ही थोड़े हैं, तथा उनके रूप भी बहुत प्रसिद्ध नहीं हैं, इसलिये उनका चलाने का प्रकार यहां नहीं दिया जाता। प्रायः पाठकों के देखने में आयगा कि, आकारान्त शब्द स्त्रीलिंगी होते हैं। और अकारान्त शब्द स्त्रीलिंग नहीं हुआ करते। किस शब्द का कौनसा अन्त है यह ध्यान में आने के लिये कई शब्द नीचे दिये हैं, उनकी ओर ठीक ध्यान देने से अन्त वर्ण का ठीक ठीक बोध हो जायगाः—

(१) अकारान्त,—देव, रामकृष्ण, धनंजय, ज्ञान, आनंद इ०

(२) आकारान्त—रमा, विद्या, गंगा, कृपा, अंबा, अक्का इ०

(३) इकारान्त—हरि, भूपति, अग्नि, रवि, कवि, पति इ०

(४) ईकारान्त—लक्ष्मी, तरी, तंत्री, नदी, स्त्री, वाणी इ०

(५) उकारान्त—भानु, विष्णु, वायु, शंभु, सूनु, जिष्णु इ०

(६) ऊकारन्त—चमू, वधू, श्वश्रू, यवागू, चम्पू, जम्बू इ०

(७) ऋकारान्त—दातृ, कर्तृ, भोक्तृ, गंतृ, पातृ, वक्तृ इ०

(८) ऐकारान्त—रै (धन)

(९) ओकारान्त—द्यो, गो,

(१०) ककारान्त—वाक्, सर्वशक्

(११) तकारान्त—सरित, भूभृत्, हरित्

(१२) दकारान्त—शरद्, तमोनुद्, बेभिद्

(१३) सकारान्त—चंद्रमस्, तस्थिवस्, मीढुस्, मनस् इ०

(१४) नकारान्त—युवन्, श्वन्

इत्यादि शब्द देखने से पाठक जान सकेंगे कि किस शब्द के अंत में कौनसा वर्ण है।

अब इकारान्त पुंलिंगी "हरि" शब्द के रूप देखिए:—

	एकवचन	द्विचन	बहुवचन
(१)	हरिः	हरी	हरयः
सं०	(हे) हरे	(हे),,	(हे) ,,
(२)	हरिम्	,,	हरीन्
(३)	हरिणा	हरिभ्यां	हरिभिः
(४)	हरये	,,	हरिभ्यः
(५)	हरेः	,,	,,
(६)	,,	हर्योः	हरीणाम्
(७)	हरौ	,,	हरिषु

इसी प्रकार भूपति, अग्नि, रवि, कवि इत्यादि शब्दों के रूप बनते हैं। प्रथम पाठ में दिये हुए नियम ३ के अनुसार "हरि,रवि' आदि शब्दों के रूपों में नकार का णकार होता है। (पृ० ३१)

प्रथम पाठ के नियम १ में कहा है कि एकवचन एक संख्या का बोधक, द्विवचन दो संख्या का बोधक, तथा बहुवचन तीन अथवा तीन से अधिक संख्या का बोधक होता है। जैसाः—

(१) एकवचन—रामस्य चरित्रम्=(एक) राम का (एक) चरित्र।

(२) द्विवचन—मुनिमूषकयोः कथा=मुनि और मूषक (इन दोनों) की कथा।

रामस्य बांधवौ=(एक) राम के (दो) भाई

(३) बहुवचन—श्रीकृष्णभीमार्जुनाः जरासंधस्य गृहं गताः= श्रीकृष्ण, भीम तथा अर्जुन (ये तीनों) (एक) जरासंध के (एक) घर को गये।

कुमारेण आम्राः अनीताः=(एक) लड़का (दो से अधिक) आम लाया।

इस प्रकार वचनों द्वारा संस्कृत में संख्या का बोध होता है। हिंदी भाषा में दो संख्या का बोध करने के लिये कोई खास वचन का चिन्ह नहीं है। संस्कृत की विशेषता और पूर्णता इसी व्यवस्था द्वारा प्रतीत होती है। अब हर एक विभक्ति के तीनों वचनों का उपयोग किस प्रकार किया जाता है यह बताने के लिये कुछ वाक्य नीचे देते हैं:—

(१) प्रथमा विभक्ति ।

वाक्य में प्रथमा विभक्ति कर्ता का स्थान बताती है। (कर्ता वह होता है कि जो क्रिया करता है)

(१) **रामः** राज्यं अकरोत्=राम राज्य करता था।

(२) **रामलक्ष्मणौ** वनं गच्छतः=राम लक्ष्मण (ये दो) बन को जाते हैं।

(३) **पांडवाः** श्रीकृष्णस्य उपदेशं शृण्वन्ति=(तीन अथवा तीनसे अधिक)पांडव श्रीकृष्णका उपदेश सुनते हैं।

इन तीन वाक्यों में क्रम से "रामः, रामलक्ष्मणौ, पांडवाः" ये शब्द एक-द्वि-बहुवचन के हैं। उस उस वाक्य में जो जो क्रिया आयी है उस उस क्रिया के ये कर्ता हैं।

(२) द्वितीया विभक्ति ।

वाक्य में जो कर्म होता है वह द्वितीया विभक्ति में होता है। (क्रिया जिस कार्य को बताती है वह कर्म है)

(१) दशरथः **राज्यं** करोति=दशरथ राज्य करता है।

(२) कृष्णः **कर्णौ** पिधाय तिष्ठति=कृष्ण (दोनों) कान बंद करके खड़ा है।

(३) देवदत्तः **ग्रंथान्** पठति=देवदत्त (तीन या तीन से अधिक) ग्रंथों को पढ़ता है।

इन तीन वाक्यों में "राज्यं, कर्णौ, ग्रन्थान्" ये तीनों शब्द द्वितीया विभक्ति के हैं और वे उस उस वाक्य के क्रिया के कर्म हैं। क्रिया का करने वाला उस क्रिया का कर्ता होता है और जो कार्य किया जाता है वह उस क्रिया का कर्म होता है अर्थात "दशरथः राज्यं करोति" इस वाक्य में "दशरथ" यह कर्ता, "राज्यं" यह कर्म, तथा "करोति" यह क्रिया है। इसी प्रकार अन्यान्य वाक्यों में जानना चाहिए।

(३) तृतीया विभक्ति।

क्रिया का जो साधन होता है उसकी तृतीया विभक्ति होती है। उसको संस्कृत में 'करण' बोलते हैं।

(१) कृष्णवर्मा **खड्गेन** व्याघ्रं अहनत्। =कृष्णवर्मा (ने) तलवार से शेर को मारा।

(२) स **नेत्राभ्यां** सूर्यं पश्यति। =वह (दोनों) आंखों से सूर्य को देखता है।

(३) अर्जुनः **बाणैः** युद्धं करोति। =अर्जुन (दो से अधिक) बाणों के साथ युद्ध करता है।

इन तीन वाक्यों में "खड्गेन, नेत्राभ्यां, बाणैः" ये तीन शब्द तृतीया विभक्ति के हैं। और यह उस उस क्रिया के साधन है। अर्थात् हनन करने का खड्ग साधन, देखने का नेत्र साधन और युद्ध करने का बाण साधन है।

(४) चतुर्थी विभक्ति

क्रिया जिस के लिये की जाती है, उसकी चतुर्थी विभक्ति होती है। जिसको संस्कृत में 'संप्रदान' कहते है।

१) राजा **ब्राह्मणाय** धनं ददाति=राजा ब्राह्मण के लिये धन देता है।

(२) स **पुत्राभ्यां** मोदकौ ददादि=वह (दो) पुत्रों को (दो) लड्डू देता है।

(३) कृपणः **याचकेभ्यः** द्रव्यं नेव ददाति=कृपण(दो से अधिक) मांगने वालों को द्रव्य नहीं देता।

इन तीन वाक्यों में "ब्राह्मणाय, पुत्राभ्यां, याचकेभ्यः" ये तीन शब्द चतुर्थी विभक्ति में हैं और वे बता रहे हैं कि तीनों वाक्यों में जो दान क्रिया है वह किन के लिये है।

(५) पंचमी विभक्ति

वाक्य में पंचमी विभक्ति अपादान अर्थात् "से" अर्थ में आती है। अपादान का अर्थ 'छोड़ना, अलग होना' इत्यादि है।

(१) स **नगरात्** ग्रामं गच्छति=वह **नगर से** गांव को जाता है।

(२) रामः **वसिष्ठवामदेवाभ्यां** प्रसादं इच्छति=राम वसिष्ठ वामदेव (इन दोनों) से प्रसाद चाहता है।

(३) मधुमक्षिका **पुष्पेभ्यः** मधु गृह्णाति=शहद की मक्खी (दो से अधिक) फूलों से शहद लेती है।

इन तीनों वाक्यों में "नगरात्, वसिष्ठवामदेवाभ्यां, पुष्पेभ्यः" ये शब्द पंचम्यन्त हैं। और यह विभक्ति किस से किस का अपादान (छुटकारा) है यह बात बताती हैं।

(६) षष्ठी विभक्ति

वाक्य में षष्ठी विभक्ति 'संबंध' अर्थ में आती हैं।

(१) तद् **रामस्य** पुस्तकं अस्ति। =वह राम का पुस्तक है।

(२) **रामरावणयोः** सुमहान् संग्रामः जातः। =राम रावण (इन दोनों) का बड़ा भारी युद्ध हुआ।

(३) **नगराणां** अधिपतिः राजा भवति। =शहरों का स्वामी राजा होता है।

इन तीनों वाक्यों में षष्ठ्यन्त शब्दों से पता लगता है कि "पुस्तक, संग्राम, अधिपति" इनका किनके साथ मुख्य संबंध (अर्थात् अधिकार अथवा स्वामि संबंध) है।

(७) सप्तमी विभक्ति

वाक्य में सप्तमी विभक्ति 'अधिकरण, स्थान, अर्थ में आती है।

(१) **नगरे** बहवः पुरुषाः सन्ति। =शहर में बहुत पुरुष हैं।

(२) तेन **कर्णयोः** अलंकारौ धृतौ। =उसने (दो) कानों में (दो) भूषण-जेवर-धारण किये।

(३) **पुस्तकेषु** आलेख्यानि सन्ति। =(दो से अधिक) पुस्तकों के अंदर (दो से अधिक) तसवीरें हैं।

इन वाक्यों में तीनों सप्तम्यन्त शब्द 'स्थान (अधिकरण)' अर्थ बताते हैं। अर्थात् पुरुषों का नगर स्थान है, अलंकारों का कान तथा आलेख्यों का पुस्तक स्थान है।

संबोधन विभक्ति

पुकारने के समय में संबोधन का प्रयोग होता है।

(१) हे **धनंजय,** अत्र आगच्छ। =हे धनंजय, यहां आ।

(२) हे **पुत्रौ,** तत्र गच्छतम्। =हे (दोनों) लड़को, वहां जाओ।

(३) हे **मनुष्याः,** शृणुत। =हे (दो से अधिक) मनुष्यो, सुनो।

इस प्रकार सब विभक्तियों के अर्थ तथा उपयोग हैं। पाठकों को उचित है कि वे वारंवार इनका विचार करके इन विभक्तियों के अर्थों को ठीक ठीक ध्यान में रखें और कभी भूल न जांय, क्योंकि इसका आगे बहुत संबंध है। उक्त विवरण ठीक ध्यान में आने के लिये उसका सारांश नीचे देते हैं:—

विभक्ति	अर्थ		भाषा में प्रत्यय
(१) प्रथमा	कर्ता	क्रिया का करने वाला	ने
(२) द्वितीया	कर्म	जो किया जाता है	को
(३) तृतीया	करण	जो क्रिया का साधन है	ने, से, द्वार
(४) चतुर्थी	संप्रदान	जिसके लिये किया हो	के लिये

(५) पंचमी——अपादान——जिससे वियोग होता है......से

(६) षष्ठी——संबंध——एक का दूसरे के ऊपर अधिकार...का

(७) सप्तमी——अधिकरण——स्थान, आश्रय............में

(८) संबोधन——आह्वान——पुकारना..................हे......

इन विभक्तियों के अर्थ तथा उपयोग पाठकों को ध्यान में रखने चाहिए। संस्कृत वाक्य बनाना तथा प्राचीन पुस्तकों का अर्थ लगाना इन्हीं के द्वारा होता है। जब उक्त बातें ठीक स्मरण हो जायगीं तो पश्चात् निम्न लिखित शब्द कण्ठ कीजिये॥

४ चतुर्थः पाठः।

क्रिया

प्रतिभाषेत=उत्तर देगा	आदिशत्=आज्ञा की
पृच्छेयम्=पूछूंगा	प्रक्षिपति=फेंकता है
प्रतिवदेत्=उत्तर देगा	निष्कास्यतां=निकाल दे
सेवसे=(तू) सेवन करता है	परित्यज=फेंक
सेवते=(वह) सेवन करता है	प्रतिगदेत्=जवाब देगा
सेवे=सेवन करता हूं	प्रत्यवदत्=उत्तर दिया
संभाष्य=बोलकर	प्रत्यब्रवीत्= ,,
आपृच्छ्य=पूछकर	अवदत्=बोला

शब्द—पुल्लिंगी

भगवन्—ईश्वर	ज्वरः—बुखार
भगवतः—ईश्वर का	आवेगः—जोर
व्रजन्—चलने वाला	ज्वरावेगः—बुखार का जोर
पथिन्—मार्ग	चिकित्सकः—वैद्य
पथि—मार्ग में	वयस्यः—मित्र
अर्भकः—लड़का	यमः—मृत्यु, यम
चरणः—पांव	क्षारः—नमक
देवः—ईश्वर	चंद्रः—चांद
नृपः—राजा	अर्धचंद्रः—गला पकड़ कर निकालना या धक्का देना
प्रसादः—दया	मंदधी—मंद बुद्धि
पुरुषः—मनुष्य	परिजनः—नौकर
इच्छन्—इच्छा करने वाला	

स्त्रीलिंगी

गलहस्तिका—गला पकड़ना	मृत्तिका—मट्टी

नपुंसकलिंगी

प्रतिवचनं—उत्तर, जवाब	प्रतिवचः—जवाब, उत्तर
व्रतं—व्रण	अरण्यं—वन

विशेषण

विदग्ध—ज्ञानी, विद्वान पका हुवा

अविदग्ध—अज्ञानी

प्रस्थित—प्रवास के लिये चला मुसाफिर होगय

रुग्ण—बीमार

सह्य—सहने योग्य

समर्थ—शक्तिमान

दुःसह—सहन करने के लिये कठिन

निःसारित—निकाला हुआ

बधिर—बहिरा, न सुनने वाला

आर्त—रोगी, पीड़ित

ज्वरार्त—ज्वर से पीड़ित

पृष्ट—पूछा हुवा

भद्र—हितकारक

भद्रतर—दोनों में अधिक अच्छा

भद्रतम—सबसे अधिक अच्छा

प्रतिकूल—विरोधी

अनुकूल—मुआफिक

अन्य

इति—ऐसा

बहिः—बाहर

संनिकाश—पास

तथैव—वैसा ही

सकोपं—घुस्से से

सादरं—नम्रता के साथ

तदनु—उसके पश्चाद्

तदनुरूपं—उसके अनुकूल

उक्त शब्द कंठ करने के पश्चाद निम्न वाक्य स्मरण कीजिये।

वाक्य

संस्कृत	भाषा
(१) कश्चित् पुरुषः स्वमित्रं द्रष्टुं इच्छति ।	कोई पुरुष अपने मित्र को देखना चाहता है ।
(२) मित्रस्य संनिकाशं गत्वा स किं पृच्छति ।	मित्र के पास जाकर वह क्या पूछता है ।
(३) स मित्रसंनिकाशं गत्वा, अनुकूलं संभाष्य, पश्चात् तं आपृच्छ्य, गृहं आगमिष्यति ।	वह मित्र के पास जाकर, अनुकूल भाषण करके, बाद उससे पूछकर, घर लौट आवेगा।
(४) स किं प्रतिवदति ।	वह क्या उत्तर देता है ।
(५) एवं स प्रतिकूल वचनं श्रुत्वा कुपितः ।	इस प्रकार विरुद्ध भाषण सुन कर वह गुस्सा होगया ।
(६) स किं क्षते क्षारं प्रक्षिपति ।	वह क्यों व्रण (घाव) में लूण डालता है ।
(७) तेन चौरः गलहस्तिकया गृहाद् बहिः निःसारितः।	उसने चोर का गला पकड़ कर घर से बाहर निकाल दिया।
(८) स रुग्णः सकोपं उच्चैः अवदत् ।	वह रोगी गुस्से से बड़े आवाज से बोला ।

[२] अविदग्धस्य बधिरस्य कथा ।

(१) कोऽपि बाधिरः स्वमित्रं ज्वरार्तं श्रुत्वा, तं द्रष्टुमिच्छन्, गृहात् प्रस्थितः । पथि व्रजन् एवं अचिंतयत् ।

(२) मित्र संनिकाशं गत्वा, "अपि सह्यो ज्वरावेग," इति पृच्छेयम् । "किंचिद् इव सह्य" इति स प्रतिवदेत् ।

(३) ततः "किं औषधं सेवसे" इति पृच्छेयम् । "इदं औषधं सेवे इति स प्रतिभाषेत। अनंतरं "कस्ते चिकित्सक" इति मया पृष्टे "ऽसौ मम चिकित्सक" इति स प्रतिगदेत्।

(४) अथ तत्तदनुरूपं संभाष्य, मित्रं आपृच्छय, गृहं आगमिष्यामि ।

[२] अज्ञानी बहिरे की कथा ।

(१) कोई एक 'बधिर अपना मित्र ज्वर से पीड़ित (है ऐसा) सुनकर, उसको देखने की इच्छा करता हुवा, घर से चला । मार्ग में जाता हुवा ऐसा सोचने लगा ।

(२) मित्र के पास जाकर, "क्या सहन करने योग्य बुखार का जोर" (है), ऐसा पूछूंगा । "थोड़ासा सहन करने योग्य" ऐसा वह उत्तर देगा ।

(३) पश्चाद "क्या दवा लेते हो" ऐसा पूछूंगा । "यह दवा लेता हूं" ऐसा वह उत्तर देगा। पश्चाद "कौन तुम्हारा वैद्य" ऐसे मेरे पूछने पर "यह मेरा वैद्य" ऐसा वह उत्तर देगा ।

(४) नंतर इस प्रकार अनुकूल बोलकर, मित्र को पूछकर, घर आऊंगा ।

(५) एवं चिन्तयन् मित्रं प्राप्य, सादरं अपृच्छत् । "वयस्य, अपि सह्यो ज्वरवेग" इति । "तथैव वर्तते न विशेषः" इति स प्रत्यवदत ।

(५) इस प्रकार विचार करता हुवा मित्र (के पास) पहुंचकर, आदर के साथ बोला । "मित्र, क्या सहन करने योग्य बुखार का जोर (है)" (ऐसा)। "वैसा ही है कोई नहीं फरक" ऐसा वह बोला ।

(६) "भगवतः प्रसादेन तथैव वर्तताम् । कीदृशं औषधं सेवसे" इति । ज्वरार्तः प्रत्यब्रवीत् ।"मम औषधं मृत्तिका एव" इति ।

(६) परमेश्वर की कृपा से वैसा ही रहे । कौनसा औषध लेते हो" ऐसा (पूछने पर) रोगी बोला । "मेरी दवा मट्टी ही (है)" ऐसा ।

(७) वयस्यः प्राह । "तदेव भद्रतरं । कस्ते चिकित्सक" इति ।

(७) मित्र बोला ।"वही अधिक हितकारी (है)। कौनसा तेरा वैद्य" ऐसा ।

(८) रुग्णः सकोपं अब्रवीत्। "मम भिषग् यम एव" इति।

(८) रोगी क्रोध से बोला"मेरा वैद्य यम ही (है)" ऐसा ।

(९) बधिरः प्रोवाच।"स एव समर्थः तं मा परित्यज" इति।

(९) बधिर बोला । "वही शक्तिमान् (है) उसको न छोड़" (ऐसा) ।

(१०) एवं प्रतिकूलं प्रति-वचनं श्रुत्वा स रोगी दुःसहेन कोपेन समाविष्टः परिजनं आदिशत् ।

(१०) इस प्रकार विरुद्ध भाषण सुन कर उस रोगी ने असह्य क्रोध से युक्त होकर नौकर को आज्ञा की ।

(११) भोः किं अय एवं क्षते क्षारं प्रक्षिपति। निष्कास्यतां अय अर्धचन्द्रदानन इति। अथ स बाधिरो मंदधीः परि-जनेन गलहस्तिकया बहिः निःसारितः ॥

(११) अरे क्यों यह इस प्रकार व्रणमें लूण डालता है । निकाल दे इसको गला पकड़ कर (ऐसा)। पश्चाद् उस मूर्ख बधिर को नोंकरों ने गला पकड़ कर बाहर निकाला ।

कथा कुसुमांजलिः

[सूचना—भाषा में "इति" का सब स्थान पर भाषान्तर नहीं होता है। तथा संस्कृत के मुहाविरे भी भाषा के मुहाविरों से भिन्न हैं। यहां संस्कृत की शब्द रचना के अनुकूल ही भाषा की वाक्य रचना रक्खी है। इस कारण भाषा का भाषान्तर जैसा चाहिये वैसा नहीं होगा। पाठक यह बात ध्यान रख कर भाषा का भाव ध्यान में लावें]।

समास–विवरणम् ।

(१) स्वमित्रम्—स्वस्य मित्रं स्वमित्रम् । स्ववयस्यः ।

(२) ज्वरार्तः—ज्वरेण आर्तः पीडितः । ज्वरपीडितः ।

(३) ज्वरावेगः—ज्वरस्य आवेगः ज्वरावेगः ।

(४) सादरम्—आदरेण सहितम । आदरयुक्तम ।

(५) सकोपम—कोपेन सहितं सकोपम् । सक्रोधम् इत्यर्थः।

(६) मंदधी—मंदा धीः यस्य सः मदधीः । मंदबुद्धि इत्यर्थः।

५ पञ्चमः पाठः ।

पूर्व पाठों में अकारान्त तथा इकारान्त पुंल्लिंगी शब्दों के रूप दिये हैं । दीर्घ ईकारान्त शब्द संस्कृत में हैं, परन्तु उनके प्रयोग बहुत प्रयुक्त नहीं होते, इसलिये उनको छोड़कर यहां उकारान्त पुंल्लिंगी शब्द के रूप देते हैं ।

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
(१)	भानुः	भानू	भानवः
संबो०	हे भानो	हे ,,	हे ,,
(२)	भानुं	,,	भानून्
(३)	भानुना	भानुभ्यां	भानुभिः
(४)	भानवे	,,	भानुभ्यः
(५)	भानोः	,,	,,
(६)	,,	भान्वोः	भानूनाम्
(७)	भानौ	,,	भानुषु

इसी प्रकार सूनु, शम्भु, विष्णु, वायु, इन्दु, विधु इत्यादि उकारान्त पुंल्लिंगी शब्दों के रूप जानने चाहिए। पाठकों को उचित है, कि वे इन शब्दों के रूप सब विभक्तियों में बनाकर कागज पर लिखें, तथा पूर्वोक्त तृतीय* पाठ में दिये हुवे प्रकार से हर एक रूप को वाक्य में प्रयुक्त करने का यत्न करें। इस प्रकार बनाये हुए वाक्य कागज पर लिखने चाहिए। अगर दो विद्यार्थी साथ पढ़ते हों, तो एक दूसरे को शब्दों के रूप सब विभक्तियों में परस्पर पूछकर, हर एक रूप का उपयोग भी परस्पर पूछना चाहिए। जिससे सब विभक्तियों के रूपों की उपस्थिति ठीक ठीक हो जायगी तथा उनका उपयोग कैसा करना चाहिए इसका भी ज्ञान हो जायगा। परन्तु जहां पढ़ने वाला अकेला ही हो, वहां सब रूप तथा वाक्य, जो जो नये बनाये हों, वे सब कागज पर लिखने चाहिए। और उनको बार बार पढ़कर सब को स्मरण करना चाहिए।

संस्कृत में जहां जहां दो स्वर अथवा दो व्यंजन पास पास आजाते हैं वहां वे खास रीति से मिल जाते हैं। हमने "स्वयं शिक्षक" के प्रथम भाग में तथा इस द्वितीय भाग में भी जहां तक हो सका वहां तक इस प्रकार के संधि नहीं दिये हैं। तथापि पाठक देखेंगे कि प्रथम भाग की अपेक्षा इस द्वितीय भाग में इस प्रकार के संधि अधिक दिये हैं।

---

* पृष्ठ ४४ से ४६ तक देखिये

ये संधि किस स्थान पर करने तथा किस स्थान पर न करने, इस विषय में निम्न लिखित नियम हैं।

(६) नियम—एक शब्द के अंदर जोड़ (संधि) अवश्य होने चाहिये। जैसा—रामेषु, देवेषु, रामेण इ०

सप्तमी के बहुवचन का प्रत्यय 'सु' है। परन्तु इसके पीछे 'ष' होने से 'सु' का 'षु' बनता है। एक पद (शब्द) में होने से यह संधि आवश्यक है। तथा नियम ३ के अनुसार 'रामेण' में नकार का णकार करना अवश्य है क्योंकि यह एक पद है।(पृ०३१)

(७) नियम—धातु का उपसर्ग के साथ जहां संबंध होता है वहां संधि करना आवश्यक है। (केवल वेदों में धातुओं से उनका उपसर्ग अलग रहता है, इस कारण वहां यह नियम नहीं लगता)। उत्+गच्छति=उद्गच्छति। निः+बध्यते=निर्बध्यते।

(८) नियम—समास में संधि अवश्य करनी चाहिये। जैसा। जगत्+जननी=जगज्जननी। तत्+रूपं=तद्रूपम्।

(९) नियम—पद्यों में बहुतांश में संधि करना आवश्यक है।

(१०) नियम—बोलने के समय बोलने वाला मनुष्य चाहे संधि करे अथवा न करे। अर्थात् जो बोलने वाला हो उसकी इच्छा पर यह निर्भर है। जहां बोलने वाले को सुभीता हो, वहां वह संधि करे, जहां न हो, न करे। अथवा जहां संधि करके

बोलने वाला सुनने वाले को अर्थ का परिचय सुगमता से करा सके, वहां संधि करना, अन्यत्र न करना।

इस १०वें नियम के अनुसार स्वयं शिक्षक के प्रथम द्वितीय भाग में बहुत स्थानों पर संधि नहीं किये है। जहां आवश्यक प्रतीत हुआ वहां किये हैं। 'स्वयं शिक्षक' का उद्देश संस्कृत भाषा में विद्यार्थियों का सुगमता से प्रवेश कराना है। इस उद्देश की पूर्ति के लिये प्रथम अवस्था में संधि न करना अत्यंत आवश्यक है। अगर प्रथमारंभ में सब संधि करके वाक्य का एक सूत्र बनाया जाय तो पाठक घबरा जांयगे। तथा उनकी बुद्धि में संस्कृत का प्रवेश नहीं होगा।

इस समय तक जो जो संस्कृत की पुस्तकें बनीं हैं उनमें सब स्थानों पर संधि किये हुवे रहने से पाठक उनको स्वयं नहीं पढ़ सकते, न उनसे स्वयं लाभ उठा सकते हैं। संधियों का पत्थर तोड़ कर संस्कृत मंदिर में शीघ्र प्रवेश कराने का कार्य इन स्वयं शिक्षा के पुस्तकों का है। पाठक भी इस बात को स्वीकार करेंगे कि उनका प्रवेश संस्कृत मंदिर में इन पुस्तकों द्वारा सुगमता से होरहा है।

अब हमने जो ऊपर १०वां नियम दिया हुवा है उसका परिज्ञान ठीक होने के लिये एक उदाहरण देते हैं।

(१) ततस्तमुपकारकमाचार्यमालोक्येश्वरभावनयाह।

यह वाक्य सब संधि करके लिखा है। इसमें बड़े संधि प्रायः कोई नहीं है। तथापि सब जोड़ कर लिखने से पाठक इस

को वैसा नहीं जान सकते जैसा निम्न प्रकार से लिखित जान सकते हैं:—

(२)ततः तं उपकारकं आचार्यं आलोक्य ईश्वरभावनया आह।

(पश्चात् उस उपकार करने वाले आचार्य को देखकर ईश्वर की भावना से (अर्थात् आदर भाव से) कहा।

उक्त दोनों वाक्य एक ही हैं परन्तु प्रथम वाक्य कठिन है और दूसरा आसान है। इसका कारण, द्वितीय वाक्य में कोई संधि नहीं किया। बोलने वाला इसी प्रकार अपने मर्जी के अनुसार संधि करेगा अथवा नहीं भी करेगा।

कई समझते हैं कि, संस्कृत में सब जोड़ अवश्य करने चाहिए। परन्तु यह उनकी भूल है। वाक्य बोलने वाला स्वकीय इच्छा से जहां चाहिए वहां संधि करेगा, जहां न चाहिए वहां जैसे के वैसे शब्द रहने देगा। यह बात सब संधियों के विषय में जाननी चाहिये। इसी कारण हमने बहुत थोड़े स्थानों पर संधि किये हैं। इस पुस्तक में मुख्य मुख्य संधियों के नियम अवश्य दिये जांयगे। पाठकों को उचित है, कि वे इन नियमों को अच्छी प्रकार समझ कर, जहां जहां संधि करने की आवश्यकता हो वहां वहां नियमानुसार संधि किया करें।

कई लोक समझते हैं कि ये संधि केवल संस्कृत में ही है। परन्तु यह उनकी भूल है। फ्रेंच जर्मन आदि भाषाओं में भी ये संधि हैं। इंग्लिश में भी ये संधि हैं, देखिये:—

(१) It is—इट् इज़—यह वाक्य "इटीज़" ऐसा ही बोला जाता है।

(२) It is arranged out of court.

इट् इज़ अरेंज्ड आउट ऑफ् कोर्ट

यह वाक्य निम्न लिखित प्रकार बोला जाता है:—

इ—टी—झारेंझ्डाउटाफ् कोर्ट

इस प्रकार इंग्लिश में सहस्त्रों स्थानों पर बोलने वाले के इच्छानुरूप संधि होते हैं। परन्तु अंग्रजी के व्याकरण में इनके विषय में कोई नियम नहीं दिया है। केवल इसी कारण लोक समझते है कि आंग्रजी में कोई सन्धि नहीं होता।

ठीक इसी प्रकार हिंदी भाषा में भी स्थान स्थान पर सन्धि होते हैं, देखिये:—

आप कब घर में जाते हैं।

यह वाक्य निम्नलिखित प्रकार बोला जाता है:—

आप्कब्घर्में जाते हैं।

अर्थात् बोलने वाला "आप, कब, घर" इन तीनों शब्दों के अन्त के अकारका लोप करके बोलता है। परन्तु भाषाके व्याकरणों में इस विषय में कोई नियम दिया नहीं। संस्कृत का व्याकरण ऋषि लोकों ने अपनी सूक्ष्म बुद्धि से बनाया है, इस कारण उसमें सब नियम यथायोग्य दिये हैं। अस्तु। इस से यह सिद्ध हुवा

कि सब भाषाओं में सन्धि है । सन्धि करना या न करना …का के तथा अवसर के ऊपर निर्भर है ।

वाक्य ।

१ नृपेण तस्मै धनं दत्तम् ।	राजाने उसको धन दिया ।
२ रामः सीतया सह वनं गतः ।	राम सीताके साथ वनको गया ।
३ अपराधं विना तेन सः दण्डितः ।	अपराध के बिना उसने उस को दण्ड दिया ।
४ कुमारेण कण्ठे माला धृता ।	लड़के ने गले में माला धारण की ।
५ मया तस्य वार्ता अपि न श्रुता ।	मैंने उसकी बात भी नहीं सुनी ।
६ त्वया सुखं प्राप्तम् ।	तूने सुख प्राप्त किया ।
७ कृष्णस्य उपदेशेन अर्जुनस्य मोहः नष्टः ।	कृष्ण के उपदेश से अर्जुन का मोह नाश होगया ।
८ गंगाया उदकं स्नानार्थं अत्र आनय ।	गंगा का जल स्नान के लिये यहां ले आ ।
९ ते गृहं गच्छन्ति ।	वे घर जाते हैं ।
१० *जनास्तं मुनिं •नैव निंदन्ति ।	लोक उस मुनी को नहीं निंदते हैं ।

---

* जनाः+तं । •न+एव ।

६ षष्ठः पाठः ।

शब्द—पुल्लिंगी

भावितचेताः—विचारयुक्त

विवेकः—विचार, सोच

अविवेकः—अविचार

राजन्—राजा

राज्ञः—राजा का

वत्सः—लड़का, बछड़ा

आचार्यः—गुरु

कालः—समय

अनुशयः—पश्चात्ताप

विषादः—खेद, कष्ट

विप्रः—ब्राह्मण

बालः—छोटा लड़का

सर्पः—सांप

कृष्णसर्पः—काला सांप

चोरः—चोर

जनः—मनुष्य

नकुलः—मूंगस, नेवला

पाठकः—पढ़नेवाला

स्त्रीलिंगी

भार्या—धर्मपत्नी

उज्जयिनी—उज्जयिनी नगरी

उज्जयिन्याम्—उज्जयिनीनगरीमें

बाला—लड़की, स्त्री

आचार्या—स्त्री अध्यापिका

आचार्यानी—गुरुपत्नी

नपुंसकलिंगी

पार्वणं—पर्वणी में होने वाला श्राद्धादि

श्राद्धं—श्राद्ध, मृत क्रिया, श्रद्धा से किया हुवा कर्म

अपत्यं—संतान

आह्वानं—निमंत्रण

दारिद्र्यं—दरिद्रता, गरीबी

पुरं—शहर, नगर

विशेषण

प्रसुता—प्रसूत हुई	व्यापादितवान्—हननकरनेवाला
विलिप्त—लेपन हुआ	पर—श्रेष्ठ, बहुत, दूसरा
खादित—खाया हुआ	पालित—पाला हुवा
व्यापादित—मारा हुआ, हनन किया हुआ	खंडित—तोड़ा हुवा
	सुस्थः—आराम से युक्त

अन्य

निर्विशेषं—समान	सत्वरं—शीघ्र
अथ—नंतर	तथाविधं—वैसा

क्रिया

अवस्थाप्य—रखकर	स्नातुं—स्नान करने के लिये
व्यवस्थाप्य— „	लुलोट—पड़ा
उपगम्य—पास जाकर	यातु—जाने दो
अवधार्य—समझकर	ग्रहिष्यति—लेगा
उपसृत्य—पास होकर	उपगच्छति—पास जाता है
निरीक्ष्य—देखकर	व्यवस्थापयति—ठीक रखता है

वाक्य

संस्कृत	भाषा
(१) अस्ति कलिकाता-नगरे सूर्यशर्मा नाम विप्रः।	कलकत्ता शहर में सूर्यशर्मा नामक ब्राह्मण है।

(२) प्रभावती नाम्नी तस्य भार्या सुशीला अस्ति।	प्रभावती नामक उसकी धर्मपत्नी सुशीला है।
(३) एकदा सा नदीतीरे स्नानार्थं गता।	एक समय वह नदी किनारे स्नान के लिये गई।
(४) सूर्यशर्मा ब्राह्मणः गृहे स्थितः।	पं० सूर्यशर्मा घर में रहा।
(५) स अचिंतयत्	वह सोचने लगा।
(६) यदि सत्वरं अहं न गमिष्यामि।	अगर शीघ्र मैं नहीं जाऊंगा।
(७) अन्यः कोऽपि तत्र गमिष्यति।	दूसरा कोई वहां जायगा।
(८) तस्य भार्या स्नानं कृत्वा शीघ्रं एव गृहं आगता।	उसकी धर्मपत्नी स्नान करके जलदी से ही घर आगई।
(९) सूर्यशर्मा स्वभार्यां आगतां अवलोक्य अवदत्।	पं० सूर्यशर्मा अपनी धर्मपत्नी आई हुवी देखकर बोला।
(१०) देवि ! अहं इदानीं बहिर्गन्तुं इच्छामि।	देवि, मैं अब बाहर जाना चाहता हूं।
(११) पत्नी ब्रूते। भगवन्, कुत्र गन्तुं इच्छा इदानीम्।	पत्नी बोलती है। भगवन्, कहां जाने की इच्छा (है) अब।
(१२) राज्ञः गृहे निमंत्रणं अस्ति।	राजा के घर निमंत्रण है।
(१३) तर्हि गंतव्यम्। शीघ्रमेव आगन्तव्यम।	तो जाइये। जल्दी (वापस) आइये।
(१४) सत्वरं पाकादिकं सिद्धं भविष्यति।	शीघ्र ही (भोजन) तैयार होगा।

[३] अविवेको ऽनुशयाय कल्पते । x

(१) अस्ति उज्जयिन्यां माधवः नाम विप्रः। तस्य भार्या प्रसूता। सा बाला ऽपत्यस्य रक्षणार्थं पतिं अवस्थाप्य स्नातुं गता।

(२) अथ ब्राह्मणाय राज्ञः पार्वणश्राद्धं दातुं आह्वानं आगतम् । तत् श्रुत्वा स विप्रः सहजदारिद्र्याद् अचिंतयत् ।

(३) यदि सत्वरं न गच्छामि तदा तत्र अन्यः कश्चित् श्राद्धं ग्रहिष्यति ।

(४) किंतु बालकस्य अत्र रक्षको नास्ति। तत् किं करोमि। यातु। चिरकाल-पालितं इमं नकुलं पुत्र निर्विशेषं बालक-रक्षणार्थं व्यवस्थाप्य गच्छामि। तथा कृत्वा गतः।

[३] अविचार पश्चात्ताप के लिये होता है।

(१) उज्जयिनी नगरी में माधव नामक एक ब्राह्मण है । उसकी धर्मपत्नी प्रसूत हुई । वह बाल संतान की रक्षा के लिये पति को रखकर स्नान के लिये चली।

(२) अनंतर ब्राह्मण के लिये राजा का पार्वणश्राद्ध देने के लिये निमंत्रण आगया । वह सुनकर वह ब्राह्मण स्वाभाविक दरिद्रता से सोचने लगा।

(३) अगर शीघ्र नहीं जाता हूं तो वहां दूसरा कोई श्राद्ध लेगा।

(४) परन्तु बालक का यहां रक्षण करने वाला नहीं । तो क्या करूं। जाने दो । बहुत समय से पाले हुवे इस पुत्र के समान मूंगस को संतान की रक्षा के लिये रखकर जाता हूं। वैसा करके गया।

(५) ततः तेन नकुलेन बालक-समीपं आगच्छन् कृष्णसर्पो दृष्ट्वा व्यापादितः खण्डितः च ।

(५) पश्चाद् उस मूंगस ने बालक के पास आने वाले काले सांप को देखकर (उसको) मारा और टुकड़े किये ।

(६) ततो असौ नकुलो ब्राह्मणं आयान्तं अवलोक्य रक्त-विलिप्त-मुख-पादः सत्वरं उपगम्य तच्चरणयोः लुलोट ।

(६) अनंतर यह मूंगस ब्राह्मण को आते हुवे देखकर खून से भरे हुवे मुंह और पांव (के साथ) शीघ्र पास जाकर उनके पांव पर पड़ा ।

(७) ततः स विप्रः तथाविधं तं दृष्ट्वा बालको ऽनेन खादितः इति अवधार्य नकुलं व्यापादितवान् ।

(७) बाद वह ब्राह्मण वैसे उस को देखकर बालक इसने खाया ऐसा समझ कर मूंगसको मारा।

(८) अनंतरं यावद् उपसृत्य पश्यति तावद् बालकः सुस्थः सर्पः च व्यापादितः तिष्ठति ।

(८) नन्तर जब पास जाकर देखता है तब बालक आराम (में) है और सांप मरा हुवा है (ऐसा देखा)

(९) ततः तं उपकारकं नकुलं निरीक्ष्य भावितचेताः स परं विषादं गतः ।

(९) पश्चाद् उस उपकार करने वाले मुंगस को देखकर विचारमय होकर बहुत दुःख को प्राप्त हुवा ।

(हितोपदेश)

समास—विवरण ।

(१) अविवेकः————————न विवेकः अ-विवेकः । अविचारः ।

(२) विप्रः ————————विशेषेण प्राज्ञःविप्रः। विशेषज्ञानयुक्तः।

(३) सत्वरं ————————त्वरया सहितं सत्वरं । शीघ्रं ।

(४) बालकरक्षणार्थं————बालकस्य रक्षणं, बालकरक्षणम् । बालकरक्षणस्य अर्थः, बालक रक्षणार्थः तं बालक रक्षणार्थम् ।

(५) बालकसमीपं ————बालकस्य समीपं बालकसमीपम् ।

(६) कृष्णसर्पः ————————कृष्णश्च असौ सर्पश्च कृष्णसर्पः ।

(७) रक्तविलिप्तमुखपादा——रक्तेन विलिप्तः रक्त विलिप्तः । मुखं च पादः च मुखपादौ । रक्तविलिप्तौ मुखपादौ यस्य स रक्तविलिप्त मुखपादः ।

(८) तच्चरणौ————————तस्य चरणौ तच्चरणौ ।

(९) उपकारकः————————उपकारं करोति इति उपकारकः ।

(१०) भावितचेताः————भावितं चेतःमनः यस्य स भवितचेताः।

सन्धि किये हुए कुछ वाक्य ।

(१) मूर्खो[१] भार्यामपि[२] वस्त्रं न ददाति——मूर्ख, धर्मपत्नी को भी कपड़े नहीं देता ।

---

१ मूर्खः+भार्या । २ भार्याम्+अपि ।

(२) वसिष्ठो[३] राममुपदिशति[४]————वसिष्ठ रामको उपदेश देता है।

(३) विप्रास्तत्वं[५] जानन्ति————पंडित लोक तत्व जानते हैं।

(४) पर्वते वृक्षास्सन्ति[६]————पर्वत पर वृक्ष है।

(५) अग्निर्गृहं[७] दहति————आग घर जलाती है।

(६) आचार्यस्तं[८] नापश्यत्[९]————गुरुने उसको नहीं देखा।

(७) मूल्यमदत्त्वैव[१०][११] तेन धान्यमानीतम्[१२]——कीमत न देकर वह धान लाया।

(८) नमस्ते[१३]————तेरे लिये नमस्कार।

(९) नमो[१४] भगवते वासुदेवाय————नमस्कार भगवान वासुदेव के लिये।

---

३ वसिष्ठः+रामं। ४ रामं+उपदिशति। ५ विप्राः+तत्वम्। ६ वृक्षाः+सन्ति। ७ अग्निः+गृहं। ८ आचार्यः+तं। ९ न+अपश्यत। १० मूल्य+अदत्वा। ११ अदत्वा+एव। १२ धान्यं+आनीतं। १३ नमः+ते। १४ नमः+भगवते।

(१०) नमस्तुभ्यम्[१५]————————तुम्हारे लिये नमस्कार।

(११) वसिष्ठविश्वामित्रभारद्वाजेभ्यो[१६] नमः—वसिष्ठ, विश्वामि, भारद्वाज इनके लिये नमस्कार

(१२) साधुभिर्जनै[१७]र्[१८]स्तव मित्रत्व[१९]मस्ति——साधु जनों के साथ तेरी मित्रता है।

(१३) श्रीरामचंद्रो[२०] जयतु————————श्रीरामचन्द्र का जय हो।

(१४) श्रीधरो[२१] नद्यां स्नाति————————श्रीधर नदी में स्नान करता है।

(१५) त्वामभिवादये[२२]————————तुमको (मैं) नमस्कार करता हूं।

---

१५ नमः+तुभ्यम। १६ भारद्वाजेभ्यः+नमः। १७ साधुभिः+जनैः १८ जनैः+तव। १९ मित्रत्वं+अस्ति। २० चंद्रः+जयतु। २१ श्रीधरः+नद्यां। २२ त्वां+अभिवादये।

७ सप्तमः पाठः ।

पूर्वोक्त छ पाठों में अकारान्त, इकारान्त, तथा उकारान्त पुलिंगी शब्द चलाने का प्रकार बताया है । इकारान्त तथा उकारान्त पुंलिंगी शब्द एक जैसे ही चलते हैं । इकारान्त पुलिंगी शब्दों में जहां "य" आता है वहां उकारान्त पुलिंगी शब्दों में "व" आता है, तथा "इ और ए" के स्थान पर क्रमश "उ और ओ" आते हैं । यह सुविज्ञ पाठकों के ध्यान में आया होगा । इतनी बात ध्यान में रखने से शब्द कराठ करने की बहुत सी मेहनत बच जायगी ।

दीर्घ आकारान्त, ईकारान्त तथा ऊकारान्त पुंलिंगी शब्द बहुत प्रसिद्ध न होने के कारण इस समय नहीं देते हैं । उनका विचार आगे करेंगे । अब क्रम प्राप्त ऋकारान्त शब्द के रूप देखिए:—'धातृ' (ऋकारान्त; पुंलिंगः) शब्दः ।

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
(१)	धाता————	धातारौ————	धातारः
सं०	हे धातः (धातर्)—	हे ,, ————	हे ,,
(२)	धातारम्————	,, ————	धातॄन्
(३)	धात्रा————	धातृभ्याम्————	धातृभिः
(४)	धात्रे————	,, ————	धातृभ्यः
(५)	धातुः————	,, ————	,,
(६)	,, ————	धात्रोः ————	धातॄणाम्
(७)	धातरि————	,, ————	धातृषु

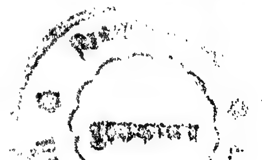
इसी प्रकार कर्तृ, नेतृ, नप्तृ, शास्तृ, भ्रातृ, दातृ, ज्ञातृ, विधातृ, इत्यादि शब्द चलते हैं। पाठकों को उचित है कि वे इन सब शब्दों के रूप कागजों पर लिखें, ताकि सब विभक्तियों के रूप ठीक ठीक स्मरण हो जांय। जितना बल पाठक गण इन शब्दों की तैयारी में लगा देंगे उसी प्रमाण से उनकी संस्कृत बोलने लिखने आदि की शक्ति बढ़ेगी। अस्तु।

पूर्वोक्त छे पाठों में पाठकों ने देखा होगा कि वाक्यों में कई शब्द अकेले होते हैं। तथा कई शब्द दो दो तीन तीन अथवा अधिक शब्द मिल कर बनते हैं। दो अथवा दो से अधिक शब्दों से बने हुए शब्द समुदाय को "समास" कहते हैं। जैसाः — रामकृष्ण, गंगाधार, कृष्णार्जुन, ज्वरार्त, तपोवन, मुनिमूषक इ०। ये तथा इस प्रकार के सहस्रों सामासिक शब्द संस्कृत में प्रतिदिन प्रयुक्त होते हैं। समासों द्वारा थोड़ा बोलने से बहुत अर्थ निष्पन्न होता है।

(१) 'गंगायाः लहरी' ऐसा कहने की अपेक्षा 'गंगालहरी' इतना कहने से ही 'गंगा की लहर' ऐसा अर्थ उत्पन्न होता है।

(२) "पीतं अंबरं यस्य सः" इतना कहने की अपेक्षा 'पीतांबर' इतना ही कहने से 'पीला है वस्त्र जिसका', (वह विष्णु)' इतना अर्थ निष्पन्न होता है।

(३) तस्य वचनं=तद्वचनम्।



(४) प्रजायाः हितं=प्रजाहितम् ।

(५) भरतस्य पुत्रः=भरतपुत्रः ।

इस प्रकार अन्यान्य शब्दों के विषय में जानना चाहिए। जब पाठकों के पास इस प्रकार का सामासिक शब्द आजायगा तब प्रथम उनके पद अलग अलग करके, और पूर्वा पर संबंध देख कर उन पदों का अर्थ लगाना। जैसः—

(१) अकीर्तिकरम्=अ+कीर्ति+करं=न कीर्तिः=अकीर्तिः
अकीर्तिं करोति इति=अकीर्तिकरम् ।

(२) मूषकशावकः=मूषक+शावकः=मूषकस्य शावकः=
मूषकशावकः ।

(३) रक्तविलिप्तमुखपादः=रक्त+विलिप्त+मुख+पादः=
रक्तेन विलिप्तं=रक्तविलिप्तम् ।
मुखं च पादः च=मुखपादौ ।
रक्तविलिप्तौ मुखपादौ यस्य सः=
रक्तविलिप्तमुखपादः ।

इस प्रकार समासों का विग्रह करने का प्रकार होता है। ऐसा करने से समास का अर्थ खुल जाता है। समासों के प्रकार बहुत है। उन सब का वर्णन हम आगे करेंगे। यहां केवल नमूना बताए

११ नियम—संस्कृत में अकार के बाद आने वाले विसर्ग के सन्मुख अ आने से उस अकार सहित विसर्ग का ओ होता है और आगे का अकार गुप्त हो जाता है तथा अकार के स्थान पर, अकार का सूचक ऽ ऐसा चिन्ह लिखते हैं।

ऽ यह चिन्ह अवश्यमेव लिखना चाहिए ऐसा कोई नियम नहीं। कोई लिखते हैं कोई नहीं लिखते। बोलने में अकार का उच्चार नहीं होता। (परन्तु बोलने वाले की इच्छा हो तो अकार का उच्चारण भी कर सकता है। अर्थात् संधि का नियम वक्ता जिस समय चाहे उसी समय प्रयोग में आसकता है) जैसेः—

(१) कः अपि=कोऽपि।
(२) रामः अगच्छत=रामोऽगच्छत्।
(३) धन्यः अस्मि=धन्योऽस्मि।

} अः+अ=ओऽ

१२ नियम—पदान्त के अनुस्वार का म् होता है। और उसके आगे जो स्वर आजायगा उस स्वर के साथ वह मकार मिल जाता है। जैसेः—

(१) किं अस्ति=किमस्ति।
(२) वधं अभिकांक्षन्=वधमभिकांक्षन्।
(३) इदं औषधम्=इदमौषधम्।

इस प्रकार सब संधि जोड़कर वाक्य लिखने से पाठकों को स्वयं पढ़ने में बड़ी कठिनता (दिक्कत) होगी, इसलिये इस

पुस्तक में किसी किसी स्थान पर संधि किये हैं, अन्य स्थानों पर किये नहीं। पाठकों को उचित है कि इन नियमों के अनुसार वे पाठों में जहां जहां संधि नहीं किया है वहां वहां अवश्य संधि बनायें। और हर एक पाठ संधि करके लिखदें। ताकि संधियों का अभ्यास दृढ़ होजावे।

शब्द—पुल्लिंगी

दण्डः—सोटी, डण्डा	भवन्तः—आप (बहुवचन)
महावीरः—बड़ा शूर, एक देवता	भवान्—आप (एकवचन)
एकैकः—हरएक	बलिः—बली, भोजन,
मासः—महीना	दुष्टाशयः—बुरा मनवाला
मासि—महीने में	महाशयः—अच्छे मनवाला
दुरात्मन्—दुष्ट आत्मा	अभिकांक्षन्—इच्छा करनेवाला
विप्रवेशः—पंडित का पोशाक	जनपदः—देश
वासरः—दिन	मधुपर्कः—दहि, मधु आदि
नंदनः—पुत्र, लड़का	पार्थिवः—राजा
प्रहसन्—हंसकर	स्तुवन्—स्तुती करनेवाला
भवतां—आपको	स्वः—अपना

स्त्रीलिंगी

चतुदशी—चतुर्दशी तिथी चौदह तारीख	भूमिः—पृथ्वी
	कारा—जेलखाना

नपुंसक लिंगी

वक्तव्यम्—बोलने योग्य
अभिलषितं—इच्छित
भीषणं—भयंकर
द्वंद्वं—मल्ल युद्ध
द्वन्द्वयुद्धं—मल्ल युद्ध
वस्तु—पदार्थ
स्व-वेश्मन्—अपना घर
वेश्मन्—घर
आसनं—आसन
गृहं—घर
मद्गृहं—मेरा घर
कारागृहं—जेलखाना

विशेषण

मन्वान—माननेवाला
भीषण—भयंकर
संबोधित—कहा हुवा
कारागृहीत—जेल में पड़ा हुवा
कृतकृत्य—कृतकार्य
दीक्षित—जिसने दीक्षा ली हुई है
बलिष्ठ—बलवान
उचित—योग्य, ठीक, मुनासिब

अन्य

बहुधा—अनेक प्रकार से
पुरा—प्राचीन काल में
किल—निश्चय से
यथोचित—योग्यतानुसार
इति—ऐसा
द्विधा—दो प्रकार से
दण्डवत्—सोटी के समान
वस्तुतः—सचमुच

क्रिया

निर्जित्य—जीतकर के	वरयामास—चुना
निरुध्य—बंदकर के	आसीत्—था
समुपवेश्य—बिठलाकर	अकरोत्—करता था
आकर्ण्य—सुनकर	प्रदास्यामि—दूंगा
प्रणम्य—नमस्कार करके	प्रवर्तते—होता है
संपूज्य—पूजा करके	मोचयामास—खुला किया
हत्वा—हनन करके	निपातयामास—गिराया
घातयित्वा— ,,	प्रतिपदिरे—प्राप्त हुवे
वृणीष्व—चुन	

वाक्य

संस्कृत	भाषा
(१) पुरा किल कृष्णकृत्यो नाम एकः क्षत्रियः आसीत्।	प्राचीन काल में कृष्णकृत्य नामक एक क्षत्रिय था।
(२) स दुष्टाशयोऽन्यायेन राज्यमकरोत्।	वह दुष्ट आत्मा अन्याय से राज्य करता था।
(३) तेन बहवः क्षत्रियाः कारागृहे स्थापिताः।	उसने बहुत क्षत्रिय जेलखाने में रक्खे थे।
(४) तस्मिन राज्ये शासति* न कोऽपि सुखं प्राप्तवान्।	उसके राज्य शासन के समय कोई भी सुख को प्राप्त नहीं हुआ।

* यह सती सप्तमी है। संस्कृत में इस प्रकार के प्रयोग बहुत आते हैं। जिसका वर्णन हम आगे विस्तार पूर्वक करेंगे।

(५) सर्वे धार्मिकाः तस्य राज्यं त्यक्त्वा अन्यत्र गताः ।

सब धार्मिक (पुरुष) उसका राज्य छोड़कर दूसरे स्थान पर गये ।

(६) श्रीकृष्णः तस्य वधमिच्छन् तस्य राजधानीं गतः ।

श्रीकृष्ण उसके वध की इच्छा करता हुवा उसकी राजधानी को गया ।

(७) तेन सह भीमोऽपि आसीत् ।

उसके साथ भीम भी था ।

(८) भीमसेनः कृष्णकृत्येन सह मल्लयुद्धमकरोत् ।

भीमसेन ने कृष्णकृत्य के साथ मल्लयुद्ध किया ।

---

[४] जरासंध-कथा ।

(१) पुरा किल जरासंधो नाम कोऽपि क्षत्रियः आसीत् । स दुरात्मा महावीरान् क्षत्रियान् युद्धे निर्जित्य स्ववेश्मनि निरुध्य मासि मासि कृष्ण चतुर्दश्यां एकैकं हत्वा भैरवाय तेषां बलिं अकरोत् ।

[४] जरासंध की कथा ।

(१) पूर्वकाल में निश्चय से जरासंध नामक कोई एक क्षत्रिय था । वह दुष्टाशय बड़े शूर क्षत्रियों को युद्ध में जीत कर अपने घर में बंद करके प्रत्येक महीने में कृष्ण (पक्षके) चतुर्दशी के दिन एक एक को हनन करके भैरव के लिये उन का बलि करता था ।

(२) एवं सकल-जनपद-क्षत्रिय वधे दीक्षितस्य तस्य दुष्टाशयस्य वधं अभिकांक्षन् श्रीकृष्णः भीमार्जुनसहितः तस्य गृहं विप्रवेषेण प्रविवेश ।

(२) इस प्रकार सम्पूर्ण देश के क्षत्रियों को हनन करने की दीक्षा (व्रत) लिये हुवे उस दुरात्मा के वध की इच्छा करनेवाला श्रीकृष्ण भीम तथा अर्जुन के साथ उसके घर पंडित की पोशाक में प्रविष्ट हुआ ।

(३) स तु तान् वस्तुतो विप्रान् एव मन्वानो दण्डवत् प्रणम्य यथोचितं आसनेषु समुपवेश्य मधुपर्कदानेन संपूज्य, धन्योऽस्मि, कृतकृत्योऽस्मि, किमर्थं भवन्तो मद्गृहं आगताः तद्वक्तव्यम् ।

(३) वह तो उनको सचमुच ब्राह्मण ही समझकर सोटी के समान (दण्डवत्) नमस्कार करके यथा योग्य आसनों के ऊपर बिठला के मधुपर्क देकर पूजा करके, "(मैं) धन्य हूं, (मैं) कृतकृत्य हूं, किस लिये आप मेरे घर आये, वह कहिये ।

(४) यद् यद् अभिलषितं तत् सर्वं भवतां प्रदास्यामि इति उवाच । तद् आकर्ण्य भगवान् श्रीकृष्णः प्रहसन् पार्थिवं तं अब्रवीत् ।

(४) जो जो आपका इच्छित होगा वह सब आपको दूंगा" ऐसा बोला । वह सुनकर भगवान् श्रीकृष्ण हंसता हुवा उस राजा को बोला ।

(५) भद्र वयं कृष्ण-भीमार्जुना युद्धार्थं समागताः। अस्माकं अन्यतमं द्वंद्वयुद्धार्थं वृणीष्व इति।

(५) हे कल्याण, हम कृष्ण, भीम, अर्जुन युद्ध के लिये आये हैं। हमारे में से किसी एक को द्वंद्वयुद्ध के लिये चुनो" (ऐसा)।

(६) सोऽपि महाबलः "तथा" इति वदन् द्वंद्वयुद्धाय भीमसेनं वरयामास। अथ भीमजरासंधयोः भीषणं मल्लयुद्धं पंचविंशति वासरान् प्रवर्तते स्म।

(६) उस महाबली ने भी "ठीक" ऐसा कहकर मल्लयुद्ध के लिये भीमसेन को चुना। पश्चात् भीम और जरासंध इनका भयंकर मल्लयुद्ध २५ दिन हुवा।

(७) अन्ते च भगवता देवकीनंदनेन संबोधितः स भीमसेनः तस्य शरीरं द्विधा कृत्वा भूमौ निपातयामास।

(७) अन्त में भगवान् देवकी पुत्र (कृष्ण) ने कहे हुवे उस भीमसेन ने उसके शरीर के दो हिस्से करके भूमी पर गिराये।

(८) एवं बलिष्ठं जरासंधं पाण्डुपुत्रेण घातयित्वा तेन कारागृहीतान् पार्थिवान् वासुदेवो मोचयामास।

(८) इस प्रकार बलवान् जरासंध को पण्डु के पुत्र ने मारकर उस ने जेलखाने में बंद किये हुए राजाओं को श्रीकृष्ण ने छोड़ दिया।

(९) तेऽपि तं भगवंतं बहुधा स्तुवंतः स्वान स्वान् जनपदान् प्रतिपेदिरे।

महाभारतम्

(९) वे भी उस भगवान की बहुत प्रकार स्तुती करते हुवे अपने अपने देश को प्राप्त हुवे।

समास–विवरणम् ।

(१) दुष्टाशयः——————दुष्टः आशयः यस्य स दुष्टाशयः। दुरात्मा।

(२) भीमार्जुनसहितः————भीमः च अर्जुनः च भीमार्जुनौ। भीमार्जुनाभ्यां सहितः भीमार्जुन सहितः।

(३) मधुपर्कदानं——————मधुपर्कस्य दानं मधुपर्कदानम्।

(४) कृष्णभीमार्जुनाः————कृष्णश्च भीमश्च अर्जुनश्च कृष्णभीमार्जुनाः।

(५) देवकीनंदनः——————देवक्याः नंदनः देवकीनंदनः।

(६) सकलजनपदक्षत्रियवधः—सकलं च तत् जनपदं च सकल जनपदं। सकलजनपदस्य क्षत्रियाः सकलजनपदक्षत्रियाः। सकलजनपदक्षत्रियाणां वधः सकलजनपदक्षत्रियवधः।

---

८ अष्टमः पाठः।

संस्कृत में पुलिंग के लृकारान्त, एकारान्त, ऐकारान्त, ओकारान्त तथा औकारान्त शब्द हैं, परन्तु उनमें बहुत ही थोड़े ऐसे हैं कि जो व्यावहारिक वार्तालाप में आते हैं। इसलिये इनको छोड़कर व्यंजनान्त पुलिंगी शब्दों के रूपों का प्रकार अब लिखते हैं:—

अन्नन्तः पुल्लिंगो 'ब्रह्मन्' शब्दः ।

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
(१)	ब्रह्मा	ब्रह्माणौ	ब्रह्माणः
(सं (हे)	ब्रह्मन	(हे) ,,	(हे) ,,
(२)	ब्रह्माणम्	,,	ब्रह्मणः
(३)	ब्रह्मणा	ब्रह्मभ्याम्	ब्रह्मभिः
(४)	ब्रह्मणे	,,	ब्रह्मभ्यः
(५)	ब्रह्मणः	,,	,,
(६)	,,	ब्रह्मणोः	ब्रह्मणाम्
(७)	ब्रह्मणि	,,	ब्रह्मसु

इसी प्रकार "अन्" है अंत में जिन के ऐसे 'आत्मन्, यज्वन, सुशर्मन्, कृष्णवर्मन्, अनर्वन' इत्यादि अन्नन्त शब्द चलते हैं। पाठकों को उचित है कि वे इनको स्मरण करके इन शब्दों के रूप लिखें। अन्नन्त शब्दों में कई ऐसे शब्द हैं कि जिन के रूप "ब्रह्मन्" शब्द से कुछ भिन्न प्रकार के होते हैं, उनमें "राजन्" शब्द मुख्य है:—

अन्नन्तः पुल्लिंगो 'राजन्' शब्दः ।

(१)	राजा	राजानौ	राजानः
(सं) (हे)	राजन्	(हे) ,,	(हे) ,,
(२)	राजानम्	,,	राज्ञः

(३)	राज्ञा————	राजभ्याम्————	राजभि
(४)	राज्ञे————	,, ————	राजभ्यः
(५)	राज्ञः————	,, ————	,,
(६)	,, ————	राज्ञोः ————	राज्ञाम्
(७)	राज्ञि / राजनि ————	राज्ञोः ————	राजसु

इस शब्द के समान "मज्जन्, सीमन, महिमन्, गरिमन्, लधिमन्, सुनामन्, दुर्णामन्, अणिमन्," इत्यादि शब्द चलते हैं। पाठकों को चाहिये कि वे इनके रूप बनाकर लिखें। ताकि इनके रूप बनाना वे न भूल जांय। अब कुछ स्वर संधि के नियम लिखते हैं।

१३ नियम—अ, इ, ऊ, ऋ इन स्वरों के सन्मुख सजातीय ह्रस्व अथवा दीर्घ यही स्वर आगये तो उन दोनों स्वरों का एक सजातीय दीर्घ स्वर बनाता है। जैसेः—

अ + अ = आ	अ + आ = आ
आ + अ = आ	आ + आ = आ
इ + ई = ई	ई + इ = ई
इ + इ = ई	ई + ई = ई
उ + उ = ऊ	ऊ + उ = ऊ
उ + ऊ = ऊ	ऊ + ऊ = ऊ
ऋ + ऋ ऋ‍-	

इनके उदाहरण नीचे दिये हैं उनको देखने से उक्त नियम ठीक प्रकार समझ में आवेगा।

[अ]

वसिष्ठ + आश्रमः=वसिष्ठाश्रमः= अ + आ=आ

रमा + आनंदः= रमानंदः= आ + आ=आ

दिव्य + अरुणः= दिव्यारुणः= अ + अ = आ

देवता + अंशः = देवतांशः = आ + अ = आ

इन उदाहरणों में प्रथम दो शब्द दिये हैं, पश्चात् उनका संधि बना कर रूप दिया है, तत्पश्चात् कौनसे स्वर मिलने से कौनसा स्वर हुवा है यह बताया है। इसी प्रकार अन्य स्वरों के उदाहरण नीचे दिये हैं:—

[इ]

कवि + इष्टम्=कवीष्टम्=—इ+इ=ई

नदी +इच्छा=नदीच्छा =—ई+इ=ई

कवि +ईश्वरः=कवीश्वरः —इ+ई=ई

लक्ष्मी+ईश्वरः=लक्ष्मीश्वरः=ई+ई=ई

[उ]

भानु+उदयः= —भानूदयः=—उ+उ=ऊ

चमू+ऊर्मिः= —चमूर्मिः= —ऊ+ऊ=ऊ

वधू+उच्छिष्टम्= वधूच्छिष्टम्=ऊ+उ=ऊ

सुनू+ऊरुः= —सुनूरुः= —ऊ+ऊ=ऊ

ऋकार के संधि प्रसिद्ध नहीं है इसलिये नहीं दिये हैं।

पाठकों को चाहिये कि वे इस संधि नियम को ठीक स्मरण रखें। क्योंकि यह नियम बहुत उपयोगी है। अब नीचे कुछ शब्द दिये हैं उनको कंठ कीजियेः—

शब्द—पुल्लिंगी।

अधिपतिः—राजा	भ्रातृ—भाई
पतिः—स्वामी	भ्रातरं—भाई को
दुर्गः—किला	अधीशः—स्वामी, राजा
अधिकारः—हुकुमत	दीनारः—मोहर
उदन्तः—वृत्तान्त	स्वामिन्—स्वामी
बहुमानः—बहुत सन्मान	स्वामिने—स्वामी के लिये
ईशः—स्वामी	वदन्—बोलने वाला

नपुंसकलिंगी।

वादित्वम्—बोलना	यौवनं—तारुण्य, जवानी
सहस्रं—हजार	तेजस्—तेज, चमक
आर्जवं—सरलता	तेजसा—तेजसे

विशेषण।

पीन—मोटाताजा	अधर्मशील—अधार्मिक
कृपण—कंजूस्	भ्रष्टाधिकार—जिसका अधिकार छीना है।
इतर—अन्य	
गत—प्राप्त, गया हुवा, संबंधमें	सुलभ—सुप्राप्य, आसान
दुर्गगत—किले के संबंध में	दुर्विनीत—नम्रता रहित
कारित—क्रिया	क्रूर—क्रोधी, गुस्सा करने वाला
तुष्ट—खुश	अन्यायप्रवृत्तः—अन्याय में प्रवृत्त

अन्य ।

इह—इस लोकमें	अमुत्र—परलोक में
मह्यं—मुझे, मेरे लिये	अग्रे—सन्मुख

धातुसाधित ।

भेतव्यं—भीने योग्य	रक्षितव्यं—रक्षा करने योग्य

क्रिया ।

लभते—प्राप्त करता है	अपृच्छत्—पूछा (उसने)
बिभेमि—डरता हूं	अब्रवीत्—बोला (वह)
बिभेषि—डरता है (तू)	अभाषत—बोला (वह)
शास्ति—राज्य करता है	अगदत्—बोला (वह)
बिभेति—डरता है	अगदम्—(मैंने) कहा
अपृच्छम्—(मैंने) पूछा	अगदः—(तूंने) कहा
अपृच्छः—(तूंने) पूछा	अब्रवीः—(तूंने) कह
अगच्छत्—गया	शास्मि—राज्य करता हूं

वाक्य ।

संस्कृत	भाषा
(१) मालवदेशस्य राजा कंचित् पुरुषं दुर्गस्य वृत्तमपृच्छत् ।	मालव देश का राजा किसी एक पुरुष से किले का वृत्तांत पूछता था ।
(२) किमर्थं स राजा तमेव पुरुषमपृच्छत् ।	क्यों वह राजा उसी पुरुष से पूछता था ।

(३) यतः स पुरुषः दुर्गप्रदेशाद् आगतः।

क्योंकि वह पुरुष दुर्ग देश से आया था।

(४) पुरुषेण राज्ञे किं कथितम्।

पुरुष ने राजा को क्या कहा।

(५) दुर्गपालः कृपणोऽधार्मिकः क्रूरोऽविनीतः च अस्ति इति पुरुषो ऽवदत्।

दुर्गपाल कंजूस, अधार्मिक, क्रूर, अ-नम्र है ऐसा मनुष्य ने कहा।

(६) तद् आकर्ण्य राजा क्रोधं प्राप्तः

वह सुन कर राजा क्रोध को प्राप्त हुआ।

(७) पुरुषेण उक्तम्। क्रोधः किमर्थं क्रियते। यन्मया उक्तं तत्सत्यं अस्ति।

पुरुष ने कहा। गुस्सा किस लिये किया जाता है। जो मैंने कहा वह सत्य है।

(८) यः पुरुषः ईश्वराद् बिभेति, स इतरस्मात् कस्माद् अपि न बिभेति।

जो मनुष्य ईश्वर से डरता वह ईश्वर से भिन्न दूसरे किसी से भी नहीं डरता।

(९) राजा तस्य वचनेन तुष्टः सन् तस्मै दीनाराणां सहस्रं ददौ।

राजा उन के भाषण से संतुष्ट होकर, उस को उसने हजार मोहर दीं।

(१०) यः सत्यं वदति तं ईश्वरः सदैव रक्षति।

जो सत्य बोलता है उसकी ईश्वर हमेशा रक्षा करता है।

(११) अतः सर्वे सत्यमेव वदन्ति।

इस कारण सब लोक सच्चा बोलते हैं।

(५) कृतार्थं सत्यवादित्वम्

(१) मालवाधिपतिः दर्पसारः दुर्गात् आगत कश्चित् पुरुष दुर्गपाल-गतं उदन्तं अपृच्छत् ।

(२) पुरुषः अब्रवीत् । स दुगपालः पीनः यौवन-सुलभेन तेजसा बलेन च युक्तः स्वर्गाधिपतिरिव कालं नयति ।

(३) दर्पसारः प्राह । 'नाहं तस्य शरीरस्वास्थ्यं पृच्छामि । किंतु कथं स प्रजाः शास्ति इति मह्यं कथय' ।

(४) पुरुषोऽभाषत । 'स कृपणः अधमशीलः दुर्विनीतः क्रूरः च अस्ति' । राजा अभाषत । 'प्रजाभिः दोषान् तस्य स्वामिने कथयित्वा किमर्थं भ्रष्टाधिकारो न कारितः' ।

[५] सच बोलने से कृत-कारिता

(१) मालव देश के राजा दर्पसार ने दुर्ग से आये हुवे किसी एक पुरुष को दुर्गपाल संबंधि वृत्तान्त पूछा ।

(२) पुरुष बोला । यह दुर्गपाल मोटा ताजा, तारुण्य के कारण (प्राप्त हुवे) तेज से तथा बल से युक्त स्वर्ग के राजा के समान समय व्यतीत करता है।

(३) दर्पसार बोला । 'नहीं मैं उसके शरीर का स्वास्थ्य पूछता हूं । परन्तु कैसा वह प्रजा के (ऊपर) राज्य करता है यह मुझे कह' ।

(४) पुरुष बोला । 'वह कंजूस, अधार्मिक, नम्रता रहित, और क्रोधी है' । राजा बोला । 'प्रजाओं ने उनके दोष राजा को कथन करके क्यों अधिकार भ्रष्ट न कराया' ।

(५) पुरुषोऽकथयत् । तस्य स्वामी स्वयमेव अन्याय-प्रवृत्तः अस्ति ।

(५) पुरुष बोला । 'उसका स्वामी स्वयं भी अन्याय करनेवाला है' ।

(६) राजा उवाच । पुरुष, न जानासि कोऽहमिति । पुरुषः प्रत्यभाषत । जानामि त्वां दुर्गपालस्य ज्येष्ठं भ्रातरं मालवाधीशम् ।

(६) राजा बोला । 'हे मनुष्य, (तूं) नहीं जानता कौन मैं हूं' । पुरुष बोला । "(मैं) जानता हूं (कि) तुम दुर्गपाल का बड़ा भाई मालव देश का राजा (हो)'

(७) राजा अगदत् । एतद् वृत्तान्तं मम अग्रे कथयितुं कथं न बिभेषि ।

(७) राजा बोला । 'यह वृत्तान्त मेरे सामने कहने के लिये तू कसे नहीं डरता है ।

(८) पुरुषः अवदत् । ईश्वराद् बिभ्यत्पुरुषः तदितरस्मात् कस्माद् अपि न बिभेति ।

(८) पुरुष बोला । 'ईश्वर से डरने वाला मनुष्य उस के सिवाय अन्य किसी से भी नहीं डरता ।

(९) तथा च सत्यं वदन् जनोऽसत्यं मनसाऽपि न चिंतयति।

(९) उसी प्रकार सच बोलने वाला मनुष्य झूठ मन से भी नहीं चिंतन करता है' ।

(१०) अनेन वचनेन तुष्टो राजा पुरुषस्य आर्जवं दृष्ट्वा तस्मै दीनारसहस्रं अददात्

(१०) इस भाषण से खुष हुवे हुवे राजा ने, पुरुष की सरलता को देखकर उसको,

अवदत् च। सत्यभाषणे कृतनिश्चयेन पुरुषेण न कस्मादपि भेतव्यम्।

हजार मोहरें दीं और कहा सत्य भाषण करने का निश्चय किये हुए पुरुष को किसी से भी नहीं भीना चाहिए।

(११) यतः स सदा ईश्वरेण रक्षितव्यः। सत्यवादी इह अमुत्र च बहुमानं लभते।

(११) कारण वह सदैव परमेश्वर से रक्षित (होता है)। सत्य भाषण करने वाला इस लोक में तथा परलोक में बहुत सन्मान प्राप्त करता है।

समास–विवरणम्

(१) मालवाधिपतिः—मालवस्य अधिपतिः मालवाधिपतिः।

(२) शरीरस्वास्थ्यम्—शरीरस्य स्वास्थ्यं शरीरस्वास्थ्यम।

(३) अधर्मशीलः——न धर्मः अधर्मः। अधर्मे शीलं यस्य स अधर्मशीलः।

(४) भ्रष्टाधिकारः——भ्रष्टः अधिकारः यस्मात् स भ्रष्टाधिकारः।

(५) अन्यायप्रवृत्तः—अन्याये प्रवृत्तः अन्यायप्रवृत्तः।

(६) दीनारसहस्रं——दीनाराणां सहस्रं दीनारसहस्रम्।

(७) सत्यभाषणं——सत्यं च तत् भाषणं सत्यभाषणम्।

(८) कृतनिश्चयः——कृतः निश्चयः येन स कृतनिश्चयः।

---

९ नवमः पाठः ।

नकारान्त पुल्लिंगी शब्दों में 'श्वन्, युवन्, मघवन्' इन शब्दों के रूप कुछ विलक्षण प्रकार से होते हैं। उनको नीचे देते हैं :—

नकारान्तः पुल्लिंगः 'श्वन्' शब्दः ।

(१)	श्वा	श्वानौ	श्वानः
सं० (हे)	श्वन्	(हे) ,,	(हे) ,,
(२)	श्वानम्	,,	शुनः
(३)	शुना	श्वभ्याम्	श्वभिः
(४)	शुने	,,	श्वभ्य
(५)	शुनः	,,	,,
(६)	,,	शुनोः	शुनाम्
(७)	शुनि	,,	श्वसु

नकारान्तः पुल्लिंगो 'युवन्' शब्दः ।

(१)	युवा	युवानौ	युवानः
सं० (हे)	युवन्	हे ,,	(हे) ,,
(२)	युवानम्	,,	यूनः
(३)	यूना	युवभ्याम्	युवभिः
(४)	यूने	,,	युवभ्यः
(५)	यूनः	,,	,,
(६)	,,	यूनोः	यूनाम्
(७)	यूनि	,,	युवसु

नकारान्तः पुल्लिंगो 'मघवन्' शब्द ।

(१)	मघवा	मघवानौ	मघवानः
सं० (हे)	मघवन्	(हे) ,,	(हे) ,,
(२)	मघवानम्	,,	मघोनः
(३)	मघोना	मघवभ्याम्	मघवभिः
(४)	मघोने	,,	मघवभ्यः
(५)	मघोनः	,,	,,
(६)	,,	मघोनोः	मघोनाम्
(७)	मघोनि	,,	मघवसु

श्वन् (कुत्ता), युवन् (जवान), मघवन् (इन्द्र) ये इनके अर्थ हैं । इनके प्रयोग संस्कृत में बहुत वार आते हैं । इसलिये पाठकों को चाहिये कि वे इनका ठीक ठीक स्मरण रखें । अब कुछ संधि के नियम देते हैं:—

१४ नियम—पदान्त के मकार के सन्मुख क, च, ट, त, प, इन पांच वर्गों में से कोई व्यंजन आ जाय तो उस मकार का अनुस्वार बनता है अथवा उसी वर्ग का अनुनासिक (पांचवा व्यंजन) बनता है । जैसाः—

पीतम्+ कुसुमम्= पीतं कुसुमम्, अथवा पीतङ्कुसुमम्;
रक्तम्+ जलम्= रक्तं जलम् ,, रक्तञ्जलम्
चक्रम्+ ढौकति= चक्रं ढौकति ,, चक्रण्ढौकति;

पुस्तकम् + दर्शय= पुस्तकं दर्शय ,, पुस्तकन्दर्शय;
दुग्धम्+ पीतम्= दुग्धं पीतम् ,, दुग्धम्पीतम्

१५ नियम—शब्द के अंदर के अनुस्वार अथवा मकार के सन्मुख पूर्वोक्त पांच वर्ग के व्यंजन आने से, उस अनुस्वार अथवा मकार का, उसी वर्ग का अनुनासिक बनता है। जैसाः-

अलंकारः=अलङ्कारः (जेवर)
पंचांगम् =पञ्चाङ्गम् (जंत्री)
मंदिरम् =मन्दिरम् (घर)
पंडितः = पण्डितः (विद्वान)
पंपा =पम्पा (एक सरोवर)

परन्तु आजकल यह नियम कुछ शिथिल हुआ है। छपाई के तथा लिखने के सुभीते के लिये दोनों प्रकार के रूप छापे तथा लिखे जाते हैं। पाठकों को यहां ध्यान देना चाहिये कि ये नियम विशेषतया उच्चारण के लिये होते हैं। अनुस्वार लिखा जाय अथवा परसवर्ण-अनुनासिक लिखा जाय दोनों का उच्चारण एक ही प्रकार का होना चाहिये। जैसाः—

गंगा। } इन दोनों का उच्चारण "गङ्गा" ऐसा ही करना चाहिये
गङ्गा। }

भाषा में भी यह नियम बहुतांश में है " कंगी, घंटा, धंदा, अंदर, जंग, गंज, गुंफा", इत्यादि शब्द " कङ्गी, घण्टा, धन्दा, अन्दर, जङ्ग, गञ्ज, गुम्फा" ऐसे ही बोले जाते हैं। कोई गलती से 'घम्टा, धम्दा' ऐसा उच्चारण करेगा तो उसकी उसी समय हंसी हो जायगी। यही बात संस्कृत शब्दों की भी समझनी चाहिये।

तथा नियम १२ के विषय में भी समझना चाहिये कि, अनुस्वार लिख कर आगे अलग स्वर भी लिखा जाय तो दोनों का मिलकर उच्चारण करना चाहिये । जैसा :—

गृहं आगच्छ =(इसका उच्चारण)= गृहमागच्छ
तं आनय = ,, =तमानय
वृक्षम् आलोक्य= ,, =वृक्षमालोक्य
दृष्टम् अस्ति = ,, =दृष्टमस्ति

सुगमता के लिये किसी प्रकार लिखा जाय परन्तु उच्चारण एक जैसा होना चाहिये । परन्तु किसी कारण वक्ता उनको अलग बोलना चाहे तो अलग भी बोल सकता है । इस पुस्तक में पाठकों के सुभीते के लिते मकार, अनुस्वार तथा स्वर बहुत स्थान पर अलग ही छापे हैं । अब कुछ शब्द नीचे देते हैं ।

शब्द—पुल्लिंगी ।

स्पृशन्—स्पर्श करने वाला	दूतः—दूत नौकर
व्यपदेशः—कुटुंब, नाम, जाति	पतिः—स्वामी
अभावः— न होना	जन्तुः—प्राणी
नाथः—स्वामी	शशकः—खरगोश
गजः—हाथी	चंद्रः —चांद
यूथः—समुदाय	शशांकः—चांद
अभ्युपायः—उपाय	प्रतीकारः—प्रतिबंध
पर्वतः—पहाड़	वाचकः—बोलने वाला

स्त्रीलिंगी ।

पिपासा—प्यास
तृषा—प्यास
वृष्टिः—वर्षा
आहति—आघात
वृष्टेः—वर्षा के

नपुंसकलिंगी ।

कुसुमं—फूल
जीवनं—जिंदगी
निमज्जनं—स्नान, डुबकी
कुलं—कुल, कुटुंब
चंद्रबिंबं—चंद्र की छाया
अज्ञानं—ज्ञान रहितता
ह्रदः—तालाव
तीरं—किनारा
शस्त्रं—हथियार
सरः—तालाव

विशेषण

पीत—पीला
क्षुद्र—छोटा
तृषार्त—प्यासा
कर्तव्य—करने योग्य
समायात—आया हुवा
प्रेषित—भेजा हुआ
कंपमान—कांपने वाला
आकुल—व्याकुल
अवध्य—वध करने अयोग्य
आलोचित—देखा हुवा
रक्त—लाल
संजात—होगया, हुवा हुवा
निर्मल—साफ
आगंतव्य—आनेयोग्य, आना
चलित—चला हुआ
निःसारित—हटाया हुवा
चूर्णित—चूरा किया हुवा
अनुष्ठित—किया हुवा
उद्यत—तैयार, ऊंचा किया हुव
युक्त—योग्य

इतर-शब्द

कदाचित्—किसी समय	नातिदूरम्—पास
क्व—कहां	प्रत्यहं—हर दिन
वारान्तरं—दूसरे दिन	कुतः—कहां से
अंतिकं—पास	भवदन्तिकं—आपके पास
अन्यथा—दूसरे प्रकार	यथार्थ—सत्य
अज्ञानतः—अज्ञान से	ज्ञानतः—ज्ञान से

क्रिया

दर्शितवान्—बताया, बतानेवाला	प्रणम्य—नमस्कार करके
उच्यताम्—कहिये, कहो	गच्छ—जा
यामः—जाते हैं	क्षम्यताम्—क्षमा कीजिये
कुर्मः—करेंगे	विधास्यते—करेगा
प्रतिज्ञाय—प्रतिज्ञा करके	विनश्यति—नाश होता है
आरुह्य—चढ़कर	विषीदत—दुःख करो
संवादयामि—बुलवावूंगा	

वाक्य

संस्कृत	भाषा
(१) नृपतिर्भूमिं रक्षति।	राजा भूमि की रक्षा करता है।
(२) वृक्षे खगाः कूजन्ति।	वृक्ष के ऊपर पक्षी शब्द करते हैं।

१ नृपतिः+भूमिं।

(३) पर्वतस्य शिखरे मृगा[2]श्चरन्ति।	पर्वत के शिखर पर हरिण घूमते है।
(४) उद्याने बाला[3]श्चरन्ति।	बाग में लड़के घूमते हैं।
(५) मार्गे रथा[4]श्चरन्ति।	मार्ग में रथ घूमते हैं।
(६) ततो नरपति[5]रतिदूरं गत्वा वनं दर्शितवान्।	पश्चात् राजा ने बहुत दूर जाकर अरण्य बताया।
(७) अनंतरं रामस्वरूपो[6]ऽचिंतयत्।	बाद रामस्वरूप सोचने लगा।
(८) शृणुत, मया[7]द्ये[8]ष लेखो[9] लेखनीयः।	सुनिये, मैंने आज यह लेख लिखना है।
(९) तथा[10]ऽनुष्ठिते[11]ऽश्वपति[12]र्नल[13]मुवाच।	वैसा करने पर अश्वपति नल को बोला।
(१०) शृणु, एते ग्रामरक्षका[14]स्त्वया हताः। एतत्[15]त्वया नै[16]व साधु कृतम्।	सुनो, ये ग्राम के रक्षक तूने मारे हैं। यह तूने नहीं अच्छा किया।

---

२ मृगाः+चरन्ति। ३ बालाः+चरन्ति। ४ रथाः+चरन्ति। ५ नरपतिः+अति। ६ स्वरूपः+अचिंत०। ७ मया+अद्य। ८ अद्य+एषः। ९ लेखः+लेख०। १० तथा+अनुष्ठि०। ११ अनुष्ठिते+अश्व०। १२ पतिः+नलं। १३ नलं+उवाच। १४ रक्षकः+त्वया। १५ एतत्+त्वया। १६ न+एव।

[६] व्यपदेशे अपि सिद्धिः स्यात् ।

(१) कदाचित् वर्षासु अपि वृष्टेः अभावात् तृषार्तो गजयूथो यूथपतिं आह । "नाथ को[1]ऽभ्युपायोऽस्माकं जीवनाय ।

(२) अस्ति अत्र क्षुद्र–जन्तूनां निमज्जन-स्थानम् । वयं तु निमज्जना[2]ऽभावाद् अंधा इव संजाताः ।

(३) क यामः । किं कुर्मः ।" ततो हस्तिराजो नातिदूरं गत्वा निर्मलं ह्रदं दर्शितवान् ।

(४) ततो दिनेषु गच्छत्सु तत्तीरा[3]वस्थिताः क्षुद्र-शशकाः गजपादा[4]हतिभिः चूर्णिताः ।

[६] नाम में भी सिद्धि होगी ।

(१) किसी समय बर्सात में भी वृष्टी न होने के कारण प्यास से दुःखित हाथीयों के समूह ने समुदाय के राजा से कहा । 'हे स्वामिन्' कौनसा उपाय है हमारे जीने के लिये

(२) है यहां छोटे प्राणियों के लिये स्नान का स्थान । हम तो स्नान न होने से अंधे के समान होगये हैं ।

(३) कहां जांय । क्या करें ।"
पश्चात् हाथियों के राजा ने समीप जाकर एक स्वच्छ तालाब बताया ।

(४) बाद दिन व्यतीत होने पर उस किनारे पर रहने वाले छोटे खरगोश हाथीयों के पांव के आघात से चूर्ण हुवे ।

---

१ कः + अभि + उपायः + अस्माकं । २ मज्जन + अभाव । ३ तत्+तीर+अवस्थित । ४ पाद+आहतिः ।

(५) अनंतरं शिलीमुखो नाम शशकः चिंतयामास । अनेन गजयूथेन पिपासाकुलेन[6] प्रत्यहं[7] अत्र आगन्तव्यम् ।

(५) बाद शिलीमुख नामक एक ससा सोचने लगा । इस प्यास से त्रस्त हाथियों के समूहने हर दिन यहां आना है।

(६) अतो विनश्यति अस्मत्कुलम् । ततो विजयो नाम वृद्धशशको अवदत ।

(६) इस लिये नाश होता है हमारा परिवार । बाद विजय नामक बुड्ढा ससा बोला ।

(७) 'मा विषीदत । मया अत्र प्रतीकारः कर्तव्यः' । ततोऽसौ[8] प्रतिज्ञाय चलितः ।

(७) 'न दुःख कीजिये मैंने यहां प्रतिबंध करना है'। पश्चात् यह प्रतिज्ञा करके चला ।

(८) गच्छता च तेन आलोचितम् । 'कथं मया गजयूथस्य समीपे स्थित्वा वक्तव्यम् । यतः गजः स्पृशन् अपि हन्ति । अतो अहं पर्वतशिखरं आरुह्य यूथनाथं संवादयामि ।

(८) जाते हुवे उसने सोचा । 'किस प्रकार मैं ने हाथियों के समूह के पास रहकर बोलना । क्योंकि हाथी स्पर्श करके ही मारता है । इस कारण मैं पहाड़ के चोटी पर चढ़ कर हाथियों के समुदाय के स्वामी के साथ बोलूंगा ।

(९) तथा अनुष्ठिते यूथनाथ उवाच । 'कः त्वम् । कुतः समायातः' । स ब्रूते । 'शशको[9]

(९) वैसा करने पर समूह का स्वामी बोला ।'कौन तू । कहां से आया ।' वह बोलता है ।

६ पिपासा+आकुल। ७ प्रति+अहन्। ८ ततः+असौ। ९ शशकः+अहं।

ऽहम् । भगवता चंद्रेण भव-
दन्तिकं प्रेषितः' ।

(१०) यूथपतिः आह । 'कार्यं उच्यताम्'। विजयो ब्रूते ।'उद्यतेषु अपि शस्त्रेषु दूतः अन्यथा न वदति । सदा एव अवध्य-भावेन यथार्थस्य एव वाचकः।

(११) तद् अहं तदाज्ञया ब्रवीमि । शृणु, यद् एते चंद्र-स[1]रो-रक्षकाः शशकाः त्वया निःसारिताः तत् न युक्तं कृतम् ।

(१२) यतः ते चिरं अस्माकं रक्षिताः । अत एव मे शशांक इति प्रसिद्धिः ।' एवं उक्तवति दूते यूथपतिः भयाद् इदं आह।

'खरगोश मैं (हूं) । भगवान चंद्र ने आप के पास भेजा ।'

(१०) समुदाय के राजा ने कहा । 'काम कहिए' । विजय बोलता है । 'शस्त्र खड़े होने पर भी दूत असत्य नहीं बोलता । हमेशा ही अवध्य होने के कारण सत्य का ही बोलने वाला (होता है) ।'

(११) तो मैं उसकी आज्ञा से बोलता हूं । सुन, जो ये चंद्र के तालाव के रक्षक खरगोश तूंने हटाये (मारे) वह नहीं ठीक किया ।

(१२) क्योंकि वे बहुसमय से हमारे रखे हुवे (रक्षित) हैं । इस लिये मेरी शशांक ऐसी प्रसिद्धि है ।' इस प्रकार दूत के बोलने पर हाथियों का पति भय से यह बोला ।

१-सरः+रक्षकाः ।

(१३) 'इदं अज्ञानतः कृतम् । पुनः न गमिष्यामि' । 'यदि एवं तद् अत्र सरसि कोपात् कंपमानं भगवंतं शशांकं प्रणम्य प्रसाद्य गच्छ' ।

(१३) 'यह अनजानसे किया। फिर नहीं जाऊंगा' । 'अगर ऐसा है तो यहां तालाब में गुस्से से कांपने वाले भगवान् चंद्रमा को प्रणाम करके, तथा प्रसन्न करके जा' ।

(१४) ततो रात्रौ यूथपतिं नीत्वा जले चंचलं चंद्र-बिंबं दर्शयित्वा यूथपतिः प्रणामं कारितः ।

(१४) पश्चात् रात्री में हाथी समूह के राजा को लेजा कर जल में हिलने वाली चंद्र की छाया बतला कर समूह पति से नमस्कार करवाया ।

(१५) उक्तं च तेन । 'देव, अज्ञानाद् अनेन अपराधः कृतः। ततः क्षम्यताम् । न एवं वारान्तरं विधास्यते' । इति उक्त्वा प्रस्थितः ।

हितोपदेशः

(१५) बोला वह । 'हे देव अनजान से इसने अपराध किया। इसलिये क्षमा कीजिये । नहीं इस प्रकार दूसरे दिन करेगा । ऐसा बोल कर चल पड़ा ।

समास—विवरणम् ।

(१) तृषार्तः————तृषया आर्तः तृषार्तः । पिपासाकुल इत्यर्थः ।

(२) यूथपतिः————यूथस्य पतिः यूथपतिः । यूथनाथः ।

(३) निमज्जनस्थानम्——निमज्जनाय स्थानं निमज्जनस्थानम् ।

(४) तत्तीरावस्थिताः——तस्य तीरं तत्तीरं । तत्तीरे अवस्थिताः तत्तीरावस्थिताः ।

(५) अस्मत्कुलम्———अस्माकं कुलं अस्मत्कुलम् ।

(६) चंद्रसरोरक्षकाः——चंद्रस्य सरः चंद्रसरः । चन्द्रसरसः रक्षकाः चंद्रसरो रक्षकाः ।

(७) अज्ञानं————न ज्ञानं अज्ञानम् ।

(८) वारान्तरं————अन्यः वारः वारान्तरम् ।

(९) देशान्तरं——— ———अन्यः देशः देशान्तरम् ।

(१०) ग्रामान्तरं————अन्यः ग्रामः ग्रामान्तरम् ।

———:०:———

१० दशमः पाठः ।

इन्नतः पुल्लिंगः 'करिन्' शब्दः

(१)	करी	करिणौ	करिणः
सं०	(हे) करिन्	(हे) ,,	(हे) ,,
(२)	करिणम्	,,	,,
(३)	करिणा	करिभ्याम्	करिभिः
(४)	करिणे	,,	करिभ्यः
(५)	करिणः	,,	,,
(६)	,,	करिणोः	करिणाम्
(७)	करिणि	,,	करिषु

इस प्रकार 'हस्तिन् (हाथी), दण्डिन् (दण्डी), शृंगिन् (सींग वाला), चक्रिन् (चक्र वाला), स्रग्विन् (मालाधारी) इत्यादि शब्द चलते हैं। पाठकों को चाहिये कि वे इन शब्दों को चलाकर अपना अभ्यास दृढ़ करें।

वस्वन्तः पुल्लिंगो 'विद्वस्' शब्दः

(१)	विद्वान्	विद्वांसौ	विद्वांसः
सं०	(हे) विद्वन्	(हे) ,,	(हे) ,,
(२)	विद्वांसं	,,	विदुषः
(३)	विदुषा	विद्वद्भ्याम्	विद्वद्भिः
(४)	विदुषे	,,	विद्वद्भ्यः
(५)	विदुषः	,,	,,
(६)	,,	विदुषोः	विदुषाम्
(७)	विदुषि	,,	विद्वत्सु

इस शब्द के समान 'तस्थिवस् (खड़ा), सेदिवस् (बैठा हुवा), शुश्रुवस् (सुनने वाला), दाश्वस् (दाता), मीढ्वस् (सिंचक), जगन्वस् (संचारक), इत्यादि वस्वंत शब्द चलते हैं। जिनके अंत में (वस्) प्रत्यय होता है उनको वस्वंत शब्द कहते हैं।

संस्कृत में एक शब्द के समान ही कई शब्दों के रूप हुवा करते हैं। जब पाठक एक शब्द को स्मरण करेंगे तब उनको उसके समान शब्द के रूप बनाने की शक्ति आजायगी। इसी प्रकार कई एक पुल्लिंगी शब्दों के रूप बनाने में पाठक इस समय

तक योग्य होगये हैं। अकारान्त, इकारान्त, उकारान्त, ऋकारान्त, अन्नन्त, इन्नन्त, वस्वन्त, मान्त इतने पुल्लिंगी शब्द पाठकों को स्मरण होचुके हैं। और इनके समान शब्दों के रूप अब पाठक बना भी सकते हैं। पुल्लिंगी शब्दों में मुख्य मुख्य अब दो चार शब्द देने हैं। तत्पश्चात् कुछ सर्वनाम के रूप बताकर, नपुंसकलिंगी शब्दों के रूप दिखलाने हैं। इसलिये पाठकों से सविनय निवेदन है कि वे देरी की पर्वाह न करते हुवे हर एक पाठ को पक्का बना कर आगे बढ़ें, नहीं तो आगे ऐसा समय आवेगा कि न तो पिछला स्मरण है और न आगे कदम बढ़ सकता है।

संस्कृत स्वयं शिक्षक में जो पढ़ाई का क्रम दिया है वह बहुत ही सुगम है, जो पाठक प्रत्येक पाठ लक्ष्य पूर्वक दस बार पढ़ेंगे उनको सब बातें कण्ठ हो जायगीं, इसमें कोई संदेह नहीं। परन्तु पाठकों के पुरुषार्थ की भी आवश्यकता है। उसके बिना कार्य नहीं चलेगा। अस्तु। अब कुछ व्याकरण के नियम देते हैं:—

विसर्गः

१६ नियम—क, ख, प, फ के पूर्व जो विसर्ग आता है वह जैसा का वैसा ही रहता है। जैसेः—दुष्टः पुरुषः। कृष्णः कसः। गतः खगः। मधुरः फलागमः।

१७ नियम—पदान्त के विसर्ग का च, छ के पूर्व श् बनता है, ट, ठ के पूर्व ष् बनता है, और त, थ के पूर्व स् बनता है। जैसाः—

पूर्णः + चंद्र — पूर्णश्चंद्रः

हरेः + कुसुम् — हरेश्कुसुम

रामः + तत्र — रामस्तत्र

कवेः + टीका — कवेष्टीका

१८ नियम—पदान्त के विसर्ग के सन्मुख 'श, ष, स,' आने से, विसर्ग का श, ष, स, बनता है, परन्तु किसी समय विसर्ग ही कायम रहता है। जैसेः—

धनंजयः + सर्वः = धनंजयस्सर्वः (अथवा) धनंजयः सर्वः

देवाः + षट् = देवाष्षट्। (,,) देवाः षट्

श्वेतः + शंखः = श्वेतश्शंखः (,,) श्वेतः शंखः

ये नियम अच्छी प्रकार ध्यान में आने के पश्चात् निम्न लिखित शब्दों को स्मरण कीजियेः—

शब्द—क्रियापद

निश्चिक्युः—निश्चय किया (उनोंने)	रचयामास—रचा (वह)
त्रुट्यन्ति—टूटेंगे (वे)	क्लिश्नीमः—तखलीफहोतीहै(हम)
ऊचुः—कहा (उनोंने)	श्रमित्वा—थककर
कुर्यात्—करें	उन्मीलित—खुले
चर्वामः—चर्वण करें (हम)	विदध्मः—(हम) करते हैं
अशुष्यन्—दुबले होगये (वे) सूख गये	श्राम्यामः—थकते हैं
संगृह्णीमः—संग्रह करते हैं (हम)	अकृत्वा—न करके
	अमंत्रयन्त—विचार किया
	संप्रधार्य—देखकर

शब्द—पुल्लिंगी ।

दण्डिन्—संन्यासी, दण्डधारी	व्ययः—खर्च
शृंगिन्—सींग जिसको है	करिन्—हाथी
चक्रिन्—चक्रधारी	हस्तिन्— ,,
स्रग्विन्—मालाधारी	बलिः—राजा का कर
अवयवः—शरीर का हिस्सा	भागधेयः— ,,
अमात्यः—दिवाण साहब	आयासः—परिश्रम
तस्करः—चोर	आत्मन्—अपना, आत्मा
ग्रासः—कौर, टुकड़ा	कृमिः—कीड़ा
दन्तः—दांत	उपद्रवः—कष्ट
भंगः—टूटना	अनुरोधः—प्रतिबंध
अतिक्रमः—उल्लंघन	आवासः—निवास स्थान
सङ्कोचः—मिटना	प्रमाथः—अन्याय

स्त्रीलिंगी ।

मर्यादा—हद्द	अंगुलिः—अंगुली
राजधानी—राजा का नगर	नगरी—शहर



नपुंसकलिंगी ।

उदरं—पेट	लुंठनं—लूट
सुखं—सुख	भर्म—भरना
द्युम्नं—धन, शक्ति	दुःखं—तकलीफ

अन्य ।

अद्ययावत्—आज तक	सशपथम्—शपथपूर्वक
अद्यप्रभृति—आज से	व्ययोपयोगार्थं—खर्च के लिये

वाक्य ।

संस्कृत	भाषा
(१) वानरा[1] वृक्षे तिष्ठन्ति ।	बंदर वृक्षपर ठहरते हैं ।
(२) सर्पो वनमगच्छत्[2] ।	सांप वन में गया ।
(३) मम शरीरं ज्वरेण कृशं जातम् ।	मेरा शरीर ज्वर से कमजोर हुवा है ।
(४) कुमारस्य एकः शुचिः करो[3]ऽस्ति तथा अन्यो[4] न ।	लड़के का एक हाथ शुद्ध है तथा दूसरा नहीं ।
(५) मया सह तौ कुमारौ नगरं गच्छतः ।	मेरे साथ वे कुमार शहर जाते हैं ।
(६) अहं तत्र यामि यत्र पंडिताः वसंति	मै वहां जाता हूं जहां पंडित लोग रहते हैं ।
(७) यस्य बुद्धिर्[6]बलमपि तस्यैव	जिसकी बुद्धि (होती है) शक्ति भी उसी की है ।
(८) खगा[7] वृक्षाड्[8]डयन्ते	पक्षि वृक्ष से उड़ते हैं ।
(९) तस्य हस्तान्[9]माला पतिता	उसके हाथों से माला गिरी है ।
(१०) तत्र नैव गमिष्यामि	वहां नहीं जाउंगा ।

---

१ वानराः+वृक्षे । २ वनं+अगच्छत । ३ करः+अस्ति । ४ अन्यः+न । ५ पंडिताः+वसन्ति । ६ बुद्धिः+बलं । ७ खगाः+वृक्षात् । ८ वृक्षात्+डयन्ते । ९ हस्तात्+माला ।

[७] उदराऽवयवानाम् कथा ।

(१) एकदा हस्तपादाद्यवयवाः व्यचिंतयन् । यद्[1] वयं श्राम्यामः संगृह्णीमश्च[2] ।

(२) इदं उदरं आयासान् अकृत्वा सुखं खादति ।

(३) यद् अद्ययावज्जातं[3] तद् अस्तु नाम । अद्य प्रभृति इदं अमित्वा आत्मनो[4] भर्म कुर्यात् न अस्माकं अनेन प्रयोजनम् ।

(४) एवं सशपथं सर्वे निश्चिक्युः । हस्तौ ऊचतुः । यदि अस्य उदरस्य अर्थे अंगुलि अपि चालयेव, त्रुटयन्तु नो[5] अखिलांगुलयः ।

[७] पेट और अवयवों की कथा ।

(१) एक समय हाथ पांव आदि अवयव सोचने लगे । कि हम थकते हैं और (भोजन आदि) इकट्ठा करते हैं ।

(२) परन्तु यह पेट श्रम न करके आराम से खाता है ।

(३) इसलिये आज तक जो हुवा सो हुवा । आज से यह (पेट) श्रम करके अपना भरण-पोषण करेगा । नहीं हमारा इस से (कोई) वास्ता ।

(४) इस प्रकार शपथ पूर्वक सबने निश्चय किया । हाथ बोलने लगे । अगर इस पेट के लिये अंगुलि भी चलायेंगे, टूट जांय हमारी सब अंगुलियां ।

---

१ यत्+वयं । २ गृह्णीमः+च । ३ यावत्+जातं । ४ आत्मनः+भर्म । ५ नः+अखिल+अंगुलयः ।

(५) मुखं उवाच । अहं शपथं करोमि । यदि अस्य अर्थं एकं अपि ग्रासं गृह्णामि, कृमयः आक्रमन्तु माम् ।

(६) दन्ता ऊचुः । यदि अस्य कृते ग्रासं चर्वामो भंगः उपेतु अस्मान् ।

(७) एवं शपथेषु कृतेषु यो-निश्चयः कृतस्तस्य पालनं आवश्यकं बभूव ।

(८) एवं जाते सर्वे अवयवाः अशुष्यन् । अस्थिचर्म—मात्रं अवाशिनद् ।

(९) तदा "न साधु कृतं अस्माभिः" इति सर्वेषां चक्षुषी उन्मीलिते । उदरेण विना वयं अगतिकाः ।

(५) मुख बोला । मैं शपथ करता हूं । अगर इसके लिये एक भी कौर लूंगा, कीड़े चले आय मेरे (पास) ।

(६) दांत बोले । अगर इसके लिये (एक) टुकड़ा (भी) चर्वण करेंगे तो टूटना आजाय हमारे पास ।

(७) इस प्रकार शपथ कर जो निश्चय किया उसका पालन अवश्य हुवा ।

(८) इस प्रकार होने पर सब अवयव सूख गये । हड्डी चमड़ा ही केवल शेष रहा ।

(९) तब 'नहीं ठीक किया हमने' ऐसे सब के आंख खुल गये । पेट के बिना हम अशरण हैं ।

---

६ दन्ताः+ऊचतु । ७ चर्वामः+भंगः । ८ कृतः+तस्य ।

(१०) तत् स्वयं न श्राम्यति। परं यावद् वयं तस्य पोषं विदध्मः तावद् अस्माकं पोषणं भवति इति सर्वे सम्यग् जज्ञिरे।

(११) तात्पर्यम्—कस्मिंश्चित् काले एकस्यां राजधान्यां चिर-युद्धप्रसंगात् राज्ञः कोशागारे द्युम्नसंकोचे समुत्पन्ने स राजा प्रजाभ्यो बलिं जग्राह।

(१२) तत् प्रजा नाभिमेनिरे। ता 'उपद्रवोऽयं' इति गणयित्वा नगराद् बहिः आवासं रचयामासुः।

(१३) तत्र वर्तमानाभिः ताभिः संहतिः कृता। ता मिथो अमं त्रयन्त। वयं क्लिश्नीमः। राजा तु अस्मत् किमिति मुधा गृह्णाति।

(१०) (वह पेट) स्वयं नहीं श्रम करता। परन्तु जब हम उसका पोषण करते हैं तब हमारा पोषण होता है ऐसा सबने ठीक प्रकार जान लिया।

(११) तात्पर्य——किसी एक समय में एक राजधानी में हमेशा युद्ध होने के कारण राजा के खजाने में पैसा कम होने पर उस राजा ने प्रजाओं से कर लिया।

(१२) वह प्रजा ने माना नहीं। वे 'कष्ट यह (है)' ऐसा मान-कर शहर के बाहर रहने का (गृहादि) रचने लगे।

(१३) वहां रहते हुये उनाने एकता की। वे परस्पर सलाह किया करते थे। हम क्लेश पाते हैं। राजा हम से किस लिये व्यर्थ (कर) लेता है।

---

१ उपद्रवः+अयं।

(१४) अतः परं न वयं राज्ञे किं अपि दास्यामः । इति सर्वा निश्चिक्युः ।

(१५) तासां एवं निर्णयं संप्रधार्य राजा ऽऽत्मनो[10]ऽमात्यं तान् प्रति प्रेषयामास ।

(१६) सो[11]ऽमात्यः प्रजाभ्यः 'उदरावयवानां कथां' निवेद्य तासां आनुकूल्यं प्राप । राजा प्रजाश्च[12] सुखं अन्वभवन् ।

(१७) यदि वयं राज्ञे भागधेयं न दद्याम, तस्य व्ययोपयोगाय धनं न शिष्यते । एवं समापतिते तस्करा[13] बद्धपरिकरा दिवाऽपि लुण्ठनं विधास्यन्ति ।

(१८) एको ऽन्यं[14] न अनुरोत्स्यते । मर्यादातिक्रमः प्रमाथाश्च[15] उद्भविष्यन्ति । राजा प्रजाश्च समं एव नशिष्यन्ति ।

(१४) इसके बाद नहीं हम राजा के लिये कुछ भी देंगे । ऐसा सब ने निश्चय किया ।

(१५) उनका यह निर्णय देखकर राजा ने अपना मंत्री उनके पास भेजा ।

(१६) उस मंत्री ने प्रजाओं को 'पेट तथा अवयवों की कथा' सुनाकर उनकी अनुकूलता प्राप्त करली । राजा तथा प्रजा सुख को अनुभव करने लगे ।

(१७) अगर हम राजा के लिये कर न देंगे, उसके खर्च के लिये धन नहीं बचेगा । इस प्रकार होने पर चोर कटिबद्ध होकर दिन में भी लूटा करेंगे ।

(१८) एक दूसरे को नहीं मानेगा । मर्यादा का उल्लंघन तथा कष्ट होंगे । राजा व प्रजा एक ही समय नाश होंगे ।

---

१० राजा+आत्मनः। ११ सः+अमात्यः।१२ प्रजाः+च ।१३ तस्कराः+बद्धपरिकराः+दिवा+अपि । १४ एकः+अन्यं । १५ प्रमाथाः+च ।

समास—विवरणम् ।

(१) हस्तपादाद्यवयवाः——हस्तश्च पादश्च हस्तपादौ। हस्तपादौ आदी येषां ते हस्तपादादयः। हस्तपादादय अवयवाः।

(२) आनुकूल्यं————अनुकूलस्य भावः आनुकूल्यम्।

(३) बद्धपरिकराः————बद्धाः परिकरा यैः ते बद्धपरिकराः।

(४) मर्यादातिक्रमः————मर्यादाया अतिक्रमः मर्यादातिक्रमः।

(५) सशपथं————शपथेन सह सशपथम्।

परीक्षा के प्रश्न ।

(पाठकों को उचित है कि वे इन प्रश्नों का उत्तर देकर आगे बढ़ें। अगर उत्तर न दे सकें तो पिछला हिस्सा दुबारा पढ़ें)

(१) निम्न शब्दों के सब विभक्तियों के रूप लिखिये :—

हृषीकेशः। कविः। क्रतुः। कर्तृ। युवन्। दण्डिन्। दाश्वस्। राम्रः। भूपः। भूपतिः। यशस्विन्। स्रग्विन्।

(२) निम्न शब्दों के सब विभक्तियों के एक वचन के रूप झटपट् लिखिये :—

आनंदः। केशः। रविः। निधिः। विष्णुः। जिष्णुः। भर्तृ। गंतृ। चक्रिन्। दण्डिन्। विद्वस्। जगन्वस्।

(३) निम्न शब्दों का षष्ठी का बहुवचन लिखिये :—

यशपालः। गंगाधरः। पाठकः। वाचकः। दर्शकः। शंभुः। वायुः। अग्निः। भूपतिः। हस्तः। कर्णः। करिन्। हस्तिन्।

(४) निम्न शब्दों के संधि कीजिये :—

दुग्धं+दर्शय	विद्यां+पठ
सत्यं+पश्य	अश्वं+चालय
कृत्यं+कुरु	नित्यं+धारय
नगरं+गच्छ	धर्मं+चर

(५) निम्न जुड़े हुवे संधियों को खोलकर लिखिये :—

ग्रामरक्षकास्त्वया निहताः ।

गृहाद्बहिर्बालाश्चरन्ति ।

अद्यैष रथो योजनीयः ।

अश्वपतिर्मल्लमुवाच ।

एतद्दृष्टस्त्वयाऽधुना ।

(६) निम्न वाक्यों का संस्कृत बनाइये :—

मैं सवेरे उठकर संध्या करता हूं ।

जो निश्चय किया उसका पालन करना अवश्य हुवा ।

वह झूठ नहीं बोलता ।

भूखे लोगों ने अवश्य आना है । (क्षुधाकुलः=भूखा)

सुनो जो अब मैं बोलता हूं ।

(७) मुनि और मूषक की कथा तीन वार पढ़कर संस्कृत में लिखिये :—

(८) निम्न समासों का विवरण लिखिये :—

वारान्तरम् । सबंधुः । सशपथं । देशान्तरं । वस्त्राच्छादितः । मंत्रद्रष्टा । दुग्धपानं । अश्वपृष्ठं । धर्मचर्या । अनुकूलता ।

११ एकादशः पाठः ।

तकारान्तः पुल्लिंगो 'धीमत्' शब्दः

(१)	धीमान्	धीमन्तौ	धीमन्तः
सं०	(हे) धीमन्	(हे) ,,	(हे) ,,
(२)	धीमन्तम्	,,	धीमतः
(३)	धीमता	धीमद्भ्याम्	धीमद्भिः
(४)	धीमते	,,	धीमद्भ्यः
(५)	धीमतः	,,	,,
(६)	,,	धीमतोः	धीमताम्
(७)	धीमति	,,	धीमत्सु

'धीमत्' शब्द 'मत्' प्रत्यय वाला है। 'मत्' प्रत्यय वाले तथा 'वत्, यत्' प्रत्यय वाले शब्द इसी प्रकार चलते हैं।

मत् प्रत्यय वाले शब्द—श्रीमत्, बुद्धिमत्, आयुष्मत्, इ०

वत् प्रत्यय वाले शब्द—भगवत, मघवत्, (सर्वनाम) भवत्, यावत, तावत्, एतावत् इ०

यत् प्रत्यय वाले शब्द—कियत्, इयत् इ०

ये सब शब्द पुल्लिंग में धीमत् शब्द के समान ही चलते हैं। पाठकों को उचित है कि वे इस शब्द की ओर विशेष ध्यान दें। संस्कृत में मत्, वत्, प्रत्यय वाले शब्द बहुत हैं और उनका उपयोग भी बारंबार होता है। इसलिये इन शब्दों को ठीक स्मरण रखना चाहिये। अगर पाठक कंठ करने की अपेक्षा शब्दों की

विशेषता की ओर ध्यान देंगे और उस विशेषता को ध्यान में रक्खेंगे तो उनका कार्य बहुत शीघ्र और सुगमता पूर्वक होगा।

कौनसी विभक्ति के कौन से वचन के रूप समान होते हैं। कौन से विभक्ति के वचन में किस प्रकार का विशेष कहां उत्पन्न होता है यही बातें स्मरण रखने की होतीं हैं। जहां जहां समान रूप आते हैं वहां वहां इस पुस्तक में (,,) ऐसा चिन्ह दिया हुवा है। जिस से पता लगेगा कि वहां का रूप पूर्व विभक्ति के समान ही है। अस्तु।

तकारान्तः पुल्लिंगो 'महत्' शब्द

(१)	महान	महान्तौ	महान्तः
सं०	(हे) महन्	(हे) ,,	(हे) ,,
(२)	महान्तं	,,	महतः
(३)	महता	महद्भ्याम्	महद्भिः
(४)	महते	,,	महद्भ्यः
(५)	महतः	,,	,,
(६)	,,	महतोः	महताम्
(७)	महति	,,	महत्सु

पूर्वोक्त श्रीमत् और महत् शब्द में विशेष यह है कि, श्रीमत् शब्द के (प्रथमा का एक वचन छोड़कर) प्रथमा, संबोधन और द्वितीया के रूपों में म का मा नहीं होता है। परन्तु महत् शब्द के रूपों में ह का हा होता है। जैसा:—

(१)	धीमान	धीमन्तौ	धीमन्तः—प्रथमा
(२)	महान	महान्तौ	महान्तः—प्रथमा

इसी प्रकार अन्यान्य विशेष पाठकों को जानने चाहिये। अब कुछ संधि के नियम देते हैं :—

१९ नियम—'सः' शब्द के अन्त का बिसर्ग, अ के सिवाय कोई अन्य वर्ण सन्मुख आने पर, लुप्त हो जाता है। जैसाः—

सः	+	आगतः	=	स आगतः
सः	+	गच्छति	=	स गच्छति
सः	+	श्रेष्ठः	=	स श्रेष्ठः

'सः' के सामने अ आने से दोनों का 'सोऽ' बनता है। (देखो नियम ११ पाठ ७ पृष्ठ ७५) जैसा :—

सः	+	अगच्छत्	=	सोऽगच्छत्
सः	+	अवदत्	=	सोऽवदत्
सः	+	अस्ति	=	सोऽस्ति

२० नियम—जिस के पूर्व अकार है ऐसे पदान्त के विसर्ग के पश्चाद् मृदु व्यंजन आने से, उस अकार और विसर्ग का 'ओ' बन जाता है। जैसाः—

मनुष्यः	+	गच्छति	=	मनुष्यो गच्छति
अश्वः	+	मृतः	=	अश्वो मृतः
पुत्रः	+	लब्धः	=	पुत्रो लब्धः
अर्थः	+	गतः	=	अर्थो गतः

२१ नियम—जिस के पूर्व आकार है ऐसा पदान्त का विसर्ग, उसके सन्मुख स्वर अथवा मृदुव्यंजन आने से, लुप्त हो जाता है। जैसाः—

मनुष्याः	+	अवदन्	=	मनुष्या अवदन्
असुराः	+	गताः	=	असुरा गताः
देवाः	+	आगताः	=	देवा आगताः
वृक्षाः	+	नष्टाः	=	वृक्षा नष्टाः

२२ नियम—अ-आ को छोड कर अन्य स्वरों के बाद आने वाले विसर्ग का र् बनता है,अगर उनके सन्मुख स्वर अथवा मृदुव्यंजन आया हो। जैसाः—

हरिः	+	अस्ति	=	हरिरस्ति
भानुः	+	उदेति	=	भानुरुदेति
कवेः	+	आलेख्यम्	=	कवेरालेख्यम्
ऋषिपुत्रैः	+	आलोचितम्	=	ऋषिपुत्रैरालोचितम्
देवैः	+	दत्तम्	=	देवैर्दत्तम्
हरेः	+	मुखम्	=	हरेर्मुखम्
हस्तैः	+	यच्छति	=	हस्तैर्यच्छति

विसर्ग के पूर्व अ अथवा आ आने पर नियम २० तथा २१ के अनुसार संधि होंगे।

२३ नियम—र् व्यंजनके सामने र् व्यंजन आने से पहिले र का लोप होता है और उस लुप्त रकार का पूर्व स्वर दीर्घ होता है। जैसाः—

ऋषिभिः	+	रचितम्	=	ऋषिभी रचितम्
भानुः	+	राधते	=	भानू राधते
शस्त्रैः	+	रक्षितम्	=	शस्त्रै रक्षितम्
हरेः	+	रक्षक	=	हरे रक्षकः

पाठकों को चाहिये कि वे इन संधि नियमों को बारंबार पढकर ठीक ठीक स्मरण रखें। यद्यपि संधि न किया हुवा संस्कृत अशुद्ध नहीं समझा जाता, तथापि प्राचीन पुस्तकें पढने के लिये संधि नियमों के परिज्ञान के सिवाय काम नहीं चल सकता। तथा नियमानुसार प्रगल्भ संस्कृत बोलने के लिये स्थान स्थान पर संधि करने की आवश्यकता होती है। इसलिये पाठकों को संधि नियमों की ओर दुर्लक्ष्य नहीं करना चाहिये।

शब्द—पुल्लिंगी।

चरन्—घूमने वाला

कुशः—दर्भ, घांस

लोभः—लालच

अर्थः—द्रव्य, पैसा

एतावान्—इतना

विश्वासभूमिः—विश्वास का स्थान

दाराः—स्त्री (यह शब्द बहुवचन में चलता है)

पान्थः—प्रवासी, पथिक

संदेहः—संशय

आत्मसंदेहः—अपने विषय में संशय

लोकापवादः—लोकों में निंदा

भवान्—आप

विरहः—रहित होना

गतानुगतिकः—अंध परंपरा से चलने वाला
वधः—हनन
वंशः—कुल
मूर्ध्नि—शिर में

यत्नः—प्रयत्न
महापंकः—बड़ा कीचड़
पंकः—कीचड़
मूर्धन्—शिर

स्त्रीलिंगी।

प्रवृत्तिः—प्रयत्न, पुरुषार्थ
यौवनदशा—जवानी

भार्या—स्त्री धर्मपत्नी
दशा—अवस्था

नपुंसकलिंगी।

भाग्यं—सुदैव
कंकणं—चूड़ी (हाथों में डालने वाली)
शीलं—स्वभाव

सरः—तालाव
तीरं—किनारा
अर्जनं—कमाना
ललाटं—शिर
तद्वचः—उसका भाषण

विशेषण।

समीहित—उत्तम
अनिष्ट—जो इष्ट नहीं
भद्र—कल्याण
वंशहीन—जिसका कुल मरा है
अधीत—अध्ययन किया हुआ

आलोचित—देखा
विधेय—करने योग्य
मारात्मक—हिंसा करने वाला
गलित—गला हुआ
हस्तस्थ—हाथ में रखा हुआ

प्रतीत—विश्वासित	दुर्गत—बुरी अवस्था में फंसा हुआ
धृत—धरा हुवा	अक्षम—असमर्थ
	दुर्वृत्त—दुराचारी
आदिष्ट—आज्ञापित, आज्ञा की	दुर्निवार—दूर करने के लिये कठिन
निमग्न—डूबा हुवा	सयत्न—प्रयत्नशील

अन्य ।

अविचारितं—विचार न करके	अहह—अरेरे
तुभ्यं—तुमको	प्राक्—पहिले
किंतु—परन्तु	प्रकाशं—बाहर

क्रिया ।

प्रसार्य—फैला कर	पलायितुं—दौड़ने के लिये
उपगम्य—पास जाकर	प्रोज्झितुं—फैंकने के लिये
गृह्यतां—लीजिये	आसम्—(मैं) था
संभवति—संभव है	चरतु—करे, चलाय
निरूपयामि—देखता हूं	उत्थापयामि—उठाता हुं
अपश्यं—देखा	

[८] विप्र-व्याघ्रयोः कथा।

(१) अहमेकदा[1] दक्षिणारण्ये चरन् अपश्यम्। एको[2] वृद्ध-व्याघ्रः स्नातः कुशहस्तः सरस्तीरे ब्रूते।

(२) भो भोः पान्थाः। इदं सुवर्ण-कंकणं गृह्यताम्। ततो[3] लोभाकृष्टेन केनचित् पान्थेना[4]लोचितम्।

(३) भाग्येनैतत्[5] संभवति। किंतु अस्मिन् आत्म-संदेहे प्रवृत्तिर्न[6] विधेया।

(४) यतो[7] जातेऽपि समी हित-लाभे अनिष्टाच्छुभा[8] गतिः न जायते।

[८] ब्राह्मण और शेर की कथा।

(१) मैंने एक समय दक्षिण अरण्य में घूमते हुवे देखा। कि एक बुड्ढा शेर स्नान करके दर्भ हाथ में धर कर तालाब के तीर पर बोलता है।

(२) हे पथिको। यह सोने की चूड़ी लीजिये। बाद लोभ से खेंचे हुवे किसी पथिक ने सोचा।

(३) (कि) दैव से यह संभव होता है। परन्तु इस आत्मा के संशय (वाले कार्य) में प्रयत्न नहीं करना चाहिये।

(४) कारण अच्छा लाभ होने पर भी अनिष्ट से अच्छा परिणाम नहीं होता है।

---

१ अहं+एकदा। २ एकः+वृद्धः। ३ ततः+लोभ। ४ पान्थेन+आलो०। ५ भाग्येन+एतत्। ६ प्रवृत्तिः+न। ७ यतः+जाते। ८ अनिष्टात्+शुभा।

(५) किंतु सर्वत्र अर्थार्जने प्रवृत्तिः संदेह एव । उक्तं च संशय अनारुह्य नरो भद्राणि न पश्यति ।

(५) परन्तु सब जगह पैसा कमाने में प्रयत्न संशय (वाला) ही है। कहा ही (है कि) संशय के ऊपर चढने बिना मनुष्य कल्याण को नहीं देखता ।

(६) तत् निरूपयामि तावत् । प्रकाशं ब्रूते। कुत्र तव कंकणम्। व्याघ्रो हस्तं प्रसार्य दर्शयति ।

(६) इसलिये देखता हूं तो । बाहर (खुले आवाज में बोलता है । कहां तेरी चूड़ी । शेर हाथ खोल कर बताना है ।

(७) पान्थोऽवदत्[९] । कथं मारात्मके त्वयि विश्वासः । व्याघ्र[१०] उवाच । शृणु रे पान्थ । प्राग् एव यौवनदशायां अति दुर्वृत्त आसम् ।

(७) पथिक बोला । किस प्रकार हिंसारूप तेरे में विश्वास (हो सकता) । शेर बोला । सुन रे पथिक । पहिले ही जवानी में मैं बहुत दुराचारी था ।

(८) अनेक—गो—मानुषाणां वधान्मृता[११] मे पुत्रा दाराश्च । वंशहीनश्चे[१२] अहम् ।

(८) बहुत गौवों मनुष्यों के वध से मर गये मेर पुत्र और स्त्रियां । और वंशरहित मैं (हुआ) ।

---

९ पान्थः + अवदत्। १० व्याघ्रः + उवाच । ११ वधात् + मृता । १२ हीनः + च ।

(६) ततः केनचित् धार्मिकेणाहं[१३] आदिष्टः। दानधर्मादिकं चरतु भवान्।

(६) बाद किसी धार्मिक ने मुझे कहा। दान धर्मादिक कीजिये आप।

(१०) तदुपदेशादिदानीं[१४] अहं स्नानशीलो दाता वृद्धो गलितनख-दन्तो न कथं विश्वासभूमिः।

(१०) उसके उपदेश से अब मैं स्नानशील, दाता, बुड्ढा, जिसके नाखून और दांत गले हैं, क्यों नहीं विश्वास योग्य।

(११) मम च एतावान् लोभविरहो[१५] येन स्वहस्तस्थं अपि सुवर्णकंकणं यस्मै कस्मै चिद् दातुं इच्छामि।

(११) मेरा और इतना लोभ से छुटकारा (है कि) जिससे अपने हाथ का भी सोने का कंकण जिस किसी को भी देना चाहता हूं।

(१२) तथापि व्याघ्रो मानुषं खादति इति लोकापवादो दुर्निवारः। यतः लोकः गतानुगतिकः। मया च धर्मशास्त्राणि अधीतानि।

(१२) तथापि शेर मनुष्य को खाता है ऐसी लोगों में निंदा है (वह दूर होनी कठिन)। क्योंकि लोग अंधविश्वासी हैं। और मैंने धर्मशास्त्र पढ़े हैं।

---

१३ धार्मिकेण+अहं। १४ देशात् +इदानीं। १५ विरहः+येन।

(१३) त्वं च अतीव दुर्ग-[16]तस्तेन तुभ्यं दातुं स[17]यत्नो ऽहम् । तद[18]त्र सरसि स्नात्वा सुवर्ण-कंकणं गृहाण ।

(१३) और तू बहुत बुरी हालत में (है) इसलिये तुमको देने के लिये प्रयत्न कर रहा हूं मैं । तो इस तालाब में स्नान करके सोने की चूड़ी लो ।

(१४) ततो यावद् असौ तद्वचः प्रतीतो लोभात् सरःस्नातुं प्रविशति तावत् महापंके निमग्नः पलायितुं अक्षमः ।

(१४) बाद जब वह उसके भाषण पर विश्वास कर लोभ से तालाब में स्नान के लिये प्रविष्ट हुवा तब बड़े कीचड़ में फंसा और भागने के लिये असमर्थ हुवा ।

(१५) पंके पतितं दृष्ट्वा व्याघ्रोऽवदत् । अहह महापंके पतितोऽसि । अतः त्वां अहं उत्थापयामि ।

(१५) कीचड़ में फंसा हुवा देखकर शेर बोला । अरेरे, बड़े कीचड़ में फंस गये हो । अब तुमको मैं उठाता हूं ।

(१६) इति उक्त्वा शनैः शनैः उपगम्य तेन व्याघ्रेण धृतः स पान्थः अचिन्तयत् ।

(१६) ऐसा बोलकर आहिस्ते आहिस्ते पास जाकर, उस शेर सेपकड़ा गया हुवा वह पथिक सोचनेलगा ।

---

१६ दुर्गतः + तेन । १७ सयत्नः + अहं । १८ तद + अत्र ।

(१७) तन् मया भद्रं न कृतं यद् अत्र मारात्मके विश्वासः कृतः । स्वभावो हि सर्वान् गुणान् अतीत्य मूर्ध्नि वर्तते ।

(१७) वह मैंने अच्छा नहीं किया कि जो इस हिंसा रूप में विश्वास किया। स्वभाव ही सब गुणों का आक्रमण करके शिर पर होता है ।

(१८) अन्यच्च । ललाटे लिखितं प्रोज्झितुं कः समर्थः इति चिंतयन् एव असौ व्याघ्रेण व्यापादितः खादितः च ।

(१८) दूसरा भी है । माथे पर लिखा हुवा दूर करने के लिये कौन समर्थ है । ऐसा सोचता हुवा ही यह शेर ने मारा और खाया।

(१९) अतः अहं ब्रवीमि सर्वथाऽविचारितं कर्म न कर्तव्यम् इति ।

हितोपदेशः ।

(१९) इसलिये मैं बोलता हूं कि सब प्रकार से न सोचा हुवा कार्य नहीं करना चाहिए ।

समास–विवरणम्

(१) कुशहस्तः- ———कुशाः हस्ते यस्य सः कुशहस्तः ।

(२) लोभाकृष्टः———लोभेन आकृष्टः लोभाकृष्टः ।

(३) आत्मसंदेहः———आत्मनः संदेहः यस्मिन् स आत्मसंदेहः ।

(४) अनेकगोमानुषाणां—गावः मानुषाश्च गोमानुषाः । अनेकाश्च ते गोमानुषा अनेकगोमानुषाः ।

(५) दानधर्मादिकं———दानं च धर्मश्च दानधर्मौ । दानधर्मौ आदी यस्य स दानधर्मादिः । तदेव दानधर्मादिकम् ।

(६) अविचारितं ———न विचारितं अविचारितम् ।

———

१२ द्वादशः पाठः ।

ऋकारान्तः पुल्लिंगः 'पितृ' शब्दः ।

(१)	पिता	पितरौ	पितरः
सं०	(हे) पितः / पितर्	(हे) ,,	(हे) ,,
(२)	पितरम्	,,	पितॄन्
(३)	पित्रा	पितृभ्याम्	पितृभिः
(४)	पित्रे	,,	पितृभ्यः
(५)	पितुः	,,	,,
(६)	,,	पित्रोः	पितॄणाम्
(७)	पितरि	,,	पितृषु

चतुर्थ पाठ में 'धातृ' शब्द दिया है। उसमें और इस 'पितृ' शब्द में प्रथमा, संबोधन और द्वितीया के रूपों में कुछ फरक है देखिये :—

धातृ — धाता — धातारौ — धातारः

पितृ — पिता — पितरौ — पितरः

जैसा धातृ शब्द के रकार के पूर्व आ है वैसा पितृ शब्द के रकार के पूर्व नहीं हुवा। यह विशेष भ्रातृ, जामातृ, देवृ, शंस्तृ, सव्येष्टृ, नृ, इन छे शब्दों में भी पाया जाता है। देखिये :—

भ्रातृ——भ्राता	भ्रातरौ	भ्रातरः	(भाई)
जामातृ——जामाता	जामातरौ	जामातरः	(दामाद)

देवृ——देवा	देवरौ	देवरः	(देवर)
नृ——ना	नरौ	नरः	(मनुष्य)
शंस्तृ——शंस्ता	शंस्तरौ	शंस्तरः	(स्तुति करनेहारा)
सव्येष्टृ——सव्येष्टा	सव्येष्टरौ	सव्येष्टरः	(रथवान)

प्रथमा, संबोधन तथा द्वितीया के रूपों का यह विशेष ध्यान में रखने के बाद तृतीया आदि अन्य विभक्तियों के रूप धातृ शब्द के समान ही होते हैं। उनके अंदर कोई विशेष नहीं। केवल 'नृ' शब्द के षष्ठी-बहुवचन के "नृणाम्, नॄणाम्" ऐसे दो रूप होते हैं। इतना ही विशेष है।

इन्नन्तः पुल्लिंगः 'पथिन्' शब्दः।

(१)	पन्थाः	पन्थानौ	पन्थानः
सं०	(हे) „	(हे) „	(हे) „
(२)	पन्थानम्	„	पथः
(३)	पथा	पथिभ्याम्	पथिभिः
(४)	पथे	„	पथिभ्यः
(५)	पथः	„	„
(६)	पथः	पथोः	पथाम्
(७)	पथि	„	पथिषु

इस प्रकार 'मथिन्, ऋभुक्षिन्' आदि शब्द चलते हैं।

इकारान्तः पुल्लिंगः 'सखि' शब्दः।

(१)	सखा	सखायौ	सखायः
सं०	(हे) सखे	(हे) „	(हे) „
(२)	सखायम्	„	सखीन्

(३)	सख्या	सखिभ्याम्	सखिभिः
(४)	सख्ये	,,	सखिभ्यः
(५)	सख्युः	,,	,,
(६)	,,	सख्योः	सखीनाम्
(७)	सख्यौ	,,	सखिषु

'सखि' इकारान्त होने पर भी 'हरि' शब्द के समान रूप नहीं होते हैं। यह बात पाठकों को ध्यान में रखनी चाहिए। इस प्रकार पति आदि शब्द हैं, जो विशेष प्रकार से चलते हैं। जिनका विचार हम आगे करेंगे। अब कुछ व्याकरण के नियम देते हैं:—

२४ नियम—विसर्ग के पूर्व अकार हो तथा उसके बाद अ के सिवाय दूसरा कोई स्वर आजाय तो विसर्ग का लोप हो जाता है। जैसा:—

रामः	+	इति	=	राम इति
देवः	+	इच्छति	=	देव इच्छति
सूर्यः	+	उदयते	=	सूर्य उदयते

२५ नियम—शब्दान्त के 'ए, ऐ, ओ, औ,' इनके सामने कोई स्वर आने से उनके स्थान में क्रमशः 'अय्, आय्, अव्, आव्' ऐसे आदेश होते हैं।

ए	+	अ	=	अय
ऐ	+	अ	=	आय
ओ	+	अ	=	अव
औ	+	अ	=	आव

ने	+	अ	=	नय
भो	+	अ	=	भव
गै	+	अ	=	गाय

२६ नियम—पदान्त के नकार के पूर्व 'अ, इ, उ, ऋ, ऌ' इन में से कोई एक स्वर हो और उसके पश्चात् कोई स्वर आजाय तो, उस नकार का द्वित्व होता है। जैसाः—

अस्मिन्	+	उद्याने	=	अस्मिन्नुद्याने
तस्मिन्	+	इति	=	तस्मिन्निति
आसन्	+	अत्र	=	आसन्नत्र

उक्त नकार दीर्घ स्वर के पश्चात् आजाय तो उसका द्वित्व नहीं होता है। जैसाः—

तान्	+	अपि	=	तानपि
ऋषीन्	+	इच्छति	=	ऋषीनिच्छति
रवीन्	+	उपास्ते	=	रवीनुपास्ते

शब्द—पुल्लिंगी।

चतुर्थः—चौथा

प्रतिग्रहः—दान लेना

प्रभावः—सामर्थ्य

मूर्खः—मूढ

महानुभावः—महाशय

संविभागिन्—हिस्सेदार

प्रत्ययः— अनुभव

संचयः—एकीकरण

पारः—पैलतीर

स्त्रीलिंगी ।

अटवी—अरण्य
उपार्जना—प्राप्ति
वसुधा—भूमि

अटव्यां—अरण्य में
विफलता—निष्फलता
बाला—स्त्री
धरणिः—भूमि

नपुंसकलिंगी ।

देशान्तरं—अन्यदेश
अधिष्ठानं—ग्राम
अस्थिन्—हड्डी
बाल्यं—बालपन

कुटुंबकं—परिवार
अस्थीनि—हड्डियां
औत्सुक्यं—उत्सुकता

विशेषण ।

हीन—न्यून
उपागत—प्राप्त
अभिहित—कहा हुवा
पराङ्मुख—पीछे मुंह किया हुवा
क्रीडित—खेला हुवा
लघुचेतस्—क्षुद्र बुद्धि, छोटी बुद्धी वाला
त्रयः—तीन

मंत्रित—सोचा हुवा
स्वोपार्जित—अपनी कमाई
निषिद्ध—मना किया हुवा
ज्येष्ठ—बड़ा
ज्येष्ठतर—दोनों में बड़ा
ज्येष्ठतम—सब से बड़ा
उदारचरित—बड़े दिलवाला
संयोजित—मिला हुवा

अन्य ।

धिक्—धिक्कार है
क्षणं—क्षणभर

भोः—अरे

क्रिया ।

वसन्ति—रहते है	परितोष्य—संतुष्ट करके
लभ्यते—प्राप्त होता है	अवतीर्य—उतर कर
संचारयति—संचार करता है	क्रियते—किया जाता है
प्रतीक्षस्व—ठहर	युज्यते—योग्य है
आरोहामि—चढ़ता हूं	निष्पाद्यते—बनाया जाता है ।
उपदिश्य—उपदेश करके	उत्थाय—उठ कर

विशेषणों का उपयोग ।

बुद्धिहीनः पुरुषः ।	निषिद्धो ग्रंथः ।	ज्येष्ठो भ्राता
बुद्धिहीना स्त्री ।	निषिद्धा कथा ।	ज्येष्ठा भगिनी
बुद्धिहीनं मित्रं ।	निषिद्धं पुस्तकं ।	ज्येष्ठं मित्रम्

(१) बुद्धिहीना विनश्यन्ति ।

(१) कस्मिंश्चि[1]दधि[2]ष्ठाने चत्वारो ब्राह्मणपुत्राः परं मित्रभावं उपगताः वसन्ति स्म । (२) तेषां त्रयः शास्त्रपारं गताः परन्तु बुद्धिरहिताः । एकस्तु[3] बुद्धिवान् केवलं शास्त्रपराङ्मुखः ।

---

१ कस्मिन्+चित् । २ चित्+अधि० । ३ एकः+तु ।

---

(१) (परं मित्रभावं उपगताः)—बड़े मित्र बन गये । (२) (शास्त्रपराङ्मुखः)-शास्त्र न पढा हुवा ।

(३) अथ तैः कदाचिन् मित्रैः मंत्रितम् । [४]को गुणो विद्याया येन देशान्तरं गत्वा भूपतीन् परितोष्य अर्थोपार्जना न क्रियते । (४) तत् पूर्वदेशं गच्छामः । [५]तथा ऽनुष्ठिते किंचिन् मार्गं गत्वा तेषां ज्येष्ठतरः प्राह । (५) अहो अस्माकं एक[६]श्चतु[७]र्थो मूढः केवलं बुद्धिमान् । न च राजप्रतिग्रहो बुद्धया लभ्यते विद्यां विना । तत् न अस्मै स्वोपार्जितं दास्यामि । (६) तद् गच्छतु गृहम् । [८]ततो द्वितीयेन अभिहितम् । अहो न युज्यते एवं कर्तुं, यतो वयं बाल्यात् प्रभृति एकत्र क्रीडिताः । (७) तद् आगच्छतु महानु[९]भावो ऽस्मदुपार्जित-वित्तस्य संविभागी भविष्यति इति । (८) उक्तं च 'अयं निजः परो वा इति गणना लघुचेतसाम् । उदारचरितानां

४ कः+गुणः+विद्या० । ५ तथा+अनुष्ठिते । ६ एकः+चतु० । ७ चतुर्थः+ मूढः । ८ ततः+द्वितीय० । ९ महानुभावः+अस्मद् ।

---

(३) (भूपतीन् परितोष्य अर्थोपार्जना न क्रियते) राजाओं को खुश कर द्रव्यप्राप्ति नहीं की जाती है (४) (न च राजप्रतिग्रहो बुध्या लभ्यते)-नहीं राजा से दान बुद्धि के कारण मिलता है। (५) (न युज्यते एवं कर्तुम्)-नहीं योग्य है ऐसा करना । (६) (वयं बाल्यात् प्रभृति एकत्र क्रीडिताः)-हम बचपन से एक स्थान पर खेले हैं। (७) (वित्तस्य संविभागी)-द्रव्य का हिस्सेदार । (८) (अयं निजः परावात गणना लघुचेतसाम्)-यह अपना (यह) पराया ऐसी गिनती छोटे दिल वालों की (है) । (उदारचारितानां तु वसुधैवकुटुंबकम्)-

तु वसुधैव[10] कुटुम्बकम्' । इति । (६) तद् आगच्छतु एषो[11]ऽपि इति। तथाऽनुष्ठिते[12] तै[13]र्मार्गाश्रितैरटव्याम्[14] मृतसिंहस्य अस्थीनि दृष्टानि । (१०)ततश्च[15] एकेन अभिहितम् । यद् अहो विद्याप्रत्ययः क्रियते । किंचिद् एतत् सत्त्वं मृतं तिष्ठति । तद् विद्याप्रभावेण जीवसहितं कुर्मः । (११) अहं अस्थिसंचयं करोमि । ततश्च एकेन औत्सुक्याद् अस्थिसंचयः कृतः । (१२) द्वितीयेन चर्म-मांस-रुधिरं संयोजितम् । तृतीयो[16]ऽपि यावद् जीवं संचारयति तावद् सुबुद्धिना निषिद्धः । (१३) भोः तिष्ठतु भवान् । एष सिंहो निष्पाद्यते । यदि एनं सजीवं करिष्यसि ततः सर्वानपि स व्यापादयिष्यति । (१४) स प्राह । धिङ्[17] मूर्ख, नाहं विद्याया विफलतां करोमि । ततः तेन अभिहितम् । तर्हि प्रतीक्षस्व क्षणम् । यावद् अहं वृक्षं आरोहामि ।

---

१० वसुधा+एव । ११ एषः+अपि । १२ तथा+अनु० । १३ तै+मार्गा०। १४ तैः+अटव्यां। १५ ततः+च। १६ तृतीयः+अपि। १७ धिक्+मूर्ख ।

उदार बुद्धि वालों का पृथ्वी ही परिवार है ।(६) (तैः मार्गाश्रितैः)- उनके मार्ग का आश्रय लेने पर—चलने पर । (१०)(विद्याप्रत्ययः क्रियते)-विद्या का अनुभव लिया जाता है । (जीव-संहितं कुर्मः)- सजीव करेंगे । (११) (अस्थिसंचयं करोमि)-मैं हड्डियां रचता हूं । (१२) (यावज्जीवं संचारयति)-जब जीव डालने लगा। (१३)(तावत् सुबुद्धिना निषिद्धः)-तब सुबुद्धि ने मना किया । (१४) (विद्याया विफलतां करोमि)- विद्या को निष्फल करूंगा ।

(१५) तथानुष्ठिते यावत् सजीवः कृतः तावत् ते त्रयो[१८] ऽपि सिंहेनोत्थाय[१९] व्यापादिताः । (१६) स च पुनः वृक्षाद् अवतीर्य गृहं गतः । अतोऽहं ब्रवीमि 'बुद्धिहीना विनश्यन्ति इति ।

पंचतंत्रम् ४ ।

---

१८ त्रयः+अपि । १९ सिंहेन+उत्थाय ।

---

(१५) (प्रतीक्षस्व क्षणम्)-ठहर क्षण भर । (१६) (सिंहेनोत्थाय व्यापादिताः)-शेर ने उठ कर मारे ।

सूचना—इस पाठ का भाषा में भाषांतर नहीं दिया है। पाठक पढ कर ही समझने का यत्न स्वयं कर सकते हैं। जो कुछ कठिन वाक्य हैं उन्हीं का भाषांतर दिया है ।

समास–विवरणम् ।

(१) ब्राह्मणपुत्राः———ब्राह्मणस्य पुत्राः ब्राह्मणपुत्राः ।
(२) शास्त्रपराङ्मुखः—शास्त्रात् पराङ्मुखः शास्त्रपराङ्मुखः ।
(३) अर्थोपार्जना———अर्थस्य उपार्जना अर्थोपार्जना ।
(४) अस्मदुपार्जितं———अस्माभिः उपार्जितं अस्मदुपार्जितम ।
(५) लघुचेतसां———लघु चेतः यस्य सः लघुचेताः । तेषां लघुचेतसाम् ।
(६) मृतसिंहः———मृतः च असौ सिंहः च मृतसिंहः ।
(७) सुबुद्धिः———सुष्ठु बुद्धिः यस्य सः सुबुद्धिः ।

१३ त्रयोदशः पाठः ।

इकारान्तः पुल्लिंगः 'पतिः' शब्दः ।

(१)	पतिः	पती	पतयः
सं०	(हे) पते	(हे) ,,	(हे) ,,
(२)	पतिम्	,,	पतीन्
(३)	पत्या	पतिभ्याम्	पतिभिः
(४)	पत्ये	,,	पतिभ्यः
(५)	पत्युः	,,	,,
(६)	,,	पत्योः	पतीनाम्
(७)	पत्यौ	,,	पतिषु

सूचना—पंचमी तथा षष्ठी के एक वचन में जिन जिन शब्दों के अंत में 'त्यः अथवा ख्यः' ऐसे रूप आयेंगे वहां 'त्युः ख्युः' ऐसे रूप हुवा करते हैं। जैसेः—

पति शब्द का — पत्युः
सखि ,, — सख्यु

वास्तव में तृतीया चतुर्थी के एक वचन के अनुकूल पंचमी षष्ठी के एक वचन का रूप 'पत्यः, सख्यः' ऐसा होना चाहीये था, परन्तु उक्त कथन के अनुकूल 'पत्युः, सख्यु' ऐसा होता है। इस पति शब्द में एक और विशेष है। जिस समय पति शब्द समास के अंत में होता है उस समय उसके रूप पूर्वोक्त 'हरि' शब्द के (पाठ ३ पृ. ४३ देखो) समान होते हैं। तथा जिस समय अलग रहता है उस समय ऊपर लिखे हुये रूप होते हैं। देखीयेः—

इकारान्तः पुल्लिंगो 'भूपति' शब्दः ।

(१)	भूपतिः	भूपती	भूपतयः
सं०	(हे) भूपते	(हे) ,,	(हे) ,,
(२)	भूपतिम्	,,	भूपतीन्
(३)	भूपतिना	भूपतिभ्याम्	भूपतिभिः
(४)	भूपतये	,,	भूपतिभ्यः
(५)	भूपतेः	,,	,,
(६)	,,	भूपत्योः	भूपतीनाम्
(७)	भूपतौ	,,	भूपतिषु

इसी प्रकार 'पृथ्वीपति, गजपति, नरपति' इत्यादि पत्यन्त सामासिक शब्दों के विषय में जानना चाहिये। पाठकों को उचित है कि वे 'पति' शब्द की इस विशेषता को ठीक ध्यान में रखें। नहीं तो समासान्त पति शब्द तथा केवल पति शब्द इनके रूपों में गड़बड़ होने में कोई देरी नहीं लगेगी । अस्तु। अब कुछ व्याकरण के नियम देखीयेः—

२७ नियम—इ, उ, ऋ, ऌ, इनके सामने विजातीय स्वर आने पर इनके स्थान में क्रमशः 'य, व, र, ल' ये आदेश होते हैं। जैसाः—

हरि	+	अंगम्	=	हर्यंगम्
देवी	+	अष्टकम्	=	देव्यष्टकम्
भानु	+	इच्छा	=	भान्विच्छा
स्वभु	+	आनंदः	=	स्वभ्वानंदः

धातृ + अंशः = धात्रंशः

शकल + अन्तः = शकलन्तः

स्पष्टी करण के लिये उक्त शब्दों के अक्षर कैसे बदलते हैं यह नीचे दिया है।

हर्यंगम्

[ह्+अ]+[र्+इ]+[अं]+[ग्+अ]+म्=ह्+अ+र+य्+अं+ग्+अ+म् ॥

भान्विच्छा

[भ्+आ]+[न्+उ]+[इ]+च्+छ्+आ=भ्+आ+न्+व्+इ+च्+छ्+आ

इस प्रकार अन्य संधियों के विषय में जानना चाहिये। पाठकों को उचित है कि वे हरएक संधि के वर्ण इस प्रकार लिख कर कौन से वर्ण के स्थान पर कौनसा आदेश होता है यद देखें और सोच कर ठीक संधि नियम के अनुकूल संधि किया करें।

शब्द—पुल्लिंगी

हस्तिन्—हाथी

महामात्रः—माहौत, हाथीवाला

संक्षोभः— रौला, क्षोभ

लोहः—लोहा

र :—श्रेष्ठ

करिन्—हाथी

प्रावारकः—ओढ़ने का कपड़ा

रदः—दांत

राजमार्गः—बड़ा रास्ता, मालरोड

परिव्राजकः—संन्यासी, भिक्षु

दण्डः—सोटी

पराक्रमः—शौर्य, वीरता

आलानस्तंभः—हाथी बांधने का खंबा

चरणः—पांव

महाकायः—बड़ा शरीर वाला

वेषः—पोशाख

स्त्रीलिंगी

आर्या—श्रेष्ठ स्त्री
आर्यायै—श्रेष्ठ स्त्री के लिये
मतिः—बुद्धि
कुंडिका—कमंडलु
भित्तिः—दिवार
दृढ़मतिः—स्थिर बुद्धि

नपुंसकलिंगी

कर्म—कार्य
नलिनं—कमल दण्ड
भाजनं—बरतन
रदनं—रगड़

विशेषण

अवदात—उत्तम, प्रशंसा योग्य
साधु—अच्छा
दीर्घ—लंबा
अखिल—संपूर्ण
उद्युक्तः—तैयार
लो —लोहा
समासादित—पकड़ा हुवा
विनीत—नम्र
अवतीर्ण—उतरा हुवा
विदारयन्—तोड़ने वाला
शिखराभ—शिखर के समान
मोचित—छुड़ाय

अन्य

इतः—इस ओर
उद्घुष्टं—पुकारा
तरसा—वेग से
ततः—वहां से

क्रिया

शृणोतु—सुने	बभञ्ज—तोड़ा
आरोहत—चढ़ो	अकरवम्—की
मनुते—मानता है	संप्रधार्य—निश्चय करके
उद्घोषयत—बोले	निश्वस्य—सांस लेकर
व्यापाद्य—हनन करके	अपनयत—लेजाव
आस्ते—है	मर्दयितुं—रगड़ने के लिये
अहनम्—मारा	परित्रातुं—रक्षा करने के लिये
जर्जरीकृत्य—जर्जर करके	निवेदयितुं—कहने के लिये

[१०] अवदातं कर्म ।

(१) शृणोतु आर्या मे पराक्रमम् । योऽसौ[1] आर्याया[2] हस्ती स महामात्रं व्यापाद्य आलानस्तंभं बभञ्ज ।

(२) ततः स महान्तं संक्षोभं कुर्वन् राजमार्गं अवतीर्णः । अत्रान्तरे उद्घुष्टं जनेन ।

[१०] उत्तम कार्य ।

(१) सुने श्रेष्ठ स्त्री मेरा पराक्रम । जो वह आर्या (आप) का हाथी उसने महौत को मार कर बंधन स्तंभ को तोडा ।

(२)नंतर वह बडा रौला करता हुवा राजमार्ग पर आया । इतने में पुकारा लोकों ने ।

---

१ यः+असौ । २ आर्यायाः+हस्ती ।

(३) 'अपनयत बालकजनम् । आरोहत वृक्षान् भित्तीश्च। हस्ती इतँ एति' । इति ।

(४) करी कर–चरण–रदनेन अखिलं वस्तुजातं विदारयन्नास्ते । एतां नगरीं नलिन–पूर्णां महासरसीं इव मनुते स्म ।

(५) तेन ततः कोऽपि परिव्राजकः समासादितः । तञ्च परिभ्रष्ठ–दंड–कुण्डिका–भाजनं यदा स चरणैर्मर्दयितुं उद्युक्तो बभूव, तदा परिव्राजकं परित्रातुं दृढमतिं अकरवम् ।

(६) एवं संप्रधार्य सत्वरं लोहदण्डं एकं तरसा गृहीत्वा तं हस्तिनं अहनम् ।

(७) विंध्य-शैल-शिखराभं महा-

(३) 'ले जाव बालकों को । चढो वृक्षों और दिवारों पर । हाथी यहां आता है ।'

(४) हाथी के सोंड और पावों की रगड से सब पदार्थ मात्र चूरण करता है । इस नगरी को कमलिनी से भरे हुवे बड़े तालाव के समान मानता था ।

(५) उसने पश्चात् कोई संन्यासी पकड़ा । जिसके दण्ड, कमंडलु बरतन गिर गये हैं ऐसे उस (संन्यासी) को जब वह चरणों से रगडने के लिये तैयार हुवा तब संन्यासी की रक्षा करने की दृढ़ बुद्धि (मैंने) की ।

(६) इस प्रकार पकड़ कर शीघ्र लोहे का एक सोटा त्वरा से पकडकर उस हाथीको मारा।

(७) विंध्यपर्वत के शिखर

---

३ भित्तीः+च । ४ इतः+एति । ५ विदारयन्+आस्ते । ६ कः+अपि । ७ तं+च। ८ चरणैः+ मर्दयितुं । ९ उद्युक्तः+बभूव ।

कार्यं अपि तं जर्जरीकृत्य स परिव्राजो मोचितः । ततः 'शूर साधु साधु' इति सर्वो[११] ऽपि जनः उच्चैरुद्[१२]घोषयत् ।

(८) ततः एकेन विनीतवेषेण ऊर्ध्वं दीर्घं निश्वस्य स्वप्रावारको ऽपि[१३] ममो[१४]परि क्षिप्तः।

(९) तं अहं गृहीत्वा इमं वृत्तान्तं आर्यायै निवेदयितुं आगतः।

संस्कृत पाठावली ।

के समान बड़े शरीर वाले उस को जर्जर करके वह संन्यासी छुड़वाया । पश्चात 'शूर, अच्छा, अच्छा' ऐसा सब लोकों ने ऊंची अवाज़ से पुकारा ।

(८) पश्चात् नम्र पोशाक वाले एक ने ऊपर लंबा सांस लेकर अपना ओढ़ने का भी मेरे ऊपर फैंका ।

(९) उसको मैं लेकर यह वृत्तांत आपको कहने के लिये आगया ।

समास–विवरणम् ।

(१) करीकरचरणरदनेन——————करः च चरणः च करचरणौ । करिणः करचरणौ करीकरचरणौ । करीकरचरणयोः रदनं, करीकरचरणरदनं । तेन करीकरचरणरदनेन ।

(२) नलिनपूर्णा——————————नलिनैः पूर्णाम् ।

---

१० परिव्राजः+मोचितः । ११ सर्वः+अपि । १२ उच्चैः+उद्घोषयत । १३ प्रावारकः+अपि । १४ मम+उपरि ।

(३) परिभ्रष्टदण्डकुंडिकाभाजनम्—दण्डः च कुंडिकाभाजनं च दण्डकुंडिकाभाजने। परिभ्रष्टे दण्डकुण्डिकाभाजने यस्मात् स परिभ्रष्टदण्डकुंडिकाभाजनः।

(४) लोहदण्डः——— ———लोहस्यदण्डः लोहदण्डः।

(५) स्वप्रावारकः-—————स्वस्य प्रावारकः स्वप्रावारकः।

(६) विनीतवेषः——————विनीतः वेषः यस्य स विनीतवेषः।

(७) महाकायः ——— ————महान् कायः यस्य स महाकायः

१४ चतुर्दशः पाठः।

अकारान्तः पुलिंगो 'विश्' शब्दः।

(१)	विट् / विड्	विशौ	विशः
सं०	(हे) विट् / विड्	(हे) ,,	(हे) ,,
(२)	विशम्	,,	,,
(३)	विशा	विड्भ्याम्	विड्भिः
(४)	विशे	,,	विड्भ्यः
(५)	विशः	,,	,,
(६)	,,	विशोः	विशाम्
(७)	विशि	,,	विट्सु

इस शब्द के प्रथमा संबोधन के एकवचन के रूप दो दो होते हैं। प्रायः जिस शब्द के अंत में व्यंजन होता है उसके दो रूप संभवनीय है। इस शब्द के समान, 'विश्वसृज्, परिमृज्, देवेज्, परिव्राज्, विभ्राज्, राज्, सुवृश्च्, भृज्ज्, त्विष्, द्विष्, रत्नमुष्, प्रावृष्, प्राच्छ्, प्राश्, लिह्' इत्यादि शब्द चलते हैं। तथा 'छ्, श्, ष्, ह्' ये व्यंजन जिनके अंत में होते हैं ऐसे शब्द इसी शब्द के समान चलते हैं। सुभिता के लिये 'परिव्राज्' शब्द के रूप नीचे देते हैं:—

जकारान्तः पुल्लिंगः 'परिव्राज्' शब्द।

(१)	परिव्राट् / परिव्राड्	परिव्राजौ	परिव्राजः
(सं०)	(हे) ,,	(हे) ,,	(हे) ,,
(२)	परिव्राजम्	,,	,,
(३)	परिव्राजा	परिव्राड्भ्याम्	परिव्राड्भिः
(४)	परिव्राजे	,,	परिव्राड्भ्यः
(५)	परिव्राजः	,,	,,
(६)	,,	परिव्राजोः	परिव्राजाम्
(७)	परिव्राजि	,,	परिव्राट्सु

इसी प्रकार चलने वाले शब्द संस्कृत में अनेक हैं। कईयों के विशे रूप नीचे देते हैं। जिनको देख कर पाठक सुभिता से सब विभक्तियों के रूप बना सकेंगे।

(१) जकारान्तः पुल्लिंगो 'ऋत्विज्' शब्द ।

१ प्रथमा	ऋत्विक्–ग्	ऋत्विजौ	ऋत्विजः
३ तृतीया	ऋत्विजा	ऋत्विग्भ्याम्	ऋत्विग्भिः ।
६ षष्ठी	ऋत्विजः	ऋत्विजोः	ऋत्विजाम्
७ सप्तमी	ऋत्विजि	,,	ऋत्विक्षु

अन्य बिभक्तियों के रूप पाठक स्वयं बना सकते हैं ।

(२) चकारान्तः पुल्लिंगो 'पयोमुच्' शब्दः ।

(१)	पयोमुक्–ग्	पयोमुचौ	पयोमुचः
(४)	पयोमुचे	मयामुग्भ्याम्	पयोमुग्भ्यः
(७)	पयोमुचि	पयोमुचोः	पयोमुक्षु

(३) जकारान्तः पुल्लिंगो 'विश्वसृज्' शब्दः ।

(१)	विश्वसृट्–ड्	विश्वसृजौ	विश्वसृजः
(३)	विश्वसृजा	विश्वसृड्भ्याम्	विश्वसृड्भिः
(५)	विश्वसृजः	,,	,, सृड्भ्यः

(४) 'देवेज्' शब्दः ।

(१)	देवेट्–ड्	देवेजौ	देवेजः
(४)	देवेजे	देवेड्भ्याम्	देवेड्भ्यः
(७)	देवेजि	देवेजोः	देवेट्सु

(५) 'राज्' शब्दः ।

(१)	राट्–ड्	राजौ	राजः
(३)	राजा	राड्भ्याम्	राड्भिः

(६)	राजः	राजोः	राजाम्
(७)	राजि	राजोः	राट्सु

(६) 'द्विष्' शब्दः ।

(१)	द्विट्-ड्	द्विषौ	द्विषः
(२)	द्विषा	द्विड्भ्याम्	द्विड्भिः
(५)	द्विषः	,,	द्विड्भ्यः
(७)	द्विषि	द्विषोः	द्विट्सु

(७) 'प्रावृष्' शब्दः ।

(१)	प्रावृट्-ड्	प्रावृषौ	प्रावृषः
(७)	प्रावृषि	प्रावृषोः	प्रावृट्सु

(८) 'लिह्' शब्दः ।

(१)	लिट्-ड्	लिहौ	लिहः
(३)	लिहा	लिड्भ्याम्	लिड्भिः
(७)	लिहि	लिहोः	लिट्सु

(९) रत्नमुष्' शब्दः ।

(१)	रत्नमुट्-ड्	रत्नमुषौ	रत्नमुषः
(४)	रत्नमुषे	रत्नमुड्भ्याम्	रत्नमुड्भ्यः
(७)	रत्नमुषि	रत्नमुषोः	रत्नमुट्सु

(१०) 'प्राञ्च्' शब्दः ।

(१)	प्राट्-ड्	प्राञ्चौ	प्राञ्चः
(३)	प्राञ्चा	प्राड्भ्याम्	प्राड्भिः

(७)	प्राच्छि	प्राच्छोः	प्राट्सु

(११) 'प्राश्' शब्दः ।

(१)	प्राट्-ड्	प्राशौ	प्राशः
(३)	प्राशा	प्राड्भ्याम्	प्राड्भिः
(७)	प्राशि	प्राशोः	प्राट्सु

इस पाठ में ये विशेष शब्द दिये हैं । इनके रूप जो जो विलक्षण होते हैं वे दिये हैं । बाकी रहे हुवे रूप पाठक स्वयं बना सकते हैं । प्रथमा विभक्ति के रूप व्यंजनांत हरएक शब्द के दो दो होते हैं । उनका संक्षेप से संकेत ऊपर किया है । जैसा 'परिव्राट्-ड्' इसका मतलब 'परिव्राट्, परिव्राड्' ऐसा पाठक समझें । नहीं तो समझने में भ्रम होगा । इस पाठ में १, २, ३, ४ इत्यादि अंक प्रथमा द्वितीया आदि विभक्तियों के द्योतक समझने चाहिये ।

शब्द—पुल्लिंगी

आहवः—युद्ध
दर्दुरः—मेंडक
आहारविरहः—भोजन न होना
प्रश्नः—सवाल
बांधवः—भाई
राष्ट्रविप्लवः—गदर
महोदधिः—बड़ा समुद्र
रागिन्—लोभी

भेकः—मेंडक
मंडूकः—मेंडक
भुजगः—सांप
श्रोत्रियः—वैदिक
स्नातकः—विद्या समाप्त किया हुवा ब्रह्मचारी
आहारः—भोजन
गुणः—गुण
नृ—नर, मनुष्य

स्त्रीलिंगी

विंशतिः—बीस	परिदेवना—शोक

नपुंसकलिंगी

उद्यानं—बाग	भाग्यं—दैव
विषं—जहर	कौतुकं—कुतूहल, आश्चर्य
दुर्भिक्षं—अकाल	व्यसनं—आपत्ति, बुरी अवस्था
स्मशानं—समशान भूमि	काष्ठं—लकड़ी
अग्रं—नोक	वाहनं—वाहन, रथ आदि
	दैवं—नसीब

विशेषण

जीर्ण—पुराणा	मंदभाग्य—दुर्दैवी
देशीय—देशका, उमर का	पंच—पांच
प्रबुद्ध—जगा हुवा	पंचभिः—पांचों से
संजात—उत्पन्न	पृष्टः—पूछा हुवा
नृशंस—क्रूर	गुणसंपन्न—गुणी
मूर्च्छित—चक्कर आया हुवा	दष्ट—काटा
आकुल—व्याकुल	कुत्सित—निंदित
	अकुत्सित—अनिंदित

इतर

परेद्युः—दूसरे दिन	चित्रपदक्रमम्—पांव अजब रीति से रखता हुवा
सर्वथा—सब प्रकार से	

क्रिया

अन्विष्यसि—ढूंडते हो	अन्वेष्टुं—ढूंडने के लिये
कथ्यतां—कहिये	पतित्वा—गिरकर
लुलोठ—पड़ा	समेयातां—एकत्र होती है
विलपसि—रोते हो	अनुसंधेहि—ध्यान रख
व्यपेयातां—अलग होती है	परिहर—छोड़
निशम्य—सुनकर	वोढुं—उठाने के लिये

(११) सर्प--मंडूकयोः कथा।

(१) अस्ति जीर्णोद्याने मंदविषो नाम सर्पः। सोऽ[1]तिजीर्णतया आहारमपि[2] अन्वेष्टुं अक्षमः सरस्तीरे पतित्वा स्थितः। (२) ततो दूरादेव[3] केन चित् मंडूकेन दृष्टः पृष्टश्च। किमिति त्वं आहारं नान्विष्यासि[4]। (३) भुजगोऽवदत्[5]। गच्छ भद्र, मम मंदभाग्यस्य प्रश्नेन किम्। ततः संजात-कौतुकः स च भेकः

---

१ सः+अति। २ आहारं+अपि। ३ दूरात्+एव। ४ न+अन्विष्यसि। ५ भुजगः+अवदत्।

---

(१) (सोऽतिजीर्णतया)—वह बहुत बुड्ढा—क्षीण—होने से। (आहारमपि अन्वेष्टुं अक्षमः)—भक्ष्य ढूंढ़ने के लिये अशक्त है। (३) (गच्छ भद्र)—जाव भाई। (मम मंदभाग्यस्य प्रश्नेन किं)—

सर्वथा कथ्यतां इत्याह । (४) भुजंगोऽपि[६] आह । भद्र, ब्रह्मपुरवासिनः श्रोत्रियस्य कौंडिन्यस्य पुत्रः विंशतिवर्षदेशीयः सर्वगुण-संपन्नो दुर्दैवान् मया नृशंसेन दष्टः। (५) ततः सुशीलनामानं तं पुत्रं मृतं आलोक्य मूर्च्छितः कौंडिन्यः पृथिव्यां लुलोट। अनंतरं ब्रह्मपुरवासिनः सर्वे बांधवास्तत्र[७] आगत्य उपविष्टाः। (६) तथा च उक्तम् । आहवे व्यसने दुर्भिक्षे राष्ट्रविप्लवे राजद्वारे स्मशाने च यस्तिष्ठति[८] स बांधव इति। (७) तत्र कपिलो नाम स्नातकोऽवदत्[९] । अरे कौंडिन्य!

६ भुजगः+अपि। ७ बांधवाः+तत्र। ८ यः+तिष्ठति। ९ स्नातकः+अवदत्

मेरे (जैसे) दुर्दैवी को प्रश्न (पूछकर तुम्हें) क्या (लाभ है)। (संजात-कौतुकः)—जिसको उत्सुकता होगई है ऐसा। (सर्वथा कथ्यतां)—सब (हाल) कहिये। (४) (ब्रह्मपुरवासिनः)—ब्रह्मपुर में रहने वाले। (विंशति-वर्ष-देशीयः)—बीस साल आयु का। (५) (सुशीलनामानं तं पुत्रं मृतं आलोक्य)—सुशील नामक उस पुत्र को मरा हुवा देखकर। (६) (आहवे व्यसने दुर्भिक्षे राष्ट्रविप्लवे राजद्वारे स्मशाने च यः तिष्ठति स बांधवः)—युद्ध, कष्ट, अकाल, गदर, राजा की कचेरी, समशान इन स्थानों में जो (मदत देने के लिये) ठहरता है वही भाई है। (७) (मूढोऽसि)—

मूढोऽसि तेन एवं प्रलपासि विलपासि च। (८) शृणु। यथा महोदधौ काष्ठं च काष्ठं च समेयातां, समेत्य च व्यपेयाताम् तद्वद् भूत-समागमः। (९) तथा पंचाभिः निर्मिते देहे पुनः पंचत्वं गते तत्र का परिदेवना। (१०) तद्, भद्र, आत्मानं अनुसंधेहि शोकचर्चां च परिहर इति। ततः तद्वचनं निशाम्य प्रबुद्ध इव कौडिन्य[10] उत्थाय अब्रवीत। (११) तद् अलं गृहनरक-वासेन। वनं एव गच्छामि। कपिलः पुनः आह।

१० कौंडिन्यः+उत्थाय।

तू मूर्ख है। (तेन एवं प्रलपासि विलपासि)—इसलिये इस प्रकार रोते पीटते हो। (८) (यथा महोदधौ काष्ठं च० समेयातां)—जिस प्रकार बड़े समुद्र में एक लकड़ी दूसरी लकड़ी के साथ मिलती है। (समेत्य च व्यपेयाताम्)—और एक होकर फिर अलग होती है। (भूत-समागमः)—प्राणियों का सहवास। (९) (पंचभिः निर्मिते देहे)—पांचों (भूतों से) बना हुवा देह (पुनः पंचत्वं गते) फिर पांचों (तत्वों) में जाने पर (तत्र का परिदेवना) वहां किस लिये शोक (करते हो)। (१०) (आत्मानं अनुसंधेहि)—अपने आपको समझ, (११) (अलं गृहनरक-वासेन)— बस (अब) काफी है नरक

रागिणां वनेऽपि दोषाः प्रभवन्ति। (१२) अकुत्सिते कर्मणि यः प्रवर्तते तस्य निवृत्तरागस्य गृहं तपोवनम्। (१३) कौंडिन्यो ब्रूते। एवमेव। ततोऽहं शोकाकुलेन ब्राह्मणेन शप्तः। यद् अद्य आरभ्य मंडूकानां वाहने भविष्यसि। इति। (१४) अतः ब्राह्मण-शापाद् वोढुं मंडूकान् अत्र तिष्ठामि। अनंतरं तेन मंडूकेन गत्वा मंडूक-नाथस्य अग्रे तत् कथितम्। (१५) ततोऽसौ[11] आगत्य मंडूक-राजस्तस्य[12] सर्पस्य पृष्ठं आरूढवान्। स च सर्पः तं पृष्ठे कृत्वा चित्रपदक्रमं बभ्राम। (१६) परेद्युः चलितुं असमर्थं तं दर्दुराधिपतिरुवाच[13]। किं अद्य भवान् मंदगतिः।

११ ततः+असौ। १२ राजः+तस्य १३ पतिः+उवाच।

रूप इस घर में रहना। (१२) (रागिणां वनेऽपि दोषाः प्रभवन्ति)—लोभियों के लिये जंगल में भी दोष पैदा होते हैं। (निवृत्त-रागस्य गृहं तपोवनं)—निर्लोभी मनुष्य के लिये घर ही तपोवन है। (१३) (अहं ब्राह्मणेन शप्तः)—मुझे ब्राह्मण ने शाप दिया। (अद्य आरभ्य)—आज से। (१४) (वोढुं मंडूकान्)—मेंडकों को उठाने के लिये। (१५) (तं पृष्ठे कृत्वा)—उसको पीठ पर उठाकर। (चित्रपदक्रमं बभ्राम)—विचित्र प्रकार नाचता हुवा घूमने लगा। (१६) (किं अद्य भवान् मंदगतिः)—क्यों आज आप थक गये।

सर्पो ब्रूते । (१७) देव आहार-विरहाद् असमर्थोऽस्मि । मंडूक राजः आह । अस्मदाज्ञया भेकान् भक्षय । (१८) ततो गृही-[14]तोऽयं महाप्रसाद् । इति उक्त्वा । क्रमशो मंडूकान् खादितवान् । अथो निर्मंडूकं सरो विलोक्य, भेकाधिपतिः अपि तेन भक्षितः ।

हितोपदेशः ।

१४ गृहीतः+अयम् ।

(१७) (गृहीतः अयं महाप्रसादः) लिया यह महाप्रसाद । (मंडूकान् खादितवान्)—मंडकों को खाया । (निर्मंडूकं सरः विलोक्य)—मेंडकों से खाली (हुवा हुवा) तालाव देखकर ।

सूचना—इस पाठ का भाषांतर नहीं दिया है । पाठक स्वयं जान सकेंगे । कठिन वाक्यों का हि केवल अर्थ दिया है ।

समास-विवरणम् ।

(१) जीर्णोद्यानं———जीर्णं च तद् उद्यानं च जीर्णोद्यानम ।

(२) मंदविषः———मंदं विषं यस्य स मंद विषः ।

(३) भुजगः——— -भुजः गच्छति इति भुजगः । भुजः बाहु ।

(४) ब्रह्मपुरवासी———ब्रह्मपुरे वसति इति ब्रह्मपुरवासिन् । स ब्रह्मपुरवासी ।

(५) सर्वगुणसंपन्नः———सर्वैः गुणैः संपन्नः सर्वगुणसंपन्नः ।

(६) भूत-समागमः———भूतानां समागमः भूतसमागमः ।

(७) शोकाकुलः———————शोकेन आकुलः शोकाकुलः ।

(८) मंडूकनाथः———————मंडूकानां नाथः मंडूक-नाथः ।

(९) दर्दुराधिपतिः———————दर्दुराणां अधिपतिः दर्दुराधिपतिः ।

(१०) निर्मंडूकं———————निर्गताः मंडूकाः यस्मात् तत् निर्मंडूकं ।

१५ पंचदशः पाठः ।

सकारान्तः पुल्लिंगः 'चन्द्रमस्' शब्दः ।

(१)	चंद्रमाः	चंद्रमसौ	चंद्रमसः
सं०	(हे) चंद्रमः	(हे) ,,	(हे) ,,
(२)	चंद्रमसम्	,,	,,
(३)	चंद्रमसा	चंद्रमोभ्याम्	चंद्रमोभिः
(४)	चंद्रमसे	,,	चंद्रमोभ्यः
(५)	चंद्रमसः	,,	,,
(६)	,,	चंद्रमसोः	चंद्रमसाम्
(७)	चंद्रमसि	,,	चंद्रमस्सु

इस प्रकार 'वेधस्,सुमनस्,दुर्मनस्'इत्यादि शब्द चलते हैं ।

सकारान्तः पुल्लिंगो 'ज्यायस्' शब्दः ।

(१)	ज्यायान्	ज्यायांसौ	ज्यायांसः
सं०	(हे) ज्यायन्	(हे) ,,	(हे) ,,
(२)	ज्यायांसम्	,,	ज्यायसः
(३)	ज्यायसा	ज्यायोभ्याम्	ज्यायोभिः

(४)	ज्यायसे	,,	ज्यायोभ्यः
(५)	ज्यायसः	,,	,,
(६)	,,	ज्यायसोः	ज्यायसाम्
(७)	ज्यायसि	,,	ज्यायस्सु

इस शब्द के समान सब 'यस्' प्रत्ययान्त पुल्लिगी शब्द चलते हैं। 'कनीयस्, गरीयस्, श्रेयस्, लघीयस्, महीयस्' इत्यादि शब्दों के रूप ज्यायस् शब्द के समान ही होते हैं।

सकारान्तः पुल्लिंगः 'पुम्स' शब्दः।

(१)	पुमान्	पुमांसौ	पुमांसः
सं०	(हे) पुमन्	(हे) ,,	(हे) ,,
(२)	पुमांसम्	,,	पुंसः
(३)	पुंसा	पुंभ्याम्	पुंभिः
(४)	पुंसे	,,	पुंभ्यः
(५)	पुंसः	,,	,,
(६)	,,	पुंसोः	पुंसाम्
(७)	पुंसि	,,	पुंसु

इस शब्द के रूपों में विशेष यह है कि 'भ्याम्, भिः, भ्यः सु' इन व्यंजनादि प्रत्ययों के आगे होने पर 'पुम्स्' के सकार का लोप होता है। तथा स्वरादि प्रत्यय आगे आने पर नहीं होता।

हकारान्तः पुल्लिंगो 'अनडुह्' शब्दः।

(१)	अनड्वान्	अनड्वाहौ	अनड्वाहः

सं०	(हे) अनड्वन्	(हे) ,,	(हे) ,,
(२)	अनड्वाहम्	,,	अनडुहः
(३)	अनडुहा	अनडुद्भ्याम्	अनडुद्भिः
(४)	अनडुहे	,,	अनडुद्भ्यः
(५)	अनडुहः	,,	,,
(६)	अनडुहः	अनडुहोः	अनडुहाम्
(७)	अनडुहि	,,	अनडुत्सु

इस शब्द में विशेष यह है कि द्वितीया के बहुवचन से 'ड्व' के स्थान पर 'डु' होता है । तथा स्वरादि प्रत्ययों के समय अंत में 'ह' रहता है और व्यंजनादि प्रत्ययों के समय 'ह' के स्थान पर 'द्' होता है। परन्तु 'सु' प्रत्यय के पूर्व 'त' होता है।

इस प्रकार साधारण और विशेष पुल्लिंगी शब्द किस प्रकार चलते हैं इसका प्रकार बताया। अब कई शब्द ऐसे हैं कि जिन का प्रयोग बहुत नहीं पाया जाता है और जिनके कुछ विलक्षण से रूप होते हैं उनके रूपों का प्रकार यहां नहीं दिया है। अर्थात् इस पाठ को स्मरण करने से पाठकों के पास विशेष उपयोगी पुल्लिंगी शब्द चलाने का ज्ञान आजायगा। जो कुछ शब्द बाकी रहते हैं उनका वर्णन 'स्वयंशिक्षक' के तृतीय विभाग में होगा।

पाठकों से यहां इतनी प्रार्थना है कि वे इन १५ पाठों को दुबारा स्मरण करके अच्छा दृढ बनायें। ताकि कोई बात भूल न

जाय। जब ये १५ पाठ ठीक ठीक स्मरण होंगे तब ही आगे बढने का यत्न करें।

शब्द—पुल्लिंगी।

भृत्यः—सेवक, नौकर	स्नेहः—दोस्ती, मैत्री
असंतोषः—गुस्सा	वाग्मिन्—बोलने वाला, वक्ता
अपरागः—अप्रीति	महाहवः—बडा युद्ध
पादः—पांव	चरणः—पांव
भर्तृ—स्वामी	पंगुः—लूला

स्त्रीलिंगी।

संपत्तिः—पैसा, दौलत	लज्जा—लाज,शरम
विपत्तिः—दारिद्र्य, गरीबी	वाचालता—बडबडकरनेकास्वभाव
तृष्णा—प्यास	स्वाधीनता—स्वातंत्र्य

नपुंसकलिंगी।

कार्पण्यं—कृपणता, कंजूसी	पृष्ठं—पीठ
आननं—मुख	व्यसनं—कष्ट, छंद

विशेषण।

स्तूयमान—जिसकी स्तुति होरहीहै	आदिष्ट—आज्ञा किया हुवा
क्षिप्यमान—धिक्कार किया हुवा	अनादिष्ट—आज्ञा न किया हुवा
कथ्यमान—कहा हुवा	मूक—गूंगा
समुन्नम्यमान—सन्मानित	जड—अज्ञानी, अचेतन
समालाप—बराबरीसे बोलनेवाला	आलप्यमान—बोलता हुवा

ध्वजभूत—झंडेकेसमान	उच्यमान—बोलने वाला
अंध—अंधा	स्वाधीन—स्वतंत्र
	अस्वाधीन—अस्वतंत्र

इतर।

अग्रतः—आगे	प्रतीपं—विरुद्ध

क्रिया।

विज्ञपयन्ति—बताते हैं,	निलीयन्ते—छिपते हैं
विकत्थन्ते—कहते हैं	जल्पन्ति—बोलते हैं
अभिवांछन्ति—इच्छा करते हैं	सेवन्ते—सेवा करते हैं
पलाय्य—भागकर	पराक्रम्य—शौर्य करके

विशेषणों का उपयोग।

कथ्यमाना कथा	क्षिप्यमानं पात्रम्	अंधा स्त्री
उच्यमानः उपदेशः	स्तूयमानः पुरुषः	स्वाधीनं दैवतम्

[१२] भृत्य-धर्माः।

(१) भृत्या[1] अपि त एव[2] ये संपतेः विपत्तौ सविशेषं सेवन्ते।

(२) समुन्नम्यमानाः सुतरां अवनमन्ति। आलाप्यमाना न समालापाः सञ्जायन्ते।

[१२] नौकर के धर्म।

(१) नौकर भी वे ही, जो दौलत से गरीबी में अधिक सेवा करते हैं।

(२) सन्मान देने पर बहुत नम्र होते हैं। बोलने पर भी नहीं बराबरी से बोलने वाले होते हैं।

१ भृत्याः+अपि। २ ते+एव।

(३) स्तूयमाना[3] नोत्सिच्यन्ते । क्षिप्यमाणा न अपरागं गृह्णन्ति ।

(३) स्तुति करने पर घमंडी नहीं होते हैं । धिक्कार करने पर अप्रीति नहीं लेते ।

(४) उच्यमाना[4] न प्रतीपं भाषन्ते । पृष्टा[5] हितप्रियं विज्ञपयन्ति ।

(४) बोलने पर विरुद्ध नहीं बोलते । पूछने पर हितकर प्रिय बताते हैं ।

(५) अनादिष्टाः कुर्वन्ति । कृत्वा न जल्पन्ति । पराक्रम्य न विकत्थन्ते ।

(५) हुकुम न करने के पूर्व करते हैं । करके नहीं बोलते हैं । पराक्रम करके नहीं बोलते हैं ।

(६) कथ्यमाना[6] अपि लज्जां उद्वहन्ति । महाहवेष्व[7]ग्रतो[8] ध्वजभूता[9] इव लक्ष्यन्ते ।

(६) कहते हुवे भी लज्जा करते हैं । वड़े युद्ध में आगे झंडे के समान दीखते हैं ।

(७) दानकाले पलाय्य पृष्ठतो निलीयन्ते । धनात्स्नेहं भूयांसं मन्यन्ते ।

(७) दान के समय भागकर पीछे छिपते हैं । धन से मैत्री अधिक समझते हैं ।

(८) जीवितात् पुरो मरणं अभिवांछन्ति गृहाद् अपि स्वामिपादमूले सुखं तिष्ठन्ति ।

(८) जीवित से पहिले मरण चाहते हैं । घर से भी स्वामी के पांव के मूल में आनंद से ठहरते हैं ।

---

३ मानाः+न । ४ माणाः+न । ५ पृष्टाः+हित । ६ मानाः+अपि । ७ हवेषु+अग्र० । ८ अग्रतः+ध्वज । ९ भूताः+इव ।

(९) येषां च तृष्णा चरणपरिचर्यायाम्। असंतोषो[१०] हृदयाऽऽराधने। व्यसनं आननालोकने।

(१०) वाचालता गुणग्रहणे। कार्पण्यं अपरित्यागे भर्तुः।

(११) ये च विद्यमाने स्वामिनि अस्वाधीनसकलेंद्रियवृत्तयः, पश्यन्तो ऽपि अन्धा[११] इव, शृण्वन्तो[१२] ऽपि बधिरा[१३] इव, वाग्मिनो ऽपि[१४] मूका[१५] इव, जानन्तो[१६] ऽपि जडा[१७] इव, अनपहतकर–चरणा[१८] अपि पङ्गव[१९] इव, आत्मनः स्वामिचिन्तादर्शे प्रतिबिंबवद् वर्तन्ते।

कादंबरी।

(९) जिनकी इच्छा चरणों की सेवा में। असंतोष हृदय के आराधन में। व्यसन मुंह देखने में ?

(१०) गुण लेने में बहुत बोलना। कंजूसी स्वामी को न छोडने में।

(११) और जो स्वामी रहते हुवे अपने इंद्रियों की वृत्तियां अपने लिये नहीं रखते, देखते हुवे भी अंधे के समान, सुनते हुवे भी बहिरे, बोलने वाले होने पर भी मूके, जानते हुवे भी जडके समान, हाथ पांव साबत होने पर भी लूले के समान, अपने स्वामी की चिन्ता रूप शीशे में प्रतिबिंब के समान रहते हैं।

---

१० असंतोषः+हृदया०। ११ अन्धाः+इव। १२ शृण्वन्तः+अपि। १३ बधिराः+इव। १४ वाग्मिनः+अपि। १५ मूकाः+इव। १६ जानन्तः+अपि। १७ जडाः+इव। १८ चरणाः+अपि। १९ पङ्गवः+इव।

समास–विवरणम् ।

(१) भृत्यधर्माः——————	भृत्यस्य सेवकस्य धर्माः कर्तव्याणि ।
(२) सविशेषं——————	विशेषेण सहितं सविशेषम्।
(३) दानकालः——————	दानस्य कालः दानकालः ।
(४) स्वामिपाद मूलं——————	स्वामिनः पादौ स्वामिपादौ। स्वामिपादयोः मूलं स्वामि-पाद–मूलम् ।
(५) असंतोषः——————	न संतोषः असंतोषः ।
(६) अस्वाधीनसकलेंद्रियवृत्तयः——	सकलानि च तानि इंद्रियाणि सकलेंद्रियाणि । सकलें-द्रियाणां वृत्तयः सकलेंद्रिय वृत्तयः । न स्वाधीना अस्वाधीनाः । अस्वाधीनाः सकलेंद्रिय–वृत्तयः येषां ते अस्वाधीनसकलेंद्रियवृत्तयः।
(७) अनपहृत–करचरणाः————	करौच चरणौ च करचरणाः। न अपहृतः अनपहृतः । अनपहृताः करचरणाः येषां ते अनपहृतकरचरणाः ।

१६ षोडशः पाठः।

पूर्व पाठ में पाठकों से प्रार्थना की है कि वे पूर्वोक्त १५ पाठों का अध्ययन परिपूर्ण होने से पूर्व ही इस पाठ का प्रारंभ न करें। द्विवार या त्रिवार पूर्व पाठों का अध्ययन करके उनमें दिये हुवे नियमादि की अच्छी उपस्थिति होने के बाद इस पाठ को प्रारंभ करें।

पहिला अध्ययन कच्चा करके ही आगे बढ़ने की इच्छा प्रायः विद्यार्थियों में हुवा करती है। परन्तु पाठकों को ध्यान रखना चाहिए कि इस प्रकार की इच्छा आगे के उन्नति की घातक है। इसलिये पाठकों को उचित है कि वे इस प्रकार की घातक इच्छा के काबू में न आकर और समय का ख्याल न करते हुवे जो कुछ हर दिन पढ़ना है, उसको (थोड़ा ही क्यों न हो) दृढ़ करने का यत्न करें। तथा आठ दिनों के अध्ययन के पश्चाद् किये हुवे पाठों को दुबारा स्मरण करें, तथा एक महीने के अध्ययन के पश्चाद् किये हुवे पाठों को नये सिरे से पुनः अध्ययन करें। तथा संपूर्ण पुस्तक समाप्त होने पर फिर उसी का दुबारा अध्ययन कर के तत्पश्चाद् दूसरा पुस्तक प्रारंभ करें। इस प्रकार करने से ही पाठकों का अध्ययन ठीक ठीक होगा, तथा उनका प्रवेश संस्कृत मंदिर में होगा। अर्थात जो पाठक इस प्रकार अध्ययन करेंगे वे ही इस स्वयं शिक्षक ग्रंथमाला से अपनी उन्नति कर सकते हैं। अस्तु।

अब पाठकों ने पूर्वोक्त पाठ ठीक स्मरण किये हैं ऐसा समझ कर उनके आगे के अध्ययन के लिये एक दो पाठों में कुछ सर्वनामों के रूप देकर पश्चात् नपुंसकलिंगी शब्दोंके रूप बनाने का प्रकार लिखेंगे। आशा है कि पाठक पूर्ववत् उसको भी दृढ़ता पूर्वक स्मरण करेंगे।

प्रायः सर्वनामों के लिये संबोधन नहीं होता है। परन्तु 'सर्व विश्व' आदि कई ऐसे सर्वनाम हैं कि जिनका संबोधन होता भी है। नाम वह होते हैं कि जो पदार्थों के नाम हों। जैसाः— कृष्णः, रामः, गृहं, नगरं, दीपः, लेखनी, पुस्तकं इत्यादि। तथा सर्वनाम उनको बोलते हैं कि जो नामों के बदले आते हैं। जैसा— सः (वह), त्वं (तू), अहं (मैं), सर्व (सब), उभ (दो), कः (कौन), अयं (यह), इत्यादि।

अकारान्तः पुल्लिंगः 'सर्व' शब्दः।

(१)	सर्वः	सर्वौ	सर्वे
सं०	(हे) सर्व	(हे) ,,	(हे) ,,
(२)	सर्वम्	,,	सर्वे
(३)	सर्वेण	सर्वाभ्याम्	सर्वैः
(४)	सर्वस्मै	,,	सर्वेभ्य
(५)	सर्वस्मात्	,,	,,
(६)	सर्वस्य	सर्वयोः	सर्वेषाम्
(७)	सर्वस्मिन्	,,	सर्वेषु

इसी प्रकार 'विश्व, एक, उभय' इत्यादि सर्वनामों के रूप

होते हैं। 'उभ' सर्वनाम का केवल द्विवचन में ही प्रयोग होता है। जैसा :—

(१) सं० (२)	—उभौ
(३) (४) (५)	—उभाभ्याम्
(६) (७)	—उभयोः

इतने ही रूप सातों विभक्तियों के 'उभ' शब्द के होते हैं। "उभ" शब्द का "दो" ऐसा ही अर्थ होने से एकवचन तथा बहुवचन उसका संभव ही नहीं। इस कारण इस सर्वनाम के एकवचन-बहुवचन के रूप होते ही नहीं।

अकारान्तः पुल्लिंगः 'पूर्व' शब्दः।

(१)	पूर्वः	पूर्वौ	पूर्वे, पूर्वाः
(२)	पूर्वम्	,,	,, ,,
(३)	पूर्वेण	पूर्वाभ्याम्	पूर्वैः
(४)	पूर्वस्मै, पूर्वाय	,,	पूर्वेभ्यः
(५)	पूर्वस्मात्, पूर्वात्	,,	,,
(६)	पूर्वस्य	पूर्वयो	पूर्वेषाम्
(७)	पूर्वस्मिन्, पूर्वे	,,	पूर्वेषु

इस शब्द के जिस जिस विभक्ति के दो दो रूप होते हैं वे वहां ही दिये हैं पाठक सोचेंगे तो उनको पता लगेगा कि यह शब्द किसी अंश में 'देव' शब्द के समान ही चलता है और किसी अंश में 'सर्व' शब्द के समान चलता है। इसलिये इसके दो दो रूप होते हैं।

'पूर्व' शब्द के समान ही 'पर, अवर, दक्षिण, उत्तर, अपर, अधर' इत्यादि शब्द चलते हैं।

'स्व' तथा 'अन्तर' ये दो सर्वनाम ऐसे हैं कि इनके, 'पूर्व' तथा 'देव' इन दो शब्दों के समान रूप होते हैं। इस विषय में नियम यह है :—

२८ नियम—'आत्मीय, स्वकीय' अर्थ में 'स्व' के रूप 'पूर्व' के समान होते हैं। परन्तु 'जाति और धन' अर्थ में 'स्व' शब्द के रूप 'देव' शब्द के समान होते हैं।

२९ नियम—'बाह्य, परिधानीय' इन अर्थों में 'अंतर' शब्द 'पूर्व' शब्द के समान चलता है। परन्तु दूसरे अर्थ में उनके 'देव' शब्द के समान रूप होते हैं। जैसा :—

स्वः—	(१) स्वः	स्वौ	स्वे, स्वाः
	(५) स्वस्मात्, स्वात्	स्वाभ्याम्	स्वेभ्यः
	(७) स्वस्मिन्, स्वे	स्वयोः	स्वेषु
अंतरः—	(२) अंतरम्	अंतरौ	अंतरे, अंतरान्
	(३) अंतरेण	अंतराभ्याम्	अंतरैः

(४) अंतरस्मै, अंतराय ,, अंतरेभ्यः

(६) अंतरस्मात्, अंतरात् ,, ,,

(७) अंतरस्मिन्, अंतरे अंतरयोः अंतरेषु

इन दो शब्दों के अन्य विभक्तियों के रूप पाठक स्वयं बना सकते हैं। पाठकों को उचित है कि वे इन दोनों शब्दों के दोनों प्रकार के रूप अलग २ बनाकर कागज पर लिखें।

३० नियम—"प्रथम" सर्वनाम का पुल्लिग में केवल प्रथमा विभक्ति का 'पूर्व' शब्द के समान रूप होता है। अन्य विभक्तियों का 'देव' शब्द के समान होता है। इसी प्रकार 'कतिपय, अर्ध, अल्प, चरम, द्वितय, त्रितय, चतुष्टय, पञ्चतय' इत्यादि सर्वनामों के रूप होते हैं।

(१)	प्रथमः	प्रथमौ	प्रथमे, प्रथमाः
(२)	प्रथमं	,,	प्रथमान्

शेष देव शब्द के समान है।

पाठकों को चाहिये कि वे इनके रूप बनाकर लिखें, ताकि किसी प्रकार का संदेह न रहे।

शब्द—पुल्लिंगी

संधिः—सुराख, जोड़	मृदंगः—मृदंग
पणवः—ढोल	वंशः—बांसरी
प्रणयः—विनति	सुतः—पुत्र
विषादः—दुःख	नाट्याचार्यः—नाटक का आचार्य
प्रदीपः—दिवा	आक्रंदः—पुकारा, रोना

स्त्रीलिंगी

वीणा—वीणा
रजनी—रात्री
शाटी—कपड़ा
भाषा—भाषण,

नपुंसकलिंगी

भाण्डं—बरतन
अलंकरणं—अलंकार
सदनं—घर
स्तेयं—चोरी
वाद्यं—वाद्य
चौर्यं—चोरी
गांधर्वं—गायन
नाट्यं—नाटक

विशेषण

सुप्त—सोया हुवा
प्रबुद्ध—जागा
व्यवसित—लगा हुआ
निष्क्रांत—चल पड़ा
समासादित—प्राप्त किया
अतिक्रांत—समाप्त हुवा
आशान्वितः—आशा से युक्त
शापित—शाप दिया हुवा
निर्वापित—बुझाया
निबद्ध—बांधा हुवा
निष्क्रांत—चला

क्रिया

अनुशुशोच—शोक किया
स्वप्नायत—सुझा आया
प्रविवेश—घुस गया
आप्तुं—प्राप्त करने के लिये
प्रविश्य—घुसकर
वक्ति—बोलता है
कर्तित्वा—काटकर
सुष्वाप—सो गया
उत्पाद्य—बनाकर
कांक्षति—इच्छा करता है

अन्य

परमार्थतः—वास्तव में	भूमिष्ठ—जमीन में गाड़ा हुवा

विशेषणों का उपयोग

सुप्ता—बालिका	निर्वापितो—दीपः	निष्क्रान्तः—पुरुषः।
सुप्तः—पुत्रः	प्रबुद्धा—स्त्री	शापिता—नारी।
सुप्तं—मित्रम्		

(१३) चारुदत्त-सदने चौर्यम्।

(१) गच्छाति काले कस्मिंश्चिद्[1] दिने गांधर्वं श्रोतुं गतः चारुदत्तः, अतिक्रांतायां अर्धरजन्यां गृहं आगत्य समैत्रेयः सुष्वाप। (२) सुप्तयोरुभयोः[2] शर्विलक[3] इति कश्चिद् ब्राह्मणचौरः स्तेयेन द्रव्यं आप्तुं चारुदत्तस्य सदनं संधिं उत्पाद्य प्रविवेश।

---

१ कस्मिन्+चित। २ सुप्तयोः+उभ०। ३ शर्विलकः+इति।

---

(१) (गच्छाति काले)—समय जाने पर। (अतिक्रांतायां अर्धरजन्यां)—आधी रात होने पर। (२) (सुप्तयोः उभयोः)—दोनों सो जाने पर। (संधिं उत्पाद्य प्रविवेश)—सुराख करके

(३) प्रविश्य च मृदंग–पणव–वीणा–वंशादीनि वाद्यानि पुस्तकांश्चै दृष्ट्वा परं विषादं अगच्छत् । (४) आत्मानं वक्ति च 'कथं नाट्याचार्यस्य गृहं इदम् । अथवा परमार्थतो दरिद्रोऽयम्। उत राजभयाच्चौर-भयाद् वा भूमिष्ठं द्रव्यं धारयति' । (५) ततः परमार्थदरिद्रो ऽयं इति निश्चित्य, भवतु गच्छामि इति गन्तुं व्यवसिते मैत्रेयै उदस्वप्नायत । (६) 'भो वयस्य, सन्धिः इव दृश्यते, चौरामिव पश्यामि। तद् गृहातु भवान् इदं सुवर्णभाण्डम्' इति । (७) ततः च तद्वचनाद् इतस्ततो दृष्ट्वा जर्जर–स्नान–शाटी–निबद्धं अलंकरणभाण्डं उपलभ्य ग्रहीतुमना अपि 'न

---

४ पुस्तकान्+च । ५ परमार्थतः+दरिद्रः । ६ दरिद्रः+अयं । ७ भयात्+चौरः ८ मैत्रेयः+उदस्व० ।

घुसगया । (३)(परं विषादं अगच्छत्)–बहुत दुःख को प्राप्तहुवा ।(४) (आत्मानं वक्ति)–अपने आपसे बोलता है ।(परमार्थतः दरिद्रः)–वास्तव में गरीब । (भूमिष्ठं द्रव्यं धारयति) भूमि के अंदर पैसा रखता है ।(५) (मैत्रेयः उदस्वप्नायत)–मैत्रेय को स्वप्ना आगया । (७) (इतस्ततो दृष्ट्वा)–इदर उदर देख कर । (जर्जर-स्नानशाटी निबद्ध)–स्नान करने के पुराने कपडे में बांधा हुवा।(ग्रहीतुमना)–

युक्तं तुल्यावस्थं कुलपुत्रजनं पीडयितुम् । तद् गच्छामि ।' इति मनश्चकार[९]। (८) ततो[१०] मैत्रेयश्चारुदत्तं[११] उद्दिश्य पुनः उदस्वप्नायत । 'भो. वयस्य । शापितो[१२] ऽसि गोब्राह्मणकाम्यया, यदि एतत् सुवर्णभांडम् न गृह्णासि ।' (९) ततो[१३] निर्वापिते प्रदीपे 'इदानीं करोमि ब्राह्मणस्य प्रणयम्' इति भांडं जग्राह शर्विलकः मैत्रेयस्य हस्ताद् । (१०) ग्रहण-काले च मैत्रेय उत्स्वप्नायमानः आह–"भो, वयस्य, शीतलस्ते[१४] हस्तग्रहः इति"। (११) तस्मिन् चौरे निष्क्रामति गृहाद् रदनिका प्रबुद्धा सत्रासम् 'हा धिक्, हा धिक् । अस्माकं गृहे संधिं कर्तित्वा चौरो निष्क्रामति । (१२)

---

९ मनः+चकार । १० ततः+मैत्रेयः । ११ मैत्रेयः+चारुदत्तं० । १२ शापितः+असि । १३ ततः+निर्वा० । १४ शीतलः+ते ।

लेने की इच्छा । (न युक्तं तुल्यावस्थं कुलपुत्रजनं पीडयितुं)–समान अवस्था में रहने वाले कुलीन मनुष्यों को कष्ट देना योग्य नहीं । (इति मनश्चकार)–ऐसा दिल किया । (८) (शापितो ऽसि गोब्राह्मणकाम्यया)–शाप है तुझे गाय और ब्राह्मण के शपथ का । (९) (निर्वापिते प्रदीपे)–दीप बुझाने पर । (१०) (शीतलस्ते हस्तग्रहः)–ठंडा है तेरा हाथ का स्पर्श । (१२)

आर्य मैत्रेय उत्तिष्ठोत्तिष्ठ[१५] । अस्माकं गृहे संधिं कृत्वा चौरो निष्क्रान्तः' इति उच्चैः आक्रंद । सोऽपि उत्थाय चारुदत्तं प्रबोधयामास । (१३) चारुदत्तस्तु 'आशान्वितः चौरो ऽस्माकं महतीं निवासरचनां दृष्ट्वा सन्धिच्छेदनखिन्न इव निराशो गतः । सुहृद्भ्यः किं असौ कथयिष्यति, तपस्वी–सार्थवाह–सुतस्य गृहं प्रविश्य न किंचिन् मया समासादितम्' इति तं एव चौरं अनुशुशोच ।

मृच्छकटिकम् ।

---

१५ उत्तिष्ठ+उत्तिष्ठ ।

(उत्तिष्ठोत्तिष्ठ)—उठो ऊठो (उच्चैः आक्रंद)—ऊंचे से बोली ।(१३) (आशान्वितः चौरः)—आशा युक्त चोर । (महतीं निवासरचनां दृष्ट्वा)—बडा महल देख कर (संधि-छेदन-खिन्न इव निराशो गतः)—छेद करके दुःखी बनकर निराश होकर गया।(न किंचिन्मया समासादितं) नहीं कुछ भी मैंने प्राप्त किया ।

समास-विवरणम् ।

(१) समैत्रेयः————————मैत्रेयेण सहितः समैत्रेयः ।

(२) मृदंग-पणव-वंशादीनि———मृदंगश्च पणवश्च वंशश्च मृदंग-पणव-वंशाः । मृदंगपणववंशानि आदीनि येषां तानि मृदंगपणव-वंशादीनि ।

(३) भूमिष्ठं——————भूम्यां तिष्ठति इति भूमिष्ठम् ।

(४) आशान्वितः——————आशया अन्वितः आशान्वितः ।

(५) जर्जर-स्नानशाटी-निबद्धं——स्नानार्थं शाटी स्नानशाटी । जर्जरा चासौ स्नानशाटी च जर्जरस्नान शाटी । जर्जरस्नानशाट्या निबद्धं जर्जरस्नानशाटीनिबद्धम् ।

(६) सत्रासं——————त्रासेन सहितं सत्रासम् ।

१७ सप्तदशः पाठः ।

'यद्' शब्दः (पुल्लिंगः)

(१)	यः	यौ	ये
(२)	यं	,,	यान्
(३)	येन	याभ्याम्	यैः
(४)	यस्मै	,,	येभ्यः
(५)	यस्मात्	,,	,,
(६)	यस्य	ययोः	येषाम्
(७)	यस्मिन्	,,	येषु

इसी प्रकार 'अन्य, अन्यतर, इतर, कतर, कतम, त्व' इत्यादि सर्वनामों के रूप बनते हैं। 'अन्यतम' सर्वनाम के रूप 'देव' शब्द के समान होते हैं यह अवश्य ध्यान में रखना चाहिये। नहीं तो उनके रूप 'यद्' के समान बनाकर पाठक भूल करेंगे।

'किम्' शब्दः (पुल्लिंगः)

(१)	कः	कौ	के
(२)	कम्	,,	कान्
(३)	केन	काभ्याम्	कैः

इत्यादि 'यद्' शब्द के समान ही रूप होते हैं।

'तद्' शब्दः (पुल्लिंगः)

(१	सः	तौ	ते
(२)	तम्	तौ	तान्
(३)	तेन	ताभ्याम्	तैः

इत्यादि 'यद्' शब्द के समान ही रूप होते हैं।

'द्वि' शब्दः (पुल्लिंगः)

इसका केवल द्विवचन ही होता है।

(१)	द्वौ	(५)	द्वाभ्याम्
(२)	द्वौ	(६)	द्वयोः
(३)	द्वाभ्याम्	(७)	द्वयोः
(४)	द्वाभ्याम्		

'त्रि' शब्दः (पुंसि)

इस शब्द का केवल बहुवचन में ही प्रयोग होता है।

(१)	त्रयः	(५)	त्रिभ्यः
(२)	त्रीन्	(६)	त्रयाणाम्
(३)	त्रिभिः	(७)	त्रिषु
(४)	त्रिभ्यः		

'चतुर्' शब्दः (पुंसि) बहुवचनमेव ।

(१)	चत्वारः	(४-५)	चतुर्भ्यः
(२)	चतुरः	(६)	चतुर्णाम्
(३)	चतुर्भिः	(७)	चतुर्षु

'पञ्चन्, षष्, सप्तन्, अष्टन्, नवन्, दशन्, एकादशन्, द्वादशन्, त्रयोदशन्, चतुर्दशन्, पञ्चदशन्, षोडशन्, सप्तदशन्, अष्टादशन्' ये शब्द इसी प्रकार नित्य बहुवचनान्त चलते हैं ।

(१-२)	पञ्च	षट्	सप्त	अष्टौ	नव	दश
(३)	पञ्चभिः	षड्भिः	सप्तभिः	अष्टभिः	नवभिः	दशभिः
(४-५)	पञ्चभ्यः	षड्भ्यः	सप्तभ्यः	अष्टाभ्यः	नवभ्यः	दशभ्यः
(६)	पञ्चानाम्	षण्णाम्	सप्तानाम्	अष्टानाम्	नवानाम्	दशानाम्
(७	पञ्चसु	षट्सु	सप्तसु	अष्टासु	नवसु	दशसु

इसी प्रकार 'एकादश' वगैरे शब्द चलाने चाहिए । पाठकों को चाहिए कि वे इन सब शब्दों के रूप बनाकर लिखें । ताकि कभी भूल न हो जाय । क्योंकि ये शब्द बहुत उपयोगी हैं और दैनिक व्यवहार में प्रयुक्त होते हैं इसलिये इनकी ओर विशेष ध्यान देना उचित है ।

३१ नियम—

पदान्तके 'न्' के पश्चात् 'च अथवा छ' आनेसे न्का अनुस्वार व श् बनता है

,,	,,	,,	ट्	,,	ठ्	,,	,,	,,	ष्	,,
,,	,,	,,	त्	,,	थ्	,,	,,	,,	स्	,,

„ „ „ ज् झ श् „ „ ञ् „

„ „ „ ड अथवा ढ „ „ ण् „

„ „ „ ल „ „ ँ „

उदाहरण:—तान्	+	चोरान्	=	तांश्चोरान्
सर्वान्	+	छात्रान्	=	सर्वांश्छात्रान्
तस्मिन्	+	टीका	=	तस्मिंष्टीका
तान्	+	तरून्	=	तांस्तरून्
कान्	+	जनान्	=	काञ्जनान्
यान्	+	शत्रून्	=	याञ्छत्रून्
ता	+	डिंभान्	=	ताण्डिभान्
तान्	+	लोकान्	=	तांल्लोकान्

शब्द—पुल्लिंगी

मनीषिन्—विद्वान
अनुचरः—नौकर, सेवक
जंबूकः—भेड़िया
उष्ट्रः—ऊंट
खलः—दुष्ट
काकः—कौवा
सार्थः—श्रीमान्, व्यौपारी
आहारः—भोजन
वायसः—कौवा
उपवासः—अभोजन, लंघन

स्त्रीलिंगी

उक्तिः—भाषण
कुक्षिः—पेट, बगल

नपुंसकलिंगी

पापं—पातक	कूटं—सलाह
शरीरवैकल्यं—शरीर की शिथिलता	मांसं—गोश्त

विशेषण

परिक्षीण—दुबला	बुभुक्षित—भूका
अनुगृहीत—उपकार किया हुवा	स्वाधीन—स्वतंत्र, पास रखा हुवा, अपने काबू में
व्यग्र—दुःखी	

क्रिया

जग्मुः—गये	विदार्य—फाड़कर
दोलायते—हिलती है	अकथयत्—कहा

विशेषणों का उपयोग

बुभुक्षितः—मनुष्यः।	क्षीणः—पुरुषः।
बुभुक्षिता—नारी।	क्षीणा—माता।
बुभुक्षितं—मनः।	क्षीणं—मित्रम्।

(१४) सिंहानुचराणाम् कथा ।

(१) अस्ति कस्मिंश्चिद् वनोद्देशे मदोत्कटो नाम सिंहः । तस्य सेवकास्त्रयः[1] काको व्याघ्रो जंबूकश्च[2] । (२) अथ तैर्भ्रमद्भिः सार्थाद् भ्रष्टः कश्चिद् उष्ट्रो[3] दृष्टः पृष्टश्च[4]। कुतो[5] भवान् आगतः । (३) स च आत्मवृत्तांतं अकथयत् । ततस्तैर्नीत्वा[6]ऽसौ सिंहाय समर्पितः । तेन अभयवाचं दत्वा चित्रकर्ण[7] इति नाम कृत्वा स्थापितः । (४) अथ कदाचित् सिंहस्य शरीर-वैकल्याद् भूरि-वृष्टिकारणात् च आहारं अलभमानास्ते[8] व्यग्रा[9] बभूवुः।

---

१ सेवकाः+त्रय । २ जंबूकः+च । ३ उष्ट्रः+दृष्टः । ४ पृष्टः+च । ५ कुतः+भवान् । ६ ततः+तैः+नीत्वा+असौ ।७कर्णः+इति । ८ मानाः+ते । ९ व्यग्राः+बभूवुः ।

---

(१) (वनोद्देशे)—जंगल के एक स्थान में । (मदोत्कटः)—घमंड से भरा हुआ—सिंह का नाम । (२) (सार्थाद्भ्रष्टः कश्चिदुष्ट्रो दृष्टः)—काफला से अलग हुवा हुआ कोई एक ऊंठ देखा ।(पृष्टश्च) और पूछा । (कुतो भवानागतः)—कहां से आप आये । (३) (ततस्तैर्नीत्वाऽसौ सिंहाय समर्पितः) नंतर उनोने लेजाकर यह सिंह के लिये अर्पण किया ।(तेन अभयवाचं दत्वा)—उसने अभयवचन देकर । (४) (शरीर-वैकल्यात्)—शरीर अस्वस्थ होने से । (भूरि

(५) ततस्तैः[10] आलोचितम्। चित्रकर्ण एव यथा स्वामी व्यापादयति तथाऽनुष्ठीयताम्[11]। (६) किं अनेन कण्टकभुजा। व्याघ्र उवाच। स्वामिनाऽभयवाचं[12] दत्वा ऽनुगृहीतः। तत्कथं एवं संभवति। (७) काको ब्रूते। इह समये परिक्षीणः स्वामी पापं अपि करिष्यति। बुभुक्षितः किं न करोति पापम्। (८) इति संचिन्त्य सर्वे सिंहान्तिकं जग्मुः। सिंहेन उक्तम्। आहारार्थं किंचित् प्राप्तम्। (९) तैः उक्तम्। यत्नाद् अपि न प्राप्तं

---

१० ततः+तैः। ११ तथा+अनु० १२ स्वामिना+अभय।

वृष्टिकारणात्) बहुत वर्षा होने से। (५) (तैरालोचितं)—उनों ने सोचा। (यथा स्वामी व्यापादयति तथा ऽनुष्ठीयतां)—जैसा स्वामी खायगा वैसा कीजिये। (६) (किमनेन कण्टकभुजा)—क्या इस कांटे खाने वाले ने (करना है)। (अनुगृहीतः) मेहरबानी की (तत् कथमेवं संभवति)—तो कैसे ऐसा हो सकता है। (७) (परिक्षीणः) अशक्त। (बुभुक्षितः किं न करोति पापं)—भूखा कौनसा पाप नहीं करता। (८) (इति संचिन्त्य) इस प्रकार विचार करके। (सर्वे सिंहान्तिकं जग्मुः)सब शेरके पास गये।(आहारार्थं) भोजन के लिये। (९) (कोऽधुना जीवनोपायः)—कौनसा अब

किंचित् । सिंहेनोक्तम्[१३] । कोऽधुना[१४] जीवनोपायः । (१०) देव स्वाधीनाहार-परित्यागात् सर्वनाशः अयं उपस्थितः । (११) सिंहेनोक्तम्[१३] । अत्र आहारः कः स्वाधीनः।काकः कर्णे कथयति । चित्रकर्ण इति (१२) सिंहो भूमिं स्पृष्ट्वा कर्णौ स्पृशति । अभयवाचं दत्वा धृतो ऽयं[१५] अस्माभिः । तत् कथं संभवति । (१३) तथा च सर्वेषु दानेषु अभयप्रदानं महादानं वदन्ति इह मनीषिणः । (१४) काको ब्रूते नैसौ[१६] स्वामिना व्यापादयितव्यः। किंतु अस्माभिरेव[१७] तथा कर्तव्यं यथा असौ स्वदेहदानं अंगी

१३ सिंहेन+उक्तं । १४ कः+अधुना । १५ धृतः+अयं ।
१६ न+असौ । १७ अस्माभिः+एव ।

जिंदा रहने के लिये उपाय है।(१०) (स्वाधीनाऽऽहारपरित्यागात्) अपने पास का भोजन छोडने से । (सर्वनाशो ऽयमुपस्थितः)- सबका यह नाश आरहा है । (११) (अत्राहारः कः स्वाधीनः)- यहां कौनसा भोजन अपने पास है । (१२) (भूमिं स्पृष्ट्वा कर्णौ स्पृशति)-जमीन को स्पर्श करके कानों को हाथ लगाता है । (१३) (सर्वेषु दानेषु अभयदानं महादानं वदन्ति)-सब दानों में अभयदान बडा दान है ऐसा विद्वान कहते हैं । (१४) (असौ स्वदेहदानमंगीकरोति)-यह अपना शरीर देना स्वीकार करेगा ।

करोति। (१५) सिंहः तत् श्रुत्वा तूष्णीं स्थितः। ततोऽसौ[18] वायसः कूटं कृत्वा सर्वान् आदाय सिंहान्तिकं गतः। (१६) अथ काकेन उक्तम्। देव यत्नाद् अपि आहारो न प्राप्तः। अनेकोपवास-खिन्नः स्वामी। (१७) तद् इदानीं मदीयमांसं उपभुज्यताम्। सिंहेन उक्तम्। भद्र वरं प्राणपरित्यागः न पुनः इदृशी कर्मणि प्रवृत्तिः। (१८) जंबूकेन अपि तथोक्तम्। ततः सिंहेन उक्तम्। मैवम्। अथ चित्रकर्णो ऽपि जात-विश्वासः तथैव आत्मदानं आह। (१९) तद् वदन् एव असौ व्याघ्रेण कुक्षिं विदार्य व्यापादितः सर्वैर्भक्षितश्च[19]। अतो ऽहं[20]

१८ ततः+असौ। १९ सर्वैः+भक्षितः। २० अतः+अहं।

(१५) (तूष्णीं स्थितः)–चुपचाप रहा। (वायसः कूटं कृत्वा)–कौवा कपटकी सलाह करके। (सर्वानादाय सिंहान्तिकं गतः) सब को लेकर शेरके पास गया। (१६) (अनेकोपवास-खिन्नः)–अनेक उपवासों मे दुःखित। (१७) (मदीयमांसं उपभुज्यताम्)–मेरा गोश्त खाव। (वरं प्राणपरित्यागः)–मरना अच्छा है। (न पुनः कर्मणि ईदृशी प्रवृत्तिः)–परन्तु कर्म में ऐसा प्रयत्न ठीक नहीं। (१८)(जातविश्वासः)जिसका विश्वास हुवा है। (आत्मदानमाह)–अपना दान बोला। (१९) (कुक्षिं विदार्य)–बगल फाड कर।

ब्रवीमि सतां अपि मतिः खलोक्तिभिः दोलायते[21] इति ।

हितोपदेशः ।

---

२१ दोलायते+इति ।

(सतामपि मतिः खलोक्तिभिर्दोलायते)—सज्जनों की भी बुद्धि दुष्टों के भाषण से चंचल होती है ।

१८ अष्टादशः पाठः ।

'अस्मद्' शब्दः

(इनके तीनों लिंगों में समान ही रूप होते हैं)

(१)	अहम्	आवाम्	वयम्
(२)	माम, मा	आवाम, नौ	अस्मान्, नः
(३)	मया	आवाभ्याम्	अस्माभिः
(४)	मह्यं, मे	आवाभ्यां, नौ	अस्मभ्यं, नः
(५)	मत्	आवाभ्याम्	अस्मत्
(६)	मम, मे	आवयोः, नौ	अस्माकं, नः
(७)	मयि	आवयोः	अस्मासु

इस शब्द के द्वितीया, चतुर्थी, षष्ठी इन तीनों विभक्तियों के प्रत्येक वचन के दो दो रूप होते हैं । इसी प्रकार 'युष्मद' शब्द के भी होते हैं । देखिये :—

(१)	त्वम्	युवाम्	यूयम्
(२)	त्वां, त्वा	युवाम्, वाम्	युष्मान्, वः
(३)	त्वया	युवाभ्याम्	युष्माभिः
(४)	तुभ्यम् ते	युवाभ्याम्, वाम्	युष्मभ्यं, वः
(५)	त्वत्	युवाभ्याम्	युष्मत्
(६)	तव, ते	युवयोः, वाम्	युष्माकं, वः
(७)	त्वयि	युवयोः	युष्मासु

इस शब्द के द्वितीया, चतुर्थी तथा षष्ठी के प्रत्येक वचन के दो दो रूप होते हैं।

'अदस्' शब्दः (पुंसि)

(१)	असौ	अमू	अमी
(२)	अमुम्	,,	अमून्
(३)	अमुना	अमूभ्याम्	अमीभिः
(४)	अमुष्मै	,,	अमीभ्यः
(५)	अमुष्मात्	,,	,,
(६)	अमुष्य	अमुयोः	अमीषाम्
(७)	अमुष्मिन्	,,	अमीषु

३२ नियम—

पदान्त के त का 'च, छ, श्' सामने आने पर च् बनता है।

,,	,,	ज् झ्	,,	ज्	,,
,,	,,	ट ठ	,,	ट्	,,
,,	,,	ड ढ	,,	ड्	,,
,,	,,	ल	,,	ल्	,,

उदाहरण :—

तत्	+	चरणौ	=	तच्चरणौ
तत्	+	छाया	=	तच्छाया
तत्	+	शास्त्रम्	=	तच्छास्त्रम्
तत्	+	जलम्	=	तज्जलम्
यत्	+	झर्झरः	=	यज्झर्झरः
तत्	+	टीका	=	तट्टीका
यत्	+	डयनं	=	यड्डयनम्
तस्मात्	+	लोकात्	=	तस्माल्लोकात्

यह नियम बहुत उपयोगी है। जहां जहां संभव हो वहां वहां नियम का उपयोग करके ठीक प्रकार से संधि करने चाहिए। ताकि संधि करने का अभ्यास दृढ़ हो जाय।

३३ नियम—'त्' के बाद अनुनासिक आने से 'त्' का 'न्' होता है तथा विकल्प से 'द्' भी होता है।

तत्	+	मनः	=	तन्मनः,	तद्मनः
यत्	+	नमनम्	=	यन्नमनम्,	यद्नमनम्
तस्मात्	+	नित्यम्	=	तस्मान्नित्यम्,	तस्माद्नित्यम्

यहां पाठकों ने स्मरण रखना चाहिए कि नकार होने वाला पहिला रूप ही बहुत प्रसिद्ध है।

शब्द—पुल्लिंगी

प्रबोधः—ज्ञान, जागृति
प्रकाशः—उजाला
सचिवः—प्रधान, मंत्री
महाभागः—महाशय
सौरभ—सुगंध
अंजलिः—हाथ जोड़
वत्सरः—वर्ष, साल
प्रधानः—मुख्य, मंत्री
महीपतिः—राजा, भूपति
भूपः—राजा, पृथ्वीपति
भूपालः—भूपति, भूमिपाल
सार्वभौमः—सम्राट्, राजाधिराज
अंजलिबंधः—हाथ जोड़
अंशः—हिस्सा

स्त्रीलिंगी

निःसारता—खुश्की, सार न होना
निःश्रीकता—निःसारता

नपुंसकलिंगी

कृत्—करने वाला
रूपकं—अलंकार
विभवं—धन दौलत
सदनं—घर
विश्वमंडलं—जगन्मंडल
द्वारं—दरवाजा
तत्वं—सार
अंतरं—अंदर का, मन
प्रयाणं—प्रवास

विशेषण

सहज—साथ उत्पन्न हुवा २ स्वभाविक
वर्तिन्—रहने वाला
मन्वान—मानने वाला
प्रतिश्रुतवत्—प्रतिज्ञा करने वाला वचन देने वाला

नियोज्य—सेवक
सरल—सीधा
इतर—अन्य
भद्रमुख—श्रेष्ठ
प्रत्यावृत्त—लौटा हुआ
मृत—मरा हुवा
संवृत्त—हुवा हुवा
निश्चेतन—अचेतन, जड़
अपक्रांत—अलग हुवा हुवा

विच्छिन्न—टूटा
बहु—बहुत
आक्रांत—व्याप्त
निकृष्ट—नीच
उपयुक्त—उपयोगी
अनुपयुक्त—निरुपयोगी
प्रतिनिवृत्तः—वापस आया
निकला—शिथिल
सुव्यवस्थित—ठीक ठीक
उन्नत—उठा हुवा

क्रिया

विश्वसिति—विश्वास करता है
स्निह्यति—स्नेह करता है
मन्यन्ते—मानते हैं
उपगच्छेयुः—पास आवेंगे
उपक्रम्य—प्रारंभ करके
पालयति—पालन करता है
आकर्ण्य—सुनकर
वर्तेरन्—रहेंगे
अधिचिक्षिपुः—नीचे मानने लगे

उपाक्रंसत—प्रारंभ किया
श्रूयतां—सुनिये
प्रातिष्ठत—चल पड़ा
पप्रच्छ—पूछा
प्रायात्—चला
निर्णीयतां—निश्चय कीजिये
पर्यस्य—घूमकर
उपयुज्यते—उपयोग किया जाता है

कथा में आये हुए विशेष शब्दों के अध्यात्मिक अर्थ

नवद्वारं नगरं—शरीर

सचिवः—मन

प्रकाशानंदः—आंख

स्पर्शानंदः—त्वक्, चमड़ा

संल्लापानंदः—वाक्, मुंह

आनंदवर्मन्—जीवात्मा

सार्वभौमः—ईश्वर

सौरभानंदः—नाक

रसानंदः—जिह्वा

ये अर्थ वास्तविक इन शब्दों के नहीं परन्तु कथा के प्रसंग से माने हुए है। इतना पाठकों को ध्यान रखना चाहिये।

[१५]प्रबोधकृद् रूपकम्।

(१) अस्ति विश्वमंडलेषु नवद्वारं नाम नगरम्। तत्र च बभूव पतिः आनंदवर्मा नाम।

(२)आसीच्च[१] अस्य कोऽपि[२] सचिवः अन्ये च नियोज्या[३] बहवः।

(३) सरल-तम-मतिरसौ[४] भूपः सर्वेषु अपि एतेषु तथा विश्वसिति तथा च स्निह्यति तथैव

(१५) ज्ञान देनेवाली आलंकारिक कथा।

(१ इस जगत् में एक नौ दरवाजों वाला शहर है। वहां आनंदवर्मा नामक राजा हुआ।

(२) उसका कोई एक मंत्री था और अन्य सेवक बहुत थे।

(३) अति सरल बुद्धि वाला यह राजा इन सबके ऊपर वैसा हि विश्वास रखता और स्नेह

---

१ आसीत्+च। २ कः+अपि। ३ नियोज्याः+बहवः। ४ मतिः+असौ।

चैतान् पालयति, यथैते सर्वेऽपि प्रत्येकं वयमेव भूपाला इति मन्यन्ते स्म ।

करता, और (इनको) वैसा ही पालता था, कि जिससे ये सब (हरएक हम ही राजे (हैं) ऐसा मानते थे ।

(४) गच्छता च कालेन विभव-सहजेन अनात्मज्ञ-भावेन आक्रान्ताः सर्वेऽपि स्वेतरं निकृष्टं आत्मानं एव च प्रधानं मन्वाना आनंदवर्माणं अपि अधिचिक्षिपुः ।

(४) कुछ समय जाने पर दौलत के साथ उत्पन्न होने वाले (आत्मविषयक) अज्ञान से युक्त हुवे हुवे सब अपने से दूसरे को नीच और अपने आप को मुख्य मानते हुवे आनंदवर्मा को भी नीचे मानने लगे ।

(५) उपाक्रंसत च विवादं अन्योऽन्यम् । अथ एवं विवदमाना एते कमपि सार्वभौमं उपगत्य प्रोचुः । महाभाग, निर्णीयतां कोऽस्मासु प्रधान इति ।

(५) (उनोंने) प्रारंभ किया झगडा एक दूसरे से । इस प्रकार झगडने वाले वे किसी सम्राट के पास जाकर बोले । हे श्रेष्ठ, निश्चय कीजिये कौन हमारे में मुख्य है ।

(६) सार्वभौमः प्राह । भद्रमुखाः श्रूयतां तत्त्वम् । युष्मासु यस्मिन् अपक्रान्ते सर्वेऽपि यूयं

(६) महाराजाधिराजने कहा । हे सज्जनो सुन लीजिये तत्व । तुम्हारे अंदर से जिसके जानेसे

५ च+एतान् । ६ यथा+एते । ७ सर्वे+अपि । ८ अन्यः+अन्यं । ९ कः+अस्मासु ।

निःसारतां चा[10]नुपयुक्तां चोपे[11]गच्छेयुः स एव प्रधानतमः ।

सब तुम निःसत्व और निकम्मे हो जाओगे वही सबमें श्रेष्ठ है।

(७) तत् क्रमशः उपक्रम्य निश्चीयतां कः प्रधान इति । तद् आकर्ण्य प्रसन्नान्तराः सर्वेऽपि तथा कर्तुं प्रतिश्रुतवन्तः ।

(७) इसलिये क्रम से प्रारंभ करके निश्चय कीजिये कि कौन मुख्य है । वह सुनकर प्रसन्न-चित्त होकर सब ने वैसा करने के लिये प्रतिज्ञा की ।

(८) अ[12]थैतेषु प्रथमं प्रातिष्ठत कोऽपि नियोज्यः प्र[13]काशानन्दो नाम ।

(८) अब इनमें से पहिले चल पड़ा कोई एक नौकर प्रकाशानंद नामक ।

(९) आ-वत्सरं च देशान्तरे पर्यट्य प्र[14]त्यावृत्तोऽयं अन्यान् पप्रच्छ । कथं वा भव[15]न्तो मयि गतेऽवर्तन्त इति ।

(९) एक वर्ष अन्य देश में घूमघामकर लौटकर, यह दूसरों से पूछने लगा किस प्रकार आप मेरे जाने पर रहे थे ।

(१०) अन्ये प्राहुः । यथा एक-सदन-वर्तिषु पुरुषेषु एकस्मिन् मृते, अपरे वर्तेरं[16]स्तथा इति ।

(१०) दूसरे बोले । जिस प्रकार एक मकान में रहने वाले पुरुषों के अंदर एक मरने पर दूसरे रहते हैं वैसे ।

---

१० च+अनुपयु० । ११ च+उपग० । १२ अथ+एतेषु । १३ प्रकाशानंदः+नाम । १४ वृत्तः+अयं । १५ भवन्तः+मयि । १६ वर्तेरन्+तथा ।

(११) ततोऽपरः सौरभानंदो नाम प्रयात्। तस्मिन् प्रतिनिवृत्ते स्पर्शानंदः। तदुत्तरं[१७] रसानंदः। तदनु संल्लापानंदः। ततः परं सचिवः। इति एवं क्रमेण सर्वेऽपि प्रस्थाय प्रतिनिवृत्य च विनाऽपि[१८] आत्मानं अन्येषां अविच्छिन्न-सुख-शालितां प्रत्यक्षीचक्रुः।

(१२) अथ महीपतिः आनंदवर्मा प्रस्थातुं उपाक्रमत। प्रतिष्ठमान[१९] एव च अस्मिन् विकलविकला इव अभवन् अन्ये।

(१३) निःश्रीकतां च अवापुः। ऊचतुश्च[२०] सांजलिबंधम्। भवान एव अस्मासु प्रधानः। तत् कृतं प्रयाणाऽऽयासेन[२१]।

(१४) भवन्तं अन्तरा हि निश्चेतना[२२] इव संवृत्ताः स्म इति।

(११) बाद दूसरा सौरभानंद नामक चल पड़ा। वह लौट आने पर स्पर्शानंद। उसके बाद रसानंद। उसके पीछे संल्लापानंद। पश्चात् प्रधान। इस प्रकार क्रम से सब भी चले जा और लौट आकर अपने बिना दूसरों के सुख में कोई फरक नहीं आता ऐसा प्रत्यक्ष किया।

(१२) बाद में राजा आनंदवर्मा चलने लगा। वह चलने लगते ही (सब दूसरे) गलित-(अशक्त) होगये।

(१३) और शोभा रहित बने। बोलने लगे हाथ जोड़ कर। आप हि हमारे में श्रेष्ठ। तो बस (अब) जाने का कष्ट।

(१४) आपके सिवाय हम अचेतन जैसे होगये।

---

१७ तद्+उत्तरं। १८ विना+अपि। १९ मानः+एव।
२० ऊचतुः+च। २१ प्रयाण+आयास। २२ चेतनाः+इव।

(१५) तद् आकर्ण्य प्रतिन्य वर्तत श्रीमान् आनंदवर्मभूपालः। आसीच्च यथापूर्वं सुव्यवस्थितं सर्वम् ।

संस्कृत चंद्रिका ।

(१५) यह सुनकर वापस आया श्रीमान आनंदवर्मा महाराज । और हुवा पूर्व के समान सब ठीकठाक (व्यवहार) ।

समास-विवरणम् ।

(१) प्रबोधकृत ———— प्रबोधं ज्ञानं करोतीति प्रबोधकृत्। ज्ञानकृत ।

(२) नवद्वारं ———— नव द्वाराणि यस्मिन् तत् नवद्वारम् । नवद्वारयुक्तम् ।

(३) सरल-तम-मतिः ———— अतिशयेन सरला सरलतमा । सरलतमा मतिः यस्य स सरलतममतिः । सरलतमबुद्धिः ।

(४) विभव-सहजः ———— विभवेन सहजायते इति विभव-सह-जः ।

(५) अनात्मज्ञभाव ———— आत्मानं जानाति इति आत्मज्ञः । न आत्मज्ञः अनात्मज्ञः । अनात्मज्ञस्य भावः । आत्मज्ञानहीनता ।

(६) प्रसन्नांतराः ———— प्रसन्नं अंतरं येषां ते प्रसन्नान्तराः। हृष्टमनस्काः ।

(७) अविच्छिन्न-सुखशालि-तां ———— अविच्छिन्ना चासौ सुखशालिता च अविच्छिन्नसुखशालित

१९ एकोनाविंशः पाठ

'एतद्' शब्दः (पुंसि)

(१)	एषः	एतौ	एते
(२)	एतम्, एनम्	एतौ, एनौ	एतान्, एनान्
(३)	एतेन, एनेन	एताभ्याम्	एतैः
(४)	एतस्मै	"	एतेभ्यः
(५)	एतस्मात्	"	"
(६)	एतस्य	एतयोः, एनयोः	एतेषाम्
(७)	एतस्मिन्	" "	एतेषु

'इदम्' शब्दः (पुंसि)

(१)	अयम्	इमौ	इमे
(२)	इमम्, एनम्	इमौ, एनौ	इमान्, एनान्
(३)	अनेन, एनेन	आभ्याम्	एभिः
(४)	अस्मै	"	एभ्यः
(५)	अस्मात्	"	"
(६)	अस्य	अनयोः एनयोः	एषाम्
(७)	अस्मिन्	" "	एषु

इन दोनों शब्दों के जिन जिन विभक्तियों के दो दो रूप होते हैं, वे ऊपर दिये हैं। ये दोनों शब्द अत्यंत उपयोगी हैं इस कारण पाठकों को चाहिए कि वे इनको ठीक प्रकार से स्मरण करें, और कभी न भूलें।

'प्रथम' शब्दः (पुल्लिंग में)

(१)	प्रथमः	प्रथमौ	प्रथमे, प्रथमाः
(२)	प्रथमं	,,	प्रथमान्
(३)	प्रथमेन	प्रथमाभ्याम्	प्रथमैः

देव शब्द के समान इसके शेष रूप होते हैं, केवल प्रथमा विभक्ति के बहुवचन के दो रूप होते हैं। नियम ३० में (पृ० १६६ पर) इस बात का उल्लेख किया है। वही बात स्पष्ट होने के लिये यहां लिखी है। इसी प्रकार 'द्वितय, त्रितय' इत्यादि नियम ३० में कहे हुवे शब्दों के विषय में जानना चाहिए।

'द्वितीय' शब्दः (पुंसि)

(१)	द्वितीयः	द्वितीयौ	द्वितीये, द्वितीयाः
(२)	द्वितीयम्	,,	द्वितीयान्
(३)	द्वितीयेन	द्वितीयाभ्याम्	द्वितीयैः
(४)	द्वितीयस्मै, द्वितीयाय	,,	द्वितीयेभ्यः
(५)	द्वितीयस्मात् द्वितीयात्	,,	,,
(६)	द्वितीयस्य	द्वितीययोः	द्वितीयानाम्
(७)	द्वितीयस्मिन्, द्वितीये	,,	द्वितीयेषु

इसी प्रकार तृतीय शब्द के रूप होते हैं। पूर्वोक्त 'द्वितय, त्रितय' शब्द तथा यहां कहे हुवे 'द्वितीय, त्रितीय' शब्द भिन्न भिन्न हैं। यह बात पाठकों ने भूलनी नहीं चाहिए।

इस प्रकार सर्वनामों के रूपों का विचार हो गया । यहां तक नाम, तथा सर्वनाम का जो विचार हुवा है, तथा जो जो रूप दिये हैं, वे सब पुल्लिंग में समझने चाहिए । स्त्रीलिंग तथा नपुंसकलिंग के शब्दों के रूप भिन्न प्रकार से होते हैं । उनका आगे वर्णन होगा ।

३४ नियम—पदान्त के 'त्' का सामने 'श्' आने से च् बनता है तथा शकार का विकल्प से छ् बनता है ।

३५ नियम—पदान्त के 'न्' का सामने 'श्' आने से ञ् बनता है तथा शकार का विकल्प से छ् बनता है। उदाहरणः—

तत् + शस्त्रम् = तच्शस्त्रम्, तच्छस्त्रम्

तान् + शावकान् = ताञ्शावकान्, ताञ्छावकान्

३६ नियम—'ञ और श' के बीच में, तथा 'ञ और छ' के बीच में विकल्प से 'च्' लगाया जाता है। उदाहरणः—

तान्+शत्रून्=ताञ्शत्रून्, ताञ्छत्रून्, ताञ्चशत्रून्, ताञ्चछत्रून् । इस प्रकार इस संधी के चार रूप बनते हैं ।

शब्द—पुल्लिंगी ।

अभिषेकः—स्नान
राज्याभिषेकः—राजगद्दी पर बैठना
हारः—कंठा, माला
मुक्ताहारः—मोतियों का कंठा
आदेशः—आज्ञा
कलशः—लोटा
किरीटः—मुकुट, ताज़
अंतः—अंत, आखीर, पश्चात्
भ्रातृ—भाई

पौरः— नागरिक

जनपदः—देश

मूर्धनि— शिर पर

चामरः—चवर

मूर्धन्—शिर

स्त्रीलिंगी ।

प्रभृति—मुख्य, प्रारंभ

भार्या—स्त्री

मुक्ता —मोती

कोटी—कोटी संख्या, अवस्था

नपुंसकलिंगी ।

पीठं—आसन

रत्नं—जेवर,

विशेषण ।

शुभ—पवित्र

दिव्य—स्वर्गीय, उत्तम

पर—श्रेष्ट

रत्नमय—रत्नों से भरा हुवा

सत्यसंध—सत्य प्रतिज्ञा करने वाला

विसृष्ट—भेजा हुवा

महार्ह—बहुमोल

पूजित —सत्कार किया हुवा

पूर्ण—भराहुवा

श्वेत—सफेद

दीन—अनाथ

भूरि—बहुत

यथार्ह—योग्यता के अनुकूल

क्रिया ।

प्रतिनिववृते—लौट आया (वह)

आनिन्युः—लाये (वे)

दधतुः—(दोनों ने) धारण किये

अधिजग्मुः—(वे) प्राप्त हुए

सन्निवेशयांचकार—बिठलाया

समानिन्युः—लाये

प्रेषय—भेज

निवेदयामास–निवेदन किया (वह)

अभिषिषिचुः—अभिषेककिया (वे)

निहत्य—मारकर

नियोजयामास—नियुक्त किया (वह)

जग्राह—पकडा (वह)

समर्पयांचकार—अर्पण किया

(१६) श्रीरामचन्द्रस्य राज्याऽभिषेकः ।

(१) श्रीरामचन्द्रः दशरथस्य आदेशाद् वनं गत्वा तत्र लंकाधिपतिं रावणं निहत्य, चतुर्दश-संवत्सरान्ते, भार्यया सीतया, भ्रात्रा लक्ष्मणेन, हनूमत्प्रभृतिभिः वानरैः सह अयोध्यां राजधानीं प्रतिनिवर्त्तते । (२) तदा श्रीरामचन्द्रस्य मातरः, भरतः, शत्रुघ्नः मंत्रिणः, सकलाः पौराश्च[1] आनंदस्य परां कोटिं अधिजग्मुः । (३) ततो भरतः सुग्रीवं उवाच, हे प्रभो ! श्री रामचंद्रस्य अभिषेकार्थं शुभं सिन्धुजलमानेतुं[2] दूतान् आशु प्रेषय इति । (४) तदनु सुग्रीवो वानरश्रेष्ठान्[3] तस्मिन् कर्मणि नियोजयामास । (५) ते जलपूर्णान् सुवर्णकलशान् सत्वरं

---

१ पौराः+च । २ जलं+आनेतुं । ३ सुग्रीवः+वानर० ।

---

(१) (चतुर्दश—संवत्सरान्ते)—चौदा वर्षों के पश्चात् । (भ्रात्रा लक्ष्मणेन सह)—भाई लक्ष्मण के साथ। (२) (श्रीरामचंद्रस्य-मातरः)—श्रीरामचंद्र की माताएं । (सकलाः पौराः)— नगर के सब लोक ।(आनंदस्य परां कोटिं अधिजग्मुः) आनंद की उच्चतम अवस्था को प्राप्त हुवे । (३) (दूतानाशु प्रेषय)—सेवकों को शीघ्र भेज । (४) (तस्मिन्कर्मणि नियोजयामास)—उस कार्य में लगाये ।

समानिन्युः । (६) तत्पश्चाद् रामस्य अभिषेकार्थं शत्रुघ्नो वसिष्ठाय निवेदयामास । (७) ततो[4] वसिष्ठो[5] मुनिः सीतया सह रामं रत्नमये पीठे सन्निवेशयांचकार । (८) अनंतरं सर्वे मुनयः श्रीरामभद्रं पावनजलैरभिषिषिचुः । (९) तत्पश्चाद् महार्हं रत्नकिरीटं वशी वसिष्ठः श्रीरामचंद्रस्य मूर्धनि स्थापयामास । (१०) तदानीं रामस्य शीर्षोपरि पाण्डरं छत्रं शत्रुघ्नो जग्राह। (११) सुग्रीव-बिभीषणौ दिव्ये श्वेतचामरे दधतुः । (१२) तस्मिन् काले इन्द्रः परमप्रीत्या धवलं मुक्ताहारं श्रीरामचंद्राय समर्पयांचकार । (१३) एवं प्रजावत्सले सत्यसंधे धर्मात्मनि रामचन्द्रे राज्ये अभिषिच्यमाने सर्वे जानपदाः आनंदस्य परां कोटिं गताः । (१४) तस्मिन् काले रामो[6] दीनेभ्यो[7] भूरि द्रव्यं ददौ । (१५) ततः सुग्रीवादयः सर्वे तेन यथार्हं पूजिताः विसृष्टाश्च ॥

---

४ ततः+वसिष्ठ०।५वसिष्ठः+मुनिः।६रामः+दीने० ।७दीनेभ्यः+भूरि।

(समानिन्युः) लाये। (८) (पावन—जलैः अभिषिषिचुः)—शुद्ध जलों से अभिषेक किया। (१३)इस प्रकार प्रजापालक, सत्यप्रतिज्ञ धर्मात्मा रामचंद्र का राज्य के ऊपर अभिषेक होने के समय सब लोक आनंद की अंतिम सीमा तक पहुंचे।

समास-विवरणम् ।

(१) सिंधुजलं———सिंधोः जलं सिंधुजलम् । सिंधूदकम् ।

(२) वानरश्रेष्ठान् ——वानरेषु श्रेष्ठान् वानरश्रेष्ठान् ।

(३) जलपूर्णान्———जलेन पूर्णाः जलपूर्णाः । तान् जलपूर्णान् ।

(४) सुग्रीवबिभीषणौ—सुग्रीवश्च विभीषणश्च सुग्रीवबिभीषणौ ।

(५) पावनजलं———पावनं च तत् जलं च पावनजलम् ।

(६) मुक्ताहारः— ——मुक्तानां हारः मुक्ताहारः ।

(७) सुग्रीवादयः———सुग्रीवः आदिः येषां ते सुग्रीवादयः ।

(८) सत्यसंधः———सत्या संधा यस सः सत्यसंधः ।
सत्य प्रतिज्ञः ।

परीक्षा के प्रश्न ।

पाठकों को उचित है वे इन प्रश्नों का ठीक उत्तर देने के पश्चात् हि आगे का अभ्यास प्रारंभ करें।

(१) निम्न शब्दों के सातों विभक्तियों के पुल्लिंगी रूप लिखीयेः—
मुकुंदः । बालकः । रविः । वायुः । सूनुः । पतिः । चंद्रमस् ।
नप्तृ । उद्गातृ । नृ । पितृ । ब्रह्मन् , राजन् । पूषन् ।

(२) निम्न लिखित शब्दों के सब विभक्तियों में द्विवचन के हि पुल्लिंगी रूप लिखीयेः—
कविः । पालकः । जिष्णुः । नरपतिः । शुचिः । विश् ।
यः । कः । सर्वः । कतिपयः । द्वितीय । अहं ।

(३) निम्न शब्दों के सब विभक्तियों मे एकवचन के पुल्लिंगी रूप लिखीयेः—

त्वं । असौ । अयं । एषः । सः । कः । भूभृत ।

चंद्रः । त्वष्टृ । भोक्तृ । करिन् । पथिन् । विद्वस् ।

(४) पाठ १७ में लिखीहुई 'सिंहानुचराणां कथा' पांच वार पढ कर संस्कृत में लिखीये । यह कोई आवश्यक नहिं कि सब शब्द जैसे के वैसे हि आजाय । परन्तु कथा का सब आशय लिखा जाना चाहिये ।

(५) निम्न समासों का विवरण कीजिये:—

स-करुणं	अभय-दानम्
गृह-स्थः	अ-दीनः
दयाऽन्वितः	आहार-परित्यागः
स-पुत्रः	पाप-कर्ता

(६) निम्नलिखित वाक्यों का संस्कृत में हि अर्थ लिखिये

मित्रेण उक्तम् ।

स भूमिं दृष्ट्वा चलति ।

अहं भोजनं कृत्वा भाषणं करोमि ।

(७) निम्न लिखित शब्दों के संधि कीजिये ।

तस्मिन्	+	जनस्थाने	आसीत्	+	च
तत्	+	शुद्धम्	चेतनाः	+	इव
तस्मात्	+	लेखात्	च	+	आगताः
ताम्	+	च	अथ	+	एतेषु

२० विंशः पाठः ।

यहां तक पाठकों के १६ पाठ हो चुके हैं । तथा पुल्लिंगी नामों के रूपों का तथा सर्वनामों के रूपों का विचार हो चुका है। अब नपुंसकलिंगी नामों के रूप बनाने का प्रकार बताना है । इस कारण पाठकों से प्रार्थना करनी उचित है कि वे पूर्वोक्त १६ पाठों को प्रारंभ से दुबारा पढ़ें, और कोई पाठ शिथिल हुवा हो तो उसको ठीक ठीक स्मरण रखें । अगर उनका पूर्वोक्त १६ पाठों में से थोड़ासा भी हिस्सा कच्चा रहा, तो आगे के पाठों के ऊपर किये हुवे उनके परिश्रम व्यर्थ चले जायगे । क्योंकि अब नपुंसकलिंगी शब्दों का प्रकरण प्रारंभ होना है, और नपुंसकलिंगी शब्द तृतीया विभक्ति से सप्तमी विभक्ति तक प्रायः पुल्लिंगी शब्दों के समान ही चलते हैं । इसलिये अगर पाठक पुल्लिंगी शब्द भूले होंगे, तो वे किसी प्रकार भी नपुंसकलिंगी शब्दों के रूप नहीं बना सकेंगे । इस कारण आवश्यक है कि वे पूर्वोक्त पाठों को अवश्य दुबारा पढ़कर, आगे के पाठ पढ़ने का यत्न करें । और अपनी संस्कृत में उन्नति करें । अब नपुंसकलिंगी शब्दों के रूप देते हैं ।

अकारान्तो नपुंसकलिंगो 'ज्ञान' शब्दः ।

(१)	ज्ञानम्	ज्ञाने	ज्ञानानि
सं०	(हे) ज्ञान	(हे) ,,	(हे) ,,
(२)	ज्ञानम्	,,	,,

(३)	ज्ञानेन	ज्ञानाभ्याम्	ज्ञानैः
(४)	ज्ञानाय	,,	ज्ञानेभ्यः
(५)	ज्ञानात्	,,	,,
(६)	ज्ञानस्य	ज्ञानयोः	ज्ञानानाम्
(७)	ज्ञाने	,,	ज्ञानेषु

पाठक देखेंगे कि तृतीया से सप्तमी पर्यंत सब रूप "देव" शब्द के रूपों के समान ही होते हैं। केवल प्रथमा, संबोधन तथा द्वितीया इन्हीं के रूप अलग हुए हैं। उनमें भी प्रायः प्रथमा और द्वितीया के एक जैसे ही है। संबोधन में भी एकवचन के रूप में कुछ भेद है, बाकी के दो रूप प्रथमा के समान ही हैं।

ज्ञान शब्द के समान ही 'फल, धन, वन, कमल, गृह, नगर, भोजन, वस्त्र, भूषण' इत्यादि अकारान्त नपुंसकलिंगी शब्दों के रूप होते हैं। पाठकों ने इनके रूप बनाकर लिखने चाहिए।

इकारान्तः नपुंसकलिंगो 'वारि' शब्दः।

(१)	वारि	वारिणी	वारीणि
सं०	(हे) वारे, वारि	(हे) ,,	(हे) ,,
(२)	वारि	,,	,,
(३)	वारिणा	वारिभ्याम्	वारिभिः
(४)	वारिणे	,,	वारिभ्यः
(५)	वारिणः	,,	,,
(६)	,,	वारिणोः	वारीणाम्
(७)	वारिणि	,,	वारिषु

उकारान्तो नपुंसकलिंगो 'मधु' शब्दः ।

(१)	मधु	मधुनी	मधूनि
सं० (हे)	मधो, मधु	(हे) ,,	(हे) ,,
(२)	मधु	,,	,,
(३)	मधुना	मधुभ्याम्	मधुभिः
(४)	मधुने	,,	मधुभ्यः
(५)	मधुनः	,,	,,
(६)	,,	मधुनोः	मधूनाम्
(७)	मधुनि	,,	मधुषु

इस प्रकार 'वस्तु, जतु, अश्रु, वसु' इत्यादि उकारान्त नपुंसकलिंगी शब्द चलते हैं। पाठकों ने इनके रूप बनाने चाहिए।

इकारान्तो नपुंसकलिंगः 'शुचि' शब्दः ।

(१)	शुचि	शुचिनी	शुचीनि
सं० (हे)	शुचे, शुचि	,,	,,
(२)	शुचि	,,	,,
(३)	शुचिना	शुचिभ्याम्	शुचिभिः
(४)	शुचये, शुचिने	,,	शुचिभ्यः
(५)	शुचेः, शुचिनः	,,	,,
(६)	,, ,,	शुच्योः, शुचिनोः	शुचीनाम्
(७)	शुचौ, शुचिनि	,, ,,	शुचिषु

इस प्रकार 'अनादि, दुर्मति, कुमति, सुमति' इत्यादि इकारान्त नपुंसकलिंगी शब्द चलते हैं। जिन विभक्तियों के दो दो

रूप होते हैं उनकी ओर पाठकों ने विशेष ध्यान देना उचित है। शब्द में नकार न होने पर भी विभक्ति के रूपों में नकार आता है यह विशेष यहां ध्यान में रखने योग्य है। यह नकार कहां आता है, तथा कहां नहीं यही ध्यान से देखना चाहिये।

शब्द—पुल्लिंगी

कुठारः—कुल्हाडा	विलापः—शोक, रोना
परशुः—कुल्हाडा	कण्ठः—गला

स्त्रीलिंगी

सरित्—नदी	बुद्धिः—ज्ञान शक्ति
मुद्—आनंद	नदी—दर्या
मुदा—आनंद से	नगरी—शहर

नपुंसकलिंगी

श्रेयः—कल्याण	वृत्तं—वार्ता, हकीकत
पारितोषिकं—बक्षीश	यंत्रं—यंत्र, मशीन

क्रिया

प्रातिष्ठत—रहा (वह)	उदमज्जत्—जल से बाहर आया (वह)
स्वीचकार—स्वीकार किया	निमज्य—डूबकर
अभजत्—सेवन किया	शुशोच—शोक किया (वह)
अरोदीत—(वह) रोया	

आविरासीत्—प्रकट होगया
उदगच्छत्—ऊपर आया
आजगाम—आया
निर्भर्त्स्य—निंदा करके
अचकथत्—कहा
उद्दीधरत्—ऊपर धर दिया
परिदेवितु—शोक करने के लिये
प्रारंस्त—प्रारंभ किया
अदत्वा—न देकर

विशेषण

राजत—चांदी का
नष्ट—नाश हुवा
लुनत्—काटने वाला
लुनतः—काटने वाले का
मुक्तकंठं—खुले गले से
कुटिल—कपटी
बुद्धिपूर्व—जानबूझकर
श्रेयस्कर—कल्याणकारक

(१७) श्रेयः सत्ये प्रतिष्ठितम् ।

(१) कस्य चित् पुरुषस्य एकं वृक्षं लुनतो हस्तात् सहसा निस्सृतः कुठारो[1] जलमभजत् । (२) ततः स शुशोच मुक्तकण्ठं च अरोदीत् । (३) तस्य विलापं श्रुत्वा वरुणे[2] आविरासीत् । (४) तं वरुणं स पुरुषः शोककारणं अचकथत् । (५) तदा

१ कुठारः+जलं । २ वरुणः+आवि० ।

(१) (वृक्षं लुनतः)—दरख्त काटने वाले का।(२) (मुक्तकंठं अरोदीत्)—खुले गले से रोया। (३) (वरुण आविरासीत्)—

वरुणो जलान्तः प्रविश्य सुवर्णमयं कुठारं हस्तेन आदाय उदमज्जत । तस्मै पुरुषाय तं कुठारं दर्शयित्वा पृच्छति । रे ! किमयं ते परशुः इति । (६) स उवाच । नायं मदीय इति । ततः भूयो[3]ऽपि निमज्ज्य राजतं कुठारं उददीधरत । (७) तं दृष्ट्वा नायं अपि मम[4] इति स उवाच । (८) तृतीये उन्मज्जने तस्य नष्टं कुठारं गृहीत्वोद्[5]गच्छत । तं स मुदा स्वचिकार । (९) तदा तस्य पुरुषस्य सरलतां दृष्ट्वा संतुष्टो वरुणः सुवर्ण-राजतौ द्वौ अपि कुठारौ तस्मै पारितोषिकत्वेन ददौ । (१०) वृत्तं एतत् श्रुत्वा कश्चित् कुटिलो मनुष्यः सरितं गत्वा स्वकीय कुठारं बुद्धिपूर्वं सलिले अपातयत् । कुठारनाशं सत्यीकृत्य परिदेवितुं प्राक्रंस्त च । तच्छ्रुत्वा यथा पूर्वं वरुण आजगाम । (११) स सलिले निमज्ज्य सौवर्णं परशुं आदाय अपृच्छत् किं अयं ते परशुः इति ।(१२)तं सुवर्णपरशुं दृष्ट्वा तस्य बुद्धिभ्रंशो

3 भूयः+अपि । 4 मम+इति । 5 गृहीत्वा+उदग० । 6 तत्+श्रुत्वा ।

वरुण प्रकट हुवा । (६)(नायं मदीयः)—नहीं यह मेरा ।(भूयोऽपि निमज्ज्य)—फिर डुबकी लगा कर । (९) (पारितोषिकत्वेन ददौ) बक्षीश के तौर पर दिये । (१०) (कुठार—नाशं सत्याकृत्य)—

जातः। (१३) स वरुणमुवाच। बाढं अयमेव मम कुठार इति। (१४) एवमुक्त्वा लोभेन वरुणस्य हस्तात् तं आदातुं प्रवृत्तः। (१५) तदा वरुणस्तं[7] निर्भर्त्स्य सुवर्णं कुठारं अदत्त्वा तस्य कुठारमपि तस्मै न ददौ।

---

७ वरुणः+तं।

कुहाड का नाश सत्य करने के लिये। (१३) (बाढं)—सच, निश्चय से। (१४) (आदातुं प्रवृत्तः)—लेने के लिये तैयार हुवा।

समासाः।

(१) शोककारणं——शोकस्य कारणं शोककारणं। शोकप्रयोजनं।
(२) सरलता——सरलस्य भावः सरलता। सरलत्वम्।
(३) बुद्धिभ्रंशः——बुद्धयाः भ्रंशः बुद्धिभ्रंशः।

२१ एकविंशः पाठः।

उकारान्तो नपुंसकलिंगो 'लघु' शब्दः।

(१)	लघु	लघुनी	लघूनि
सं० (हे)	लघो, लघु	,,	,,
(२)	,,	,,	,,
(३)	लघुना	लघुभ्याम्	लघुभिः
(४)	लघवे, लघुने	,,	लघुभ्यः
(५)	लघोः लघुनः	,,	,,

(६) „ „ लघ्वोः, लघुनोः लघूनाम्
(७) लघौ, लघुनि „ „ लघुषु

वास्तव में लघु अथवा शुचि ये विशेषण हैं। विशेषणों का कोई अपना खास लिंग नहीं होता है। जिस समय ये विशेषण पुल्लिंगी शब्द का गुण वर्णन करते हैं, उस समम ये पुल्लिंगी शब्द के समान चलते हैं, तथा जिस समय ये नपुंसक लिंगी शब्द के गुणों का वर्णन करते हैं, उस समय ये हि नपुंसक लिंगी शब्दों के समान चलते हैं। पुलिंग में शुचि शब्द के हरि शब्द के समान रूप होते हैं, तथा लघु शब्द के भानु शब्द के समान रूप होते हैं।

पाठ २० में शुचि शब्द का तथा इस पाठ में नपुंसकलिंगी लघु शब्द का चलाने का प्रकार बताया हैं। जिन विभक्तियों के दो दो रूप होते हैं उनके रूप वहीं दिये हैं उनको पाठकों ने ठीक ध्यान में रखना चाहिये।

लघु शब्द वत् नपुंसकलिंगी 'पृथु, गुरु, ऋजु' इत्यादि शब्दों के रूप बनते हैं। 'कति' शब्द तीनों लिंगों में एक जैसा हि चलता है तथा वह हमेशा बहुवचन में हि चलता है:—

'कति' शब्दः।

(१)	कति	(४)	कतिभ्यः
सं० (हे)	कति	(५)	„
(२)	कति	(६)	कतीनाम्
(३)	कतिभिः	(७)	कतिषु

इकारान्तो नपुंसकलिंगो 'दधि' शब्दः ।

(१)	दधि	दधिनी	दधीनि
सं० (हे)	,,	,,	,,
(२)	,,	,,	,,
(३)	दध्ना	दधिभ्याम्	दधिभिः
(४)	दध्ने	,,	दधिभ्यः
(५)	दध्नः	,,	,,
(६)	,,	दध्नोः	दधीनाम्
(७)	दध्नि	,,	दधिषु

सकारान्तो नपुंसकलिंगो 'मनस्' शब्दः ।

(१)	मनः	मनसी	मनांसि
सं० (हे)	,,	,,	,,
(२)	,,	,,	,,

तृतीया विभक्ति से 'चंद्रमस्' शब्दवत् रूप होते हैं । (पृष्ठ १५४ देखिये) 'पयस्, अहस्, वचस्, श्रेयस्, तरस्, तमस्, रजस्' इत्यादि शब्दों के रूप इसी प्रकार बनते हैं। जैसेः—

(१)	पयः	पयसी	पयांसि, इत्यादि०

ऋकारान्तो नपुंसकलिंगो 'धातृ' शब्दः ।

(१)	धातृ	धातृणी	धातृणि
सं०	धातः, धातृ	,,	,,
(२)	धातृ	,,	

(३)	धात्रा, धातृणा	धातृभ्याम्	धातृभिः
(४)	धात्रे, धातृणे	,,	धातृभ्यः
(५)	धातुः, धातृणः	,,	,,
(६)	,, ,,	धात्रोः, धातृणोः	धातॄणाम्
(७)	धातरि, धातृणि	,,	धातृषु

इस प्रकार 'कर्तृ, नेतृ, ज्ञातृ' इत्यादि ऋकारान्त नपुंसकलिंगी शब्दों के रूप होते हैं।

शब्द—पुल्लिंगी

जलाशयः—तालाव	विधाता—करने वाला
मत्स्य—मछली	अनागत-विधाता—भविष्यत की बात कहने वाला
प्रत्युत्पन्नमतिः—स्थिति प्राप्त होने पर समझनेवाला	यद्भविष्यः—दैववादी
	मत्स्यजीविन्—धीवर

नपुंसकलिंगी

प्रभातं—सवेरा	अभीष्टं—इच्छित

विशेषण

अन्वेषित—ढूंडा हुवा	प्रतिक्रांत—गया हुवा

क्रिया

प्रतिभाति—मालूम होता है	विहस्य—हंसकर
नूनम्—निश्चय से	किल—निश्चय से

(१८) यद्भविष्यो विनश्यति ।

(१) कस्मिंश्चित्[1] जलाशये, अनागतविधाता, प्रत्युत्पन्नमतिः, यद्भविष्यश्चेति[2] त्रयो[3] मत्स्याः सन्ति । (२) अथ कदाचित् तं जलाशयं दृष्ट्वा आगच्छद्भिः मत्स्यजीविभिः उक्तं । (३) यद्, अहो ! बहुमत्स्योऽयं[4] ह्रदः । कदाचिद् अपि नोऽस्माभिरन्वेषितः[5][6] । तद् अद्य आहारवृत्तिः संजाता । सन्ध्यासमयश्च[7] संभूतः । ततः प्रभातेऽत्र[8] आगन्तव्यमिति निश्चयः । (४) अतस्तेषां[9] तद् वज्र-पातोपमं वचः समाकर्ण्य अनागत-

१ कस्मिन्+चित् । २ भविष्यः+च । ३ त्रयः+मत्स्या । ४ मत्स्यः+अयं । ५ न+अस्माभिः । ६ अस्माभिः+अन्वेषितः । ७ समयः+च । ८ प्रभाते+अत्र । ६ अतः+तेषां ।

---

(१) किसी एक तालाव में अनागतविधाता, प्रत्युत्पन्नमति तथा यद्भविष्य इस नाम के तीन मत्स्य है । (२) (आगच्छद्भिः मत्स्य-जीविभिः उक्तं)—आने वाले धीवरों ने कहा । (३) (बहु-मत्स्यः अयं ह्रदः)—यह तालाव बहुत मछीयें वालाहैं । (आहार-वृत्तिः संजाता)—भोजन का प्रबंध होगया । (प्रभाते अत्र आगन्तव्यम्)—सवेरे यहां आना चाहिये । (४) (वज्रपातोपमं वचः)—

विधाता सर्वान् मत्स्यान् आहूय इदं ऊचे। (५) अहो श्रुतं [10]भवद्भिर्यन् मत्स्य-जीविभिः अभिहितम् । तद् रात्रौ अपि किंचित् गम्यतां समीपवर्ति सरः। (६) तन् नूनं प्रभात-समये मत्स्य-जीविनोऽत्र समागम्य मत्स्य-संतयं करिष्यन्ति । (७) एतन् मम मनसि वर्तते। तन् न युक्तं सांप्रतं क्षणं अपि [11]अत्राऽवस्थातुम् । (८) तद् आकर्ण्य प्रत्युत्पन्नमतिः प्राह। अहो सत्यमभिहितं भवता। [12]ममाऽपि अभीष्टं एतत् । तद् अन्यत्र गम्यताम् । (९) अथ तत् समाकर्ण्य [13]प्रोच्चै र्विहस्य यद्भविष्यः प्रोवाच। (१०) अहो न भवद्भ्यां मंत्रितं सम्यगेतत् । यतः किं तेषां वाङ्मात्रेणापि पितृपैतामहिकं सरः एतत्

१० भवद्भिः+यत्। ११ अत्र+अवस्था०। १२ मम+अपि। १३ प्र+उच्चैः+विहस्य।

वज्र के आघात के समान भाषण। (५) (गम्यतां समीपवर्ति सरः)—जाइये पास के तालाब के पास। (८) (ममापि अभीष्ट-मेतत)—मुझे भी यही इष्ट है । (तत्समाकर्ण्य प्रोच्चैः विहस्य प्रोवाच)—वह सुनकर ऊंचा हंसकर बोला। (१०) (सम्यगेतत्)—यह ठीक है। (किं तेषां वाङ्मात्रेणापि पितृपैतामहिकं सरः एतत् त्यक्तुं युज्यते)—क्या इनके बड़बड़ से (हमारे) बाप दादा के संबंध

त्यक्तुं युज्यते। (११) तद् यद् आयु:-त्र्ययो[१४]ऽस्ति तद् अन्यत्रगतानामपि मृत्युर्भविष्यति एव। तदहं न यास्यामि । भवद्भ्यां च यत् प्रतिभाति तत् कार्यम्। (१२) अथ तस्य तं निश्चयं ज्ञात्वा अनागत-विधाता, प्रत्युत्पन्नमतिश्च निष्क्रान्तौ सह परिजनेन। (१३) अथ प्रभाते तै[१५]र्मत्स्य-जीविभि[१६]र्जालैस्तम् जलाशयं आलोड्य यद्भविष्येण सह स जलाशयो निर्मत्स्यतां नीतः।

१४ त्रयः+अस्ति। १५ तैः+मत्स्यः। १६ जीविभिः+जालैः+तत्।

का यह तालाव छोड़ना अच्छा है। (११) (भवद्भ्यां च यत्प्रतिभाति तत्कार्यं)—आप जैसा जानते हैं वैसा कीजिये। (१२) (सह परिजनेन)—परिवार के साथ। (१३) (स जलाशयः निर्मत्स्यतां नीतः)—वह तालाव मत्स्यहीन किया।

समासाः।

(१) जलाशयः——जलस्य आशयः जलाशयः।

(२) मत्स्यजीविभिः—मत्स्यैः जीवन्ति इति मत्स्य-जीविनः। तैः मत्स्यजीविभिः।

(३) बहुमत्स्यः——बहवः मत्स्याः यस्मिन् स बहुमत्स्यः।

(४) समीपवर्ति——समीपं वर्तते इति समीपवर्ति।

(५) प्रत्युत्पन्नमतिः—प्रत्युत्पन्ना मतिः यस्य सः प्रत्युत्पन्नमतिः ।

(६) निर्मत्स्यतां——निर्गताः मत्स्याः यस्मात् स निर्मत्स्यः ।
निर्मत्स्यस्य भावः निर्मत्स्यता ।

---

२२ द्वाविंशः पाठः ।

सकारान्तो नपुंसकलिंगो 'धनुस्' शब्दः ।

१ सं २	धनुः	धनुषी	धनूंषि
३	धनुषा	धनुर्भ्याम्	धनुर्भिः
४	धनुषे	,,	धनुर्भ्यः

आगे 'चंद्रमस्' शब्द के समान इसके रूप होते हैं (पृ० १५४ देखीये) इसी प्रकार 'चक्षुस्, हविस्' इत्यादि शब्दों के रूप बनाने चाहिए ।

नकारान्तो नपुंसकलिंगो 'नामन्' शब्दः

(१)	नाम	नाम्नी, नामनी	नामानि
सं०	,,	,, ,,	,,
(२)	,,	,, ,,	,,
(३)	नाम्ना	नामभ्याम्	नामभिः
(४)	नाम्ने	,,	नामभ्यः
(५)	नाम्नः	,,	,,

(६)	नाम्नः	नाम्नोः	नाम्नाम्
(७)	नाम्नि, नामनि	,,	नामसु

इसी प्रकार 'लोमन्, सामन्, व्योमन्, प्रेमन्' इत्यादि शब्द चलते हैं।

नकारान्तो नपुंसकलिंगो 'अहन्' शब्दः।

(१)	अहः	अह्नी, अहनी	अहानि
सं०	अहर्	,, ,,	,,
(२)	अहः	,, ,,	,,
(३)	अह्ना	अहोभ्याम्	अहोभिः
(४)	अह्ने	,,	अहोभ्यः
(५)	अह्नः	,,	,,
(६)	,,	अह्नोः	अह्नाम्
(७)	अह्नि, अहनि	,,	अहस्सु

तकारान्तो नपुंसकलिंगो 'जगत्' शब्दः।

(१)	जगत्	जगती	जगन्ति
सं०	,,	,,	,,
(२)	,,	,,	,,
(३)	जगता	जगद्भ्याम्	जगद्भिः

इत्यादि रूप होते हैं। इसी प्रकार 'बृहत्, पृषत्,' इत्यादि शब्द चलते हैं।

इकारान्तो नपुंसकलिंगो 'अक्षि' शब्दः ।

(१)	अक्षि	अक्षिणी	अक्षीणि
सं०	,, अक्षे	,,	,,
(२)	,,	,,	,,
(३)	अक्ष्णा	अक्षिभ्याम्	अक्षिभिः
(४)	अक्ष्णे	,,	अक्षिभ्यः
(५)	अक्ष्णः	,,	,,
(६)	,,	अक्ष्णोः	अक्ष्णाम्
(७)	अक्ष्णि, अक्षणि	,,	अक्षिषु

इसी प्रकार 'अस्थि, सक्थि' आदि शब्दों के रूप होते हैं ।

(१)	अस्थि	अस्थिनी	अस्थीनि
(३)	अस्थ्ना	अस्थिभ्याम	अस्थिभिः
(४)	अस्थ्ने	,,	अस्थिभ्यः
(५)	अस्थ्नः	,,	,,
(६)	,,	अस्थ्नोः	अस्थ्नाम्
(७)	अस्थ्नि, अस्थनि	,,	अस्थिषु

(३) सक्थ्ना (५) सक्थ्नः (७) सक्थ्नि, सक्थनि

(४) सक्थ्ने (६) ,,

'वारि' शब्द के समान हि अन्य रूप होते हैं ।

सान्तः 'आयुस्' शब्दः नपुंसके ।

(१)	आयुः	आयुषी	आयूंषि
सं०	,,	,,	,,
(२)	,,	,,	,,

(३)	आयुषा	आयुर्भ्याम्	आयुर्भिः
(४)	आयुषे	,,	आयुर्भ्यः
(५)	आयुषः	,,	,,
(६)	,,	आयुषोः	आयुषाम्
(७)	आयुषि	,,	आयुष्षु

इसी प्रकार 'अर्चिस्' शब्द के रूप होते हैं। पाठकों को चाहिये कि वे इनके साथ पुल्लिंगी शब्दों के रूपों की तुलना करें। और परस्पर विशेष बातों को ध्यान रखें।

शब्द–क्रियाएं

क्रीत्वा—खरीद के
उपदेक्ष्यामि—उपदेश करूंगी
निष्पाद्य—तैयार करके
प्राभातिकं—सवेरे संबंधी
अवज्ञातुं—धिःकार करने योग्य
अर्हसि—(तू) योग्य है
प्रयतिष्ये—प्रयत्न करूंगा
आमयामि—कष्ट दूंगी-गा
विलोक्यतां—देखिये
निर्विश्यताम—घुस जाइये
निषेधति—प्रतिबंध करता है

अर्जयति—कमाता है
विलोक्य—देखकर
प्रतिपद्यते—मानता है
उत्सहे—उत्साह होता है
हीयते—न्यून होता है
निर्मातुं—उत्पन्न करने के लिये
प्रभवेत्—समर्थ होगा
विभज्य—बांट कर
अंगीकृत्य—स्वीकार करके
विस्मापयन्ति—आश्चर्य युक्त करते हैं

शब्द—पुल्लिंगी

शिलिपः—कारीगार
श्रमः—कष्ट, मेहनत
पाणिः—हाथ
विभागः—हिस्सा, बांट
पादः—पांव
सर्वात्मन्—तन मन से
विपश्चित्—विद्वान

स्त्रीलिंगी

दृष्टिः—नजर
यात्रा—गमन
चिंता—फिकिर
गृहिणी—गृहपत्नी
संसारयात्रा—दुनियां का व्यवहार
श्रुति—श्रवण, सुनना

नपुंसकलिंगी

तलं—ऊपरला हिस्सा
मूलं—जड
प्रभातं—सवेरा
वस्तुजातं—वस्तुओं का समूह
आत्मबलं—अपनी शक्ति
निदर्शनं—दर्शन
बीजं—बीज
शिरः—शिर
सहाय्यं—मदत
लोकाराधनं—लोक सेवा
उदरं—पेट
नैपुण्यं—निपुणता

विशेषण

प्राभातिक—सवेर का
सुभग—उत्तम
साध्य—साधन करने योग्य
करणीय—करने योग

आकुल — कष्टमय
सुजात—अच्छा पैदा हुआ
निवृत्त—होगया
सुसंस्कृत—उत्तम बनाया हुआ
सम्यक्—ठीक
आत्मबलातिगे—अपनी शक्ति से बाहर के

अद्भुत—आश्चर्य कारक
बहुमत—बहुतों को मान्य
इयत्—इतना
विभक्त—बांटा हुवा
सुसह—सहने योग्य
प्रीत—संतुष्ट

(११) श्रम-विभागः

(१) **रुक्मिणी**—सखि कमले ! श्वः प्रभाते मे बहु करणीयम्। तत् कथं निर्वर्त्यं इति चिन्ताकुलं मे मनः। (२) **कमला**—काऽत्र चिन्ता। अहं तव साहाय्यं करिष्यामि नर्मदामपि तत्कर्तुमुपदेक्ष्यामि[1]। इत्यावयोः[2] साहाय्येन सुलभा कार्यसिद्धिः। (३) **रुक्मिणी**—अपि नर्मदा प्रतिपद्यते

---

१ कर्तु+उपदे०। २ इति+आवयो।

---

(१) (मे बहु करणीयं)—मुझे बहुत कार्य है। (कथं निर्वर्त्यं)—कैसा किया जाय। (२) (कात्र चिंता)—कौनसी यहां चिंता। (इत्यावयोः साहाय्येन सुलभा कार्यसिद्धिः)—इस प्रकार हम (दोनों के) सहाय्य से कार्य की सिद्धि सुगम होगी। (३) (आप

तत्कर्तुम् । यावत्तामेव[3] पृच्छामि । अयि नर्मदे ! प्रभाते मम बहु करणीयम् । कच्चिदल्पं[4] साहाय्यं करिष्यसि । (४) नर्मदा–ततः को मे लाभः । तन्न कर्तुमुत्सहे[5] । पुनर्ममापि प्राभातिकं अस्त्येव[6] । तत् का करिष्यति। (५) कमला सखि नर्मदे ! मैवं[7] रुक्मिणी-वचः अवज्ञातुं अर्हसि । अन्योऽन्य साहाय्यं मनुष्यधर्मः । तत् साहाय्यं कुर्वत्याः तव किं हीयते । तव गृहकृत्यं च अल्पम् । तत पश्चाद् आपि एकाकिन्या सुकरम् । तत्रापि चेद् अन्यापेक्षा अहं साहाय्यं

३ यावत्+ताम्+एव । ४ कच्चिद्+अल्पं । ५ कर्तुं+उत्सहे । ६ अस्ति+एव । ७ मा+एवं ।

नर्मदा प्रतिपद्यते)–क्या नर्मदा मानेगी । (कच्चिदल्पं)–कुछ थोड़ा । (४) (तन्न कर्तुमुत्सहे)–वह करने के लिये (मैं) उत्साहित नहीं हूं। (प्राभातिकं)–सवेर का कार्य । (५) (अवज्ञातुं अर्हसि)–अपमान करने के लिये योग्य हो । (अन्योन्य-सहाय्यं)–परस्पर मदत करनी । (साहाय्यं कुर्वत्यास्तव किं हीयते)–मदत करने से तुम्हारी क्या हानी है । (एकाकिन्या सुकरं)–अकेली से भी किया जा सकता है । (चेद् अन्यापेक्षा)–अगर दूसरे की जरूरत है ।

करिष्यामि । (६) **नर्मदा**—न श्रामयामि त्वाम् । अहं एव एकाकिनी तल्लघु लघु समाप्य विश्रांति सुखं कथं न अनुभवेयम् । (७) **कमला**—सुखं निर्विश्यतां विश्रांतिसुखम् । तथा कर्तुं का निषेधति । परं एतावदेव[८] पृच्छामि तव गृहकृत्यं त्वं एकाकिनी लघुतरं करिष्यसे किम् । (८) **नर्मदा**—असंशयं त्वद्वितीया[९] एव । (९) **कमला**—तर्हि साहाय्यं किमिति नानु[१०]मन्यसे । (१०) **नर्मदा**—स्वावलंब एव अहं बहु मन्ये । न परसाहाय्यम् आत्मबलेनैव[११] सर्वाः क्रिया निर्वर्तयामि । (११) **रुक्मिणी**—अयि नर्मदे । स्वावलंबः ममापि[१२] बहुमतः।

---

८ एतावत्+एव । ९ तु+अद्वितीया । १० न+अनु । ११ बलेन+एव। १२ मम+अपि ।

---

(६) (न श्रामयामि त्वां)—तुमको कष्ट नहीं दूंगी । (तल्लघु लघु समाप्य)—वह जल्दी जल्दी समाप्त करके । (७) (सुखं निर्विश्यतां विश्रांत-सुखं) आराम से लीजिये विश्राम का आनंद । (लघुतरं करिष्यसे)—अधिक जलदी करेगी । (८) (असंशयं तु अद्वितीया एव) निःसंशय अकेली हि । (९)(किमिति नानुमन्यसे)—क्यों नही मानती।(११)(स्वावलंबः ममापि बहुमतः)—

किंतु आत्मबलातिगे कार्ये परसाहाय्यप्रार्थनं आवश्यकं भवति न हि एकपुरुष-साध्याः सकलाः क्रियाः। को ऽपि[13] गृहवस्त्रादिकं सकलं वस्तुजातं स्वयमेको[14] निर्मातुं न प्रभवेत् । किमुत च तत्तत्-शिल्पिसंधानिर्मितं एव सुभगम् । अतः विपश्चितः परस्परं श्रमान् विभज्य एकैकमेव विषयं अंगीकृत्य तं सर्वात्मना परिशीलयन्ति । तस्मिन् नैपुण्यं उपगताः च लोकाऽऽराधनाय प्रवर्तन्ते । एवं श्रमविभागेन संसारयात्रा सुखकरी भवति ।

(१२) कमला—परिचिन्त्यतां परराष्ट्राणां उद्योगपद्धतिः ।

---

१३ कः+अपि । १४ स्वयं+एकः ।

स्वावलंबन—(अपने ऊपर हि निर्भर रहना)—मुझे बहुत पसंद है। (एकपुरुषसाध्याः सकलाः क्रियाः)—एक मनुष्य से सिद्ध होने वाले सब कार्य। (निर्मातुं न प्रभवेत्)—उत्पन्न करने के लिये समर्थ नहि होगा। (अतः विपश्चित०———परिशीलयन्ति)—इसलिये विद्वान परस्पर श्रमों को बांट कर, एक एक बात को हि अपनी सी करके, उसी को सब तनमन से विचारते हैं। (तस्मिन् ———सुखकरी भवति)—उसी में प्रवीणता संपादन करके लोक सेवा के लिये प्रवृत्त होते हैं, इस प्रकार श्रमविभाग से संसार यात्रा सुखमय होती है । (पर-राष्ट्राणां) दूसरे देशों की ।

(१२) (आ-फलोदयकर्माणः)—फल प्राप्त होने तक काम करने

आफलोदयकर्माण उद्यमशीला यूरोपीया निजाद्भुतकृत्यैः लोकान् विस्मापयन्ति। सुसंस्कृतं सुजातं च वस्तुजातं निर्मिमीते। तस्य श्रमविभाग[15] एव बीजम्। (१३)रुक्मिणी–पाणितलस्थे निदर्शने कुत इयद्दूरम्[16]। अस्माकं गृहव्यवस्था एव सूक्ष्मदृष्ट्या विलोक्यताम्। गृहपतिः सकलारंभमूलं धनं अर्जयति। तेन च धान्यादि वस्तुजातं क्रीत्वा गृहिण्यै समर्पयति। सा तत्साधु व्यवस्थाप्य पाकादि च निष्पाद्य सकलं कुटुंबं सुखयति। सोऽयं जीवनक्रमः श्रमविभागेन एव सुखकरो भवति नान्यथा। विभक्तः खलु श्रमो[17]ऽतीव सुसहो भूत्वा महते फलोदयाय

---

१५ विभागः+एव। १६ इयत्+दूरं। १७ श्रमः+अतीव।

वाले। (निजाद्भुतकृत्यैर्लोकान् विस्मापयन्ति)–अपने अद्भुत कामों से दूसरों को आश्चर्ययुक्त करते हैं। (१३) (पाणितलस्थे निदर्शने कुत इयद्दूरम्)–हाथ के तले पर का (पदार्थ) देखने के लिये इतना दूर क्यों (जाना है)। (सकलारंभमूलं) संपूर्ण कार्यों के प्रारंभ में उपयोगी–जिससे सकल कार्य बन सकते हैं। (पाकादि निष्पाद्य)–अन्न पका कर। (विभक्तः श्रमः सुसहो भवति)–बांटा हुवा श्रम सहा जासकता है। (महते फलोदयाय

कल्पते। (१४) नर्मदा—स्फुटतरं अज्ञासिषं श्रमविभागतत्वम्। युवाभ्यां विवृतं च तत् सम्यक् प्रविष्टं मे हृदयम्। अधुना शिरसा धारयामि युवयोः वचः। यावच्छक्यं च तव अर्थसाधने प्रयतिष्ये। (१६) रुक्मिणी—प्रीताऽस्मि युवयोः परमादरेण।

कल्पते)—महान फल प्राप्ति के लिये होता है। (१४) (स्फुटतरं अज्ञासिषं)—अधिक स्पष्टता से जान लिया। (युवाभ्यां विवृतं) तुम दोनों ने समझाया हुवा। (शिरसा धारयामि युवयोः वचः) शिरसे धरती हूं तुम दोनों का भाषण। (तव अर्थ—साधने प्रयतिष्ये) तुम्हारा कार्य सिद्ध करने में प्रयत्न करूंगी। (१५) (प्रीतास्मि युवयोः परमादरेण)—खुश होगयी हूं तुम दोनों के बड़े आदर से।

समासाः।

(१) चिन्ताकुलं————चिंतया आकुलं चिन्ताकुलम्।

(२) कार्यसिद्धिः————कार्यस्य सिद्धिः कार्य सिद्धिः।

(३) रुक्मिणीवचः————रुक्मिण्याः वचः रुक्मिणी-वचः।

(४) अन्यापेक्षा————अन्यस्य अपेक्षा अन्यापेक्षा।

(५) लघुतरं————अतिशयेन लघु लघुतरम्।

(६) आत्मबलातिगे————आत्मनः बलं आत्मबलम्। आत्मबलं अतिक्रम्य गच्छति इति आत्मबलातिगम्।

(७) शिल्पिसंघनिर्मितं——शिल्पिनाम् संघः शिल्पिसंघः। शिल्पि संघेन निर्मितं शिल्पिसंघनिर्मितम्।

(८) आफलोदयकर्माणः—फलस्य उदयः फलोदयः। फलोदय पर्यंतं कर्म कुर्वन्ति इति आफलोदयकर्माणः।

(९) पाणितलस्थः———पाणेः तलः पाणितलः। पाणितले तिष्ठतीति पाणितलस्थः।

(१०) सूक्ष्मदृष्टिः———सूक्ष्मा चासौ दृष्टिश्च सूक्ष्मदृष्टिः।

२३ त्रयोविंशः पाठः।

अब २२ पाठ हो चुके हैं। और इतनी अवधि में मुख्य मुख्य पुल्लिंगी तथा नपुंसकलिंगी शब्दों के सातों विभक्तियों के रूप बनाने का ज्ञान पाठकों को हो चुका है। अब सर्वनामों के नपुंसकलिंग में कैसे रूप होते हैं, इसका ज्ञान इस पाठ में देना है। सर्वनामों के तृतीया से सप्तमी पर्यंत विभक्तियों के रूप पूर्वोक्त पुल्लिंगी सर्वनामों के समान ही होते हैं। केवल प्रथमा द्वितीया के रूपों की विशेषता ही पाठकों ने ध्यान में रखनी है।

'सर्व' शब्दः (नपुंसके)

(१)	सर्वम्	सर्वे	सर्वाणि
सं०	सर्व	,,	,,
(२)	सर्वम्	,,	,,

शेष रूप 'सर्व' शब्द के पुल्लिंगी रूपों के समान ही होते हैं (पृष्ठ १६३) इसी प्रकार 'विश्व, एक, उभ, उभय' इनके रूप होते

है। 'उभ' शब्द द्विवचन में ही चलता है तथा 'उभय' शब्द के लिये द्विवचन नहीं है। यह विशेष ध्यान में रखना चाहिये।

इसी प्रकार 'पूर्व, पर, अवर, दक्षिण, उत्तर, अपर, अधर, स्व, अंतर नेम,' इत्यादि शब्द चलते हैं। 'स्व, अंतर' के विषय में जो कुछ पूर्व लिखा है वह ध्यान में रखना चाहिये (पाठ १९ नियम २८, २९, ३० पृष्ठ १६५ देखिये)। अर्थात् 'स्व, अंतर,' इनके अर्थ भेद से 'ज्ञान' शब्द के समान, तथा 'सर्व' शब्द के समान रूप होंगे।

'प्रथम' शब्द 'ज्ञान' शब्द के समान ही नपुंसक में चलता है। इसी प्रकार 'चरम, द्वितय, त्रितय, चतुष्टय पञ्चतय, अल्प, अर्ध, कतिपय' इत्यादि शब्द चलते हैं।

'द्वितीय, तृतीय' ये दो सर्वनाम 'सर्व' शब्द के समान ही नपुंसकलिंग में चलते हैं।

'यद्' शब्दः नपुंसके।

(१)	यत्	ये	यानि
(२)	,,	,,	,,

शेष रूप पुल्लिंगी 'यद्' शब्द के समान होते हैं। (पृष्ठ १७२)

इसी प्रकार 'अन्य, अन्यतर, इतर, कतर, कतम, त्व' इत्यादि सर्वनाम के नपुंसकलिंग में रूप होते हैं। 'अन्यतम' शब्द नपुंसकलिंग में 'ज्ञान' के समान चलता है।

नपुंसके 'किम्' शब्दः ।

(१)	किम्	के	कानि
(२)	"	"	"

अन्य रूप पुल्लिंगी 'किं' शब्द के समान होते हैं। (पृष्ठ १७३)

नपुंसके 'तद्' शब्दः

(१-२)	तत्	ते	तानि

अन्य रूप 'तद्' शब्द के पुल्लिंगी रूपों के समान ही होते हैं। (पृष्ठ १७३)

नपुंसके 'एतद्' शब्दः ।

(१)	एतत्	एते	एतानि
(२)	एतत्, एनत्	एते, एने	एतानि, एनानि

अन्य रूप 'एतद्' शब्द के पुल्लिंगी रूपों के समान होते हैं। (पृष्ठ [illegible])

नपुंसके 'इदम्' शब्दः ।

(१)	इदम्	इमे	इमानि
(२)	इदम्, एनत्	इमे, एने	इमानि, एनानि

अन्य रूप पुल्लिंगी 'इदं' शब्द के समान होते हैं । यहां इन दो सर्वनामों के दो दो रूप होते हैं यह बात ध्यान में रखनी चाहिए ।

नपुंसके 'अदस्' शब्दः ।

(१-२)	अदः	अमू	अमूनि

इस पाठ के पश्चात् स्त्रीलिंगी शब्दों के रूपों का विचार होना है, इसलिये पाठकों से प्रार्थना है कि वे पूर्व २३ पाठों को दुबारा पढ़ें और सब व्याकरण के नियम, शब्दों के रूप तथा वाक्य ठीक ठीक याद करें। जो प्राचीन पुस्तकों में से कथायें दीं हैं, उनको अच्छी प्रकार कण्ठ करें। प्राचीन पुस्तकों की कथायें हरएक पाठ में इसीलिये दीं हैं कि पाठक उनको कण्ठ करें। इस प्रकार कथायें कण्ठ करने से पाठकों की भाषा प्रौढ होगी, वे अच्छी संस्कृत भाषा में प्रवीण होंगे। जो ऐसा नहीं करेंगे उनकी उन्नति की जिम्मेवारी उन्हीं के शिर पर रहेगी। यह यहां कहने की आवश्यकता नहीं।



शब्द—पुल्लिंगी

सन्धिः—सुलाह, मैत्री
यशस्विन्—यशवाला, कीर्तिमान
व्याघ्रः—शेर, श्रेष्ठ
पुरुषव्याघ्रः—पुरुषों में श्रेष्ठ
पित्र्यंशः—पैतृक धनका हिस्सा

विग्रहः—युद्ध
ऋषभः—श्रेष्ठ
भरतर्षभः—भरतश्रेष्ठ
पुरोचनः—एक पुरुष का नाम
वज्रभृत्—इंद्र

नपुंसकलिंगी

पैतृकं—पिता संबंधी
किल्बिषं—पाप

अफलं—निष्फलं
क्षेम—कल्याण

क्रिया

रोचते—पसंद है | प्रदीयताम्—दीजिये
क्रियते—किया जाता है | ध्रियन्ते—धारण किये जाते हैं
आतिष्ठ—रहो

विशेषण

मधुर—मीठा | संमतव्यम्—सन्मान योग्य
निरस्त—अलग किया | तुल्य—समान

अन्य

विशेषतः—खासकर | कथंचन—किसी प्रकार भी
असंशयं—निःसंशय | दिष्ट्या—सुदैव से

(२०) भीष्मो धृतराष्ट्रादीनां सन्धिमुपदिशति

न रोचते विग्रहो मे पांडुपुत्रैः कथंचन ।
यथैव[1] धृतराष्ट्रो मे तथा पाण्डुरसंशयम्[2] ॥१॥

---

(२०) भीष्मपितामह धृतराष्ट्रादिकों को सुलाह का उपदेश करता है ।

(पाण्डु-पुत्रैः सह) पांडवों के साथ (विग्रहः) युद्ध, झगड़ा (कथंचन) किसी प्रकार भी (मे न रोचते) मुझे पसंद नहीं। (यथा एव मे धृतराष्ट्रः) जैसा मेरे लिये धृतराष्ट्र है (तथा असंशयं पाण्डुः) वैसा ही निश्चय से पाण्डु है ॥ १ ॥

---

१ यथा+एव । २ पाण्डुः+असं० ।

गांधार्याश्च यथा पुत्रास्तथा[4] कुन्तीसुता मम ।
यथा च मम ते रक्ष्या धृतराष्ट्र ! तथा तव ॥२॥
दुर्योधन यथा राज्यं त्वमिदं[5] तात पश्यसि ।
मम पैतृकमित्येवं[6] तेऽपि पश्यन्ति पांडवाः ॥३॥
यदि राज्यं न ते प्राप्ता पाण्डवेया यशस्विनः ।
कुत एव तवापीदं[7] भारतस्यापि कस्य चित् ॥४॥

(यथा च गांधार्याः पुत्राः) और जैसे गांधारी के पुत्र (तथा मम कुन्ती-सुताः) वैसे ही मेरे लिये कुन्ती के लड़के हैं। (यथा च मम ते रक्ष्याः) और, जैसे मैं ने वे रक्षणीय हैं (धृतराष्ट्र, तथा तव) हे धृतराष्ट्र ! वैसे ही तुम्हारे हैं ॥ २ ॥

(दुर्योधन) हे दुर्योधन ! हे (तात) हे प्रिय (यथा त्वं इदं राज्यं) जैसा तुम यह राज्य (मम पैतृकं इति) मेरे पिता का है ऐसा (पश्यसि) देखते हो (एवं ते पाण्डवाः अपि) इस प्रकार वे पाण्डव भी (देखते हैं) ॥ ३ ॥

(ते यशस्विनः पाण्डवेयाः) वे कीर्तिमान पांडव (यदि राज्यं न प्राप्ताः) अगर राज्य को प्राप्त न हुए (कुतः तव अपि इदं एव) कैसा तुमको ही यह (प्राप्त होगा)(कस्य भारतस्य अपि चित्) किसी भारत के लिये भी (कैसा मिलेगा) ॥ ४ ॥

---

३ गांधार्याः+च । ४ पुत्राः+तथा । ५ त्वं+इदं । ६ पैतृकं+इति+एवं । ७ तव+अपि+इदम् ।

अधर्मेण च राज्यं त्वं प्राप्तवान् भरतर्षभ ।
ते८पि[८] राज्यमनुप्राप्ताः पूर्वमेवेति[९] मे मतिः ॥५॥
मधुरेणैव[१०] राज्यस्य तेषामर्धं प्रदीयताम् ।
एतद्धि पुरुषव्याघ्र हितं सर्वजनस्य च ॥६॥
अतोऽन्यथा चेत् क्रियते न हितं नो भविष्याति ।
तवाप्यकीर्तिः[११] सकला भविष्यति न संशयः ॥७॥

(भरतर्षभ) हे भरतश्रेष्ठ ! (त्वं अधर्मेण राज्यं प्राप्तवान्) तू अधर्म से राज्य को प्राप्त होगये हो । (ते अपि पूर्व एव) वे पहिले ही (राज्यमनु प्राप्ताः) राज्य को प्राप्त हुए (इति मे मतिः) ऐसा मेरा मत है ॥ ५॥

(मधुरेण एव) मीठेपन से ही (राज्यस्य अर्धं) राज्य का आधा भाग (तेषां प्रदीयतां) उनको दीजिये । (पुरुषव्याघ्र) हे पुरुष श्रेष्ठ ! (हि एतत् सर्व जनस्य हितं) कारण यही सब लोकों का हितकारी है ॥ ६ ॥

(चेत् अतः अन्यथा क्रियते) अगर इस से भिन्न किया जाय (नः हितं न भविष्यति) हमारा हित नहीं होगा । (तव अपि सकला अकीर्तिः) तेरी भी सब दुष्कीर्ति (भविष्यति न संशयः) होगी इसमें कोई संदेह नहीं ॥ ७ ॥

---

८ ते+अपि । ९ पूर्व+एव+इति । १० मधुरेण+एव ।
११ तव+अपि+अकीर्तिः ।

कीर्ति-रक्षणमातिष्ठ कीर्तिर्हि परमं बलम् ।
नष्टकीर्तेर्मनुष्यस्य जीवितं ह्यफलं स्मृतम् ॥८॥
दिष्ट्या ध्रियन्ते पार्था हि दिष्ट्या जीवति सा पृथा ।
दिष्ट्या पुरोचनः पापो न सकामोऽत्ययं गतः ॥९॥
न मन्येत तथा लोको दोषेणात्र पुरोचनम् ।
यथा त्वां पुरुषव्याघ्र लोको दोषेण गच्छति ॥१०॥

(कीर्ति-रक्षणं आतिष्ठ) कीर्ति की रक्षा करो (कीर्तिः हि परमं बलं) कारण कीर्ति हि बड़ा बल है। (हि नष्टकीर्तेः मनुष्यस्य) कारण जिसकी कीर्ति नाश हुवी है ऐसे मनुष्य का (जीवितं अफलं स्मृतम्) जीवन निष्फल है ऐसा कहते हैं ॥ ८ ॥

(दिष्ट्या हि पार्थाः ध्रियन्ते) सुदैव से पांडव जिंदा रहे हैं (सा पृथा दिष्ट्या जीवति) वह कुंती सुदैव से जिंदा है। (पापः पुरोचनः) पापी पुरोचन राजा (दिष्ट्या सकामः) सुदैव से कृतकार्य होकर (अत्ययं न गतः) सिद्धि को प्राप्त न हुवा ॥ ९ ॥

(लोकः अत्र तथा) जन यहां वैसा (पुरोचनं दोषेण न मन्येत) पुरोचन को दोष से (युक्त) नहीं मानेंगे (पुरुषव्याघ्र ! यथा त्वां) हे मनुष्यश्रेष्ठ ! जिस प्रकार तुमको (लोकः दोषेण गच्छति) लोक दोष से (युक्त) समझते हैं ॥ १० ॥

---

१२ कीर्तेः+मनुष्य० । १३ हि+अफलं । १४ पार्थाः+हि । १५ सकामः+अत्ययं । १६ दोषेण+अत्र ।

तादिदं जीवितं तेषां तव किल्बिषनाशनम् ।
संमन्तव्यं महाराज पाण्डवानां सुदर्शनम् ॥११॥

न चापि तेषां वीराणां जीवतां कुरुनंदन ।
पित्र्यंशः शक्य आदातुमपि वज्रभृता स्वयम् ॥१२॥

ते सर्वेऽवस्थिता धर्मे सर्वे चैवैक-चेतसः ।
अधर्मेण निरस्ताश्च तुल्ये राज्ये विशेषतः ॥१३॥

यदि धर्मस्त्वया कार्यो यदि कार्यं प्रियं च मे ।
क्षेमं च यदि कर्तव्यं तेषामर्धं प्रदीयताम् ॥१४॥

महाभारतम्

(तत् इदं तेषां जीवितं) वह यह उनका जीवित है (तव किल्बिषनाशनं) तुम्हारे पाप का नाशक है। इसलिये (महाराज) हे महाराज! (पाण्डवानां सुदर्शनं संमंतव्यं) पाण्डवों का उत्तम दर्शन मानिये ॥ ११ ॥

(कुरुनंदन) हे कुरुपुत्र! (तेषां वीराणां जीवतां) उन वीरों के जिंदगी तक (स्वयं वज्रभृता अपि) स्वयं इंद्र ने भी (पित्र्यंशः आदातुं अपि च न शक्यः) पैतृक धन लेना भी शक्य नहीं ॥ १२ ॥

(ते सर्वे धर्मे अवस्थिताः) वे सब धर्म में ठहरे हैं। (सर्वे च एकचेतसः) और सब एक दिल वाले हैं। (विशेषतः तुल्ये राज्ये) विशेष कर समान राज्य में (अधर्मेण निरस्ताः च) अधर्म से हटाये हैं ॥१३॥

(यदि त्वया धर्मः कार्यः) अगर तूं ने धर्म करना है (यदि मे प्रियं च कार्यं) अगर मेरे लिये प्रिय करना है। (च यदि क्षेमं कर्तव्यम्) और अगर कल्याण करना है (तेषां अर्धं प्रदीयताम्) उनको आधा (भाग) दीजिये ॥ १४ ॥

सूचना—इस पाठ में श्लोकों के पदों का अन्वय जैसा होना चाहिये वैसा कर के (   ) कंस में दिया है। पाठको को उचित है कि, वे श्लोक में शब्दों का क्रम तथा अर्थ में अन्वय के शब्दों का क्रम देख लें और अन्वय बनाना सीखें। बोलने के समय जैसी शब्दों की पूर्वापर रचना होती है उस प्रकार शब्दों की रचना को अन्वय कहते हैं। श्लोकों में छंद के अनुसार इधर उधर शब्द रखे जाते हैं।

२४ चतुर्विंशः पाठः।

अगर पाठकों ने पूर्व २३ पाठ दुबारा याद किये हों, तो वे आगे चलने के योग्य है। अन्यथा नहीं। पूर्व पढे हुवे पाठों को दुबारा स्मरण करने की प्रार्थना जहां जहां की हुवी है, वहां पाठक, अपनी संमति की पर्वाह न करते हुए, मेरे कहने के अनुकूल पूर्व पाठों को दुबारा याद करेंगे तो उनका ही लाभ अधिक होगा। आशा है कि पाठक वैसाहि करेंगे और अपनी उन्नति करेंगे। जिस समय पूर्वोक्त २३ पाठों को दुबारा पढना समाप्त होगा उस समय निम्नलिखित प्रश्नों में उनकी परीक्षा होगी। जो पाठक प्रश्न पढते हि उनका ठीक ठीक उत्तर उसी समय दे सकेंगे वे आगे का अभ्यास कर सकेंगे, परन्तु जो शीघ्र उत्तर नहीं दे सकेंगे उनको पुनः पूर्व पाठ पढने होंगे।

परीक्षा के प्रश्न।

(सूचना—प्रत्येक प्रश्न पढते हि दस निमेषके अंदर उसका उत्तर देने का प्रारंभ होना चाहिए)।

(१) निम्नलिखित शब्दों के सातों विभक्तियों में केवल एकवचन के रूप लिखियेः—

(पुल्लिंगी शब्द)—रथः । कालः । रुद्रः । मुनिः । पाण्डुः । दातृ । भोक्तृ । विधातृ । राजन् । गरिमन् । अणिमन् । स्वामिन् । करिन् ।

(नपुंसकलिंगीशब्द)—वनं । स्वरूपं । वचनं । पयस् । श्राद्धं । वर्मन् । वारि । जगत् । शुचि । मधु । पीठं । मांसं । धनं ।

(२) निम्नलिखित शब्दों के संधि कीजियेः—

बालकैः	+	दुग्धं	कवि	+	इष्टम
मृगः	+	अरण्ये	भानु	+	इच्छा
चोरः	+	गलहस्तिकया	दिव्य	+	अरुण
बहिः	+	निःसारितः	मातृ	+	उच्छिष्ट

(३) निम्न शब्दों के केवल द्विवचन के रूप सब विभक्तियों में लिखियेः—

(पुल्लिंगी —कविः । सूनुः । वसिष्ठः । हस्तिन् । दण्डिन् । यः । कः । नृ । शास्तृ । सखि । पतिः । शंस्तृ ।

(४) निम्न शब्दों के बहुवचन के रूप लिखियेः—

(नपुंसकलिंगी)—बाल्यं । चापल्यं । नलिनं । शुचि । कार्पण्यं । लघु ।

(५) निम्न संधियों को खोल कर लिखियेः—

(१) मूका इव । (२) पणव इव । (३) अलभमानास्तुभ्यम् ।

(४) मदोत्कट । (५) सघकाश्रयः । (६) तदुत्तरम् । (७) अर्था-
पार्जनं । (८) भानुरुदयते । (९) नमस्ते ।

(६) आप कोई एक कथा संस्कृत में लिखिये । कथा ऐसी हो कि वह इस पुस्तक में न आई हो । आप अपनी मर्जी के अनुकूल एक कथा लिखिये ।

(७) पृ० १०९ पर दी हुवी "उदरावयवानां कथा" पांच वार पढ कर संस्कृत में लिखिये ।

(८) श्रीरामचंद्र का जीवन चरित्र पचास पंक्तियों में लिखिये ।

(९) विसर्ग के संधि के विषयमें जो जो नियम दिये हैं वे लिखिये।

(१०) आज के दिन प्रातः से आपने जो जो कार्य किया हो उसे संस्कृत में थोडे शब्दों में लिखिये ।

(११) किसी विषय में आप अपने मित्र को पत्र लिख रहे हैं ऐसा समझ कर एक छोटासा पत्र संस्कृत में लिखिये ।

शब्दः—पुल्लिंगी ।

आश्रयः—निवास, आधार
बकः—बगला, सारस
कुलीरः—खेकडा
प्रदेशः—स्थान
शोषः—खुष्की

जलचरः—पानीमें चलने वाला प्राणी
वत्सः—पुत्र
वियोगः—अलग होना
क्षुत्क्षामः—भूक से थका हुवा
दैवज्ञः—ज्योतिषी,

क्रमः—क्रम, सिलसिला
तातः—पिता
मातुलः—मामा
मिथ्यावादिन्—झूठ बोलने वाला
अभिप्रायः—मतलब
पर्वतः—पहाड़
मंदधीः—मंदबुद्धि

स्त्रीलिंगी ।

वृद्धिः—बधाई,
क्षुध्—भूक
इच्छा—चाहना
स्वेच्छा—अपनी इच्छा
ग्रीवा—गर्दन
वृष्टिः—वर्षा
अनावृष्टिः—अवर्षण, वर्षा न होनी
शिला—पत्थर
आहार-वृत्तिः—भोजन का कार्य

नपुंसकलिंगी ।

प्रयोपवेशनं—उपोषण करके मरने का निश्चय करना
पृष्ठ—पीठ
व्यंजनं—चटणी
तोयं—जल
त्राणं—रक्षा
पादत्राणं—जूता
प्राणत्राणं—प्राणों की रक्षा
अस्थिन्—हड्डी

विशेषण ।

समेत—युक्त
क्रीडित—खेला
त्रस्त—दुःखी
कुपित—गुस्सा हुवा हुवा
लग्न—लगा हुवा
उपलक्षित—देखा
द्वादश—बारा
निर्विण्ण—दुःखी

क्रिया ।

समेत्य—आकर
ऊचे—बोला (वह)
संपद्यते—है
रुरोद—रोया
आससाद—प्राप्त हुवा
वंचयित्वा—फंसाकर
चिरयति—देरी करता है
प्रक्षिप्य—फेंक कर
व्यापादयितुं—मारने के लिये
अनुष्ठीयते—की जाती है
यास्यन्ति—जांयगे, प्राप्त होंगे
अनुष्ठीय—करके
आरोप्य—रखकर
समासाद्य—प्राप्त करके
आक्षिप्य—फेंक कर

अन्य ।

नाना—अनेक
सादरं—आदर के साथ
जातु—किसी समय, कदाचित्
अलं—पर्याप्त, काफी

(२१) बक-कुलीरयोः कथा

(१) अस्ति कस्मिंश्चित् प्रदेशे नाना जलचर-सनाथं सरः। तत्र च कृताश्रयः एकः बकः वृद्धभावं उपागतः मत्स्यान् व्यापादयितुं असमर्थः । ततश्च क्षुत्क्षाम-कंठः सरस्तीरे उपविष्टो

---

(१) नाना-जलचर-सनाथं)—बहुत प्राणी जिस में है ऐसा (तत्र कृताश्रयः)—वहां रहने वाला। (क्षुत्क्षामकंठः........रुरोद) भूक से जिसका गला थका हुवा है ऐसा (वह) तालाव के किनारे

रुरोद । एकः कुलीरको नानाजलचरसमेतः समेत्य तस्य दुःखेन दुःखितः सादरं इदं ऊचे । (२) किमद्य त्वया आहार-वृत्तिर्न अनुष्ठीयते । स बक आह । वत्स सत्यं उपलक्षितं भवता । मया हि मत्स्यादनं प्रति परमवैराग्यतया सांप्रतं प्रायोपवेशनं कृतम् । तेन अहं समीपगतानपि मत्स्यान् न भक्षयामि । (३) कुलीरकस्तच्छ्रुत्वा[1] प्राह । किं तद् वैराग्य-कारणम् । स प्राह । अहं अस्मिन् सरसि जातो वृद्धिं गतश्च । तन्मया एतच्छ्रुतं[2] यद् द्वादशवार्षिकी अनावृष्टिः संपद्यते लग्ना । (४) कुलीरक आह । कस्मात् तच्छ्रुतम् । बक आह । दैवज्ञ मुखात् । वत्स पश्य ! एतत् सरः स्वल्पतोयं वर्तते । शीघ्रं

पर बैठ कर रोने लगा। (नानाजलचर समेतः) बहुत जल में विचरने वाले प्राणियों के साथ।(२) (सत्यमुपलक्षितं भवता)–ठीक आपने देखा। (मया हि.................न भक्षयामि)–मैंने तो मत्स्यभक्षण के विषय में उपोषण (व्रत) किया हैं। उससे मैं पास आने वाले मच्छियों को भी नहीं खाता । (३)(जातो वृद्धिंगतश्च) उत्पन्न होकर बड़ा होगया । (तन्मया.........लग्ना)–तो मैंने यह सुना कि बारा साल की अनावृष्टि लगी है। (४) (शीघ्रं शोषं

---

१ कुलीरकः+तत्+श्रुत्वा । २ एतत्+श्रुतं ।

शोषं यास्यति। अस्मिन् शुष्के यैः सह अहं वृद्धिं गतः सदैव क्रीडितश्च ते सर्वे तोयाभावान् नाशं यास्यन्ति । तत् तेषां वियोगं द्रष्टुं अहं असमर्थः तेन एतत् प्रायोपवेशनं कृतम्। (५) ततः स कुलीरकस्तदाकर्ण्य अन्येषामपि जलचराणां तत्तस्य वचनं निवेदयामास। अथ ते सर्वे भयत्रस्तमनसस्तं अभ्युपेत्य पप्रच्छुः। तात, अस्ति कश्चिदुपायः येन अस्माकं रक्षा भवति। (६) बक आह। अस्ति। अस्ति अस्य जलाशयस्य नातिदूरे प्रभूतजलसनाथं सरः। तद् यदि मम पृष्ठं

यास्यति) शीघ्र हि खुष्क होगा। (अस्मिन्........नाशं यास्यन्ति)- यह खुष्क होने पर जिनके साथ में बड़ा हुवा और हमेशा खेला वे सब जल के अभाव से नाश को प्राप्त होंगे। (५) (ततः स........निवेदयामास)—पश्चात् उस केंकड ने वह सुनकर अन्य जल निवासियों को भी उसका भाषण निवेदन किया। (अथ........पप्रच्छु)—नंतर वे सब भय से डरे हुवे मन वाले उसके पास जाकर पूछने लगे। (६) (अस्ति अस्य........ नयामि)—इस तालाब के पास ही बहुत जल से युक्त एक तालाब है। अगर कोई मेरे पीठ पर बैठेगा तो मैं उसको वहां ले जाऊंगा।

---

२ मनसः+तं।

कश्चिदारोहति तदहं तं तत्र नयामि । (७) अथ ते तत्र विश्वासमापन्नास्तात[4] मातुल इति ब्रुवाणा[5] अहं पूर्वं अहं पूर्वं इति समन्तात् परितस्थुः । (८) सोऽपि दुष्टाशयः क्रमेण तान् पृष्ठे आरोप्य जलाशयस्य नातिदूरे शिलां समासाद्य तस्यां आक्षिप्य स्वेच्छया तान् भक्षयित्वा स्वकीयां नित्यां आहार वृत्तिमकरोत्[6] । (९) अन्यस्मिन् दिने तं कुलीरक आह । तात ! मया सह ते प्रथमः स्नेहः संजातः । तत् किं मां परित्यज्य अन्यान् नयसि । तस्माद् अद्य मे प्राण–त्राणं कुरु । (१०) तदाकर्ण्य सोऽपि दुष्टश्चिंतितवान्[7] । निर्विण्णोऽहं[8]

---

(७) (अथ ते........परितस्थुः)—पश्चात् वे वहां विश्वास करने वाले पिता, मामा ऐसा बोलने वाले, मैं पहिले, मैं पहिले ऐसा (कहते हुवे उसके) इधर उधर ठहरे । (८) (शिलां........मकरोत्)—पत्थर प्राप्त करके, उसके ऊपर फेककर अपनी इच्छा के अनुसार उनको भक्षण करके अपना नित्य का भोजन का कार्य करता था । (९) (मां परित्यज्य)—मुझे छोड़कर । (१०) (सोऽपि दुष्टः चिंतितवान्)—उस दुष्ट ने सोचा । (निर्विण्णो........स्थाने

---

४ मापन्नाः+तात । ५ ब्रुवाणाः+अहं । ६ वृत्ति+अकरोत् ।
७ दुष्टः+चिंतितवान् । ८ निर्विण्णः+अहं ।

मत्स्यमांसभक्षणेन। तदद्य एनं कुलीरकं व्यंजन-स्थाने करोमि। (११) इति विचिन्त्य तं पृष्ठमारोप्य[9] तां वध्यशिलां उद्दिश्य प्रस्थितः। कुलीरकोऽपि[10] दूरादेव[11] अस्थिपर्वतं अवलोक्य मत्स्यास्थीनि परिज्ञाय तं अपृच्छत। तात! कियद्दूरे स जलाशयः। (१२) सोऽपि मंदधीः जलचरोऽयं[12] इति मत्वा स्थले न प्रभवति इति सस्मितं इदं आह। कुलीरक! कुतोऽन्यो[13] जलाशयः। मम प्राणयात्रा इयम्। त्वां अस्यां शिलायां निक्षिप्य भक्षयामि। (१३) इत्युक्तवति तस्मिन् कुपितेन कुलीरकेन

करोमि)—मत्स्य मांस भक्षण से घृणा हुवी है, तो आज इस केंकडे की मैं चटणी बनाऊंगा। (११) (वध्यशिलां उद्दिश्य प्रस्थितः)—वध करने के पत्थर की दिशा से चला। (मत्स्यास्थीनि परिज्ञाय)—मच्छियों की हड्डियां जानकर। (१२) (सस्मितमिदमाह)—हंसता हुवा ऐसा बोला। (कुतोऽन्यो जलाशयः)—कहां दूसरा तालाव। (मम प्राणयात्रा इयं)—मेरी प्राणों की रक्षा यह। (१३) (इति उक्तवति.........मृतश्च)—ऐसा उसने बोला, इससे क्रोधित केंकडे

---

९ पृष्टं+आरोप्य। १० कुलीरकः+अपि। ११ दूरात्+एव। १२ चरः+अयं। १३ कुतः+अन्यः।

स्ववदनेन ग्रीवायां गृहीतो मृतश्च । अथ स तां बक-ग्रीवां समादाय शनैः शनैस्तैज्जलाशयं[14] आससाद । (१४) ततः सर्वैरेव जलचरैः पृष्टः । भोः कुलीरक ! किं निमित्तं त्वं पश्चादायातः । कुशलकारणं तिष्ठति । स मातुलोऽपि नायातः । तत्किं चिरयति । (१५) एवं तैः अभिहिते कुलीरकोऽपि विहस्य उवाच । मूर्खाः सर्वे जलचरास्तेन[15] मिथ्यावादिना वंचयित्वा नातिदूरे शिलातले प्रक्षिप्य भक्षिताः । तन् मया तस्य अभिप्रायं ज्ञात्वा ग्रीवा इयं आनीता । (१६) तदलं संभ्रमेण । अधुना सर्वजलचराणां क्षेमं भविष्यति ।

पंचतंत्रम्

ने अपने मुख से गले में पकड़ा और मर गया । (शनैः........ आससाद)—आस्ते २ उस तालाब के पास पहुंचा । (१४) (कुशल कारणं तिष्ठति)—कुशल है ना । (१५) (तैः अभिहिते)—उनके कहने पर । (मूर्खाः........आनीता)—मूर्ख सब जल निवासी प्राणी उस असत्यभाषी ने ठगाकर पास के पत्थर पर फेंककर खाये । इसलिये मैं ने उसका मतलब जानकर यह गला लाया । (१६) (तदलं........भविष्यति)—तो बस (है अब) घबराना । अब सब जलनिवासियों का कल्याण होगा ।

---

१४ शनैः+तत्+जला० । १५ चराः+तेन ।

२५ पञ्चविंशः पाठः ।

पुल्लिंगी तथा नपुंसक-लिंगी शब्दों के रूप बनाने में पाठक अब प्रवीण होगये हैं। क्योंकि इस समय तक पाठकों ने न्यून से न्यून तीन वार पूर्वोक्त पाठों को स्मरण किया है। अब स्त्रीलिंगी शब्दों के रूप बनाने का प्रकार लिखते हैं।

संस्कृत में कोई अकारान्त शब्द स्त्रीलिंगी नहीं है। आकारान्त शब्द प्रायः स्त्रीलिंगी हुवा करते हैं। कई थोड़े ऐसे शब्द हैं कि जो आकारान्त होने पर भी पुल्लिंगी हैं। परन्तु उनको छोडा जाय तो बाकी के सब आकारान्त शब्द स्त्रीलिंगी हैं।

आकारान्तः स्त्रीलिंगो 'विद्या' शब्दः ।

(१)	विद्या	विद्ये	विद्याः
सं०	विद्ये	,,	,,
(२)	विद्याम्	,,	,,
(३)	विद्यया	विद्याभ्याम	विद्याभिः
(४)	विद्यायै	,,	विद्याभ्यः
(५)	विद्यायाः	,,	,,
(६)	,,	विद्ययोः	विद्यानाम्
(७)	विद्यायाम्	,,	विद्यासु

पुल्लिंग में द्वितीया के बहुवचनमें तथा तृतीयाके एकवचन में नकार प्रायः रहता है जैसा-रामान्, रामेण। परंतु स्त्रीलिंग में नहीं रहता। जैसा—विद्याः, विद्यया॥ अस्तु। इस प्रकार 'गंगा,

रमा, कृपा, मज्जा, जिह्वा, भार्या, माला, गुहा, शाला, बाला, पत्रिका' इत्यादि शब्दों के रूप होते हैं।

'अंबा, अक्का, अल्ला' इत्यादि शब्दों के संबोधन के एकवचन के 'अम्ब, अक्क, अल्ल' ऐसे रूप होते हैं। शेष रूप उक्त 'विद्या' के समान हि होते हैं।

ईकारान्तः स्त्रीलिंगो 'लक्ष्मी' शब्दः।

(१)	लक्ष्मीः	लक्ष्म्यौ	लक्ष्म्यः
सं०	लक्ष्मि	,,	,,
(२)	लक्ष्मीम्	,,	लक्ष्मीः
(३)	लक्ष्म्या	लक्ष्मीभ्याम्	लक्ष्मीभिः
(४)	लक्ष्म्यै	,,	लक्ष्मीभ्यः
(५)	लक्ष्म्याः	,,	,,
(६)	,,	लक्ष्म्योः	लक्ष्मीणाम्
(७)	लक्ष्म्याम्	,,	लक्ष्मीषु

इसी प्रकार 'नदी' शब्द के रूप होते हैं। परंतु प्रथमा का एकवचन 'नदी' ऐसा विसर्ग रहित होता है, इतनी बात ध्यान में रखनी चाहिये। बाकी के रूपों में कोई भेद नहीं। नदी शब्द के समान हि 'श्रेयसी, कुमारी, बुद्धिमती, वाणी, सखी, गौरी' इत्यादि स्त्रीलिंगी शब्दों के प्रथमैकवचन में विसर्ग रहित रूप होकर शेष रूप लक्ष्मीवत् होते हैं।

'तरी, तन्त्री, अवी, स्तरी' इनके रूप लक्ष्मी के समान हि होते हैं।

३७ नियम—'च, छ, ट, ठ, श्' इनको छोड कर अन्य कठोर व्यंजन के पूर्व आने वाला 'त्' वैसा हि रहता है । जैसाः—

गृहात्	+	पतति	=	गृहात् पतति, गृहात्पतति
तत्	+	कुरु	=	तत् कुरु, तत्कुरु
यत्	+	फलम्	=	यत् फलम्, यत्फलम्

३८ नियम—'ज, झ, ड, ढ, ल' इनको छोड कर अन्य मृदु व्यंजन तथा स्वर के पूर्व के 'त्' कार का 'द्' होता है । जैसाः—

नगरात्	+	वनम्	=	नगराद्वनम्, नगराद् वनम्
तत्	+	गृहम्	=	तद्गृहम्, तद् गृहम्
एतत्	+	अस्ति	=	एतदस्ति, एतद् अस्ति
तत्	+	आसीत्	=	तदासीत्, तद् आसीत्

शब्द—पुल्लिंगी ।

दंपती—स्त्रीपुरुष, जायापति
टिट्टिभः—एकपक्षी (पुरुष)
प्रदेशः—स्थान, देश
गजेन्द्रः—हाथी में श्रेष्ठ
अपहारः—हरण करना
वह्निः—अग्नि
पतंगः—पतंग(कीडा जो दीपके ऊपर गिरता है)
विहगः—पक्षी
अनिर्वेदः—न थकना, उत्साह, जोष
समवायः—समूह, मजमुआ
मयूरः—मोर
वैनतेयः—गरुड
परिभवः—अपमान
देवः—देवता
नमस्कारः—नमन,
निग्रहः—पराभव,

सुहृत्—मित्र

असारः—निःसत्व, बलहीन

कान्तः—प्रिय, पति

प्रसवः—प्रसूति

प्रसव-समयः—प्रसूतिका काल

गर्वः—अभिमान

कीटः—कीडा

अहंकारः—अभिमान

उत्साहः—जोष

निर्वेदः—थकावट

आश्रयः—आधार

श्वन्—कुत्ता

स-भयः—डरके साथ

दूतः—नौकर

भृत्यः—नौकर

कुभृत्यः—बुरा नौकर

सुभृत्यः—अच्छा नौकर

अपमानः—मान हानि

प्रहारः—मार, आघात

शरः—बाण

स्त्रीलिंगी ।

टिट्टिभी—एक पक्षी (स्त्री)

आसन्न-प्रभवा—जिसका प्रसूति काल समीप है

मात्रा—मजाल

प्राणयात्रा—भोजनादि की व्यवस्था

चंचुः—चोंच

विप्रुष्—बूंद

वाहिनी—उठाने वाली

पूर्णिमा—जिस दिन चांद पूरण होता है —ह दिन

समुद्रवेला—समुद्र का किनारा,

विश्रब्धा—विश्वासित होकर

मूढता—मूर्खता

जन्हवी—गंगा नदी

सिंधुः—सिंधु नदी

श्रीः—संपत्ति

अमरावतिः—देवनगरी

स्थलता—जमीनपन

त्रपा—लज्जा

लज्जा—लाज

नपुंसकलिंगी ।

प्रमाणं—प्रमाण, निश्चय	अहोरात्रं—दिनरात्र
कुतूहलं—कौतुक, आश्चर्य	वैरं—शत्रुता
तोयं—जल	आनृण्यं—ऋण का अभाव
अगडं—अगडा	आग्नेयं—अग्नि संबंधि
मोक्षणं—छोडणा	वाहनं—(रथ आदि) वाहन

विशेषण ।

निरुपद्रव—जहां कष्ट न हो, कष्ट रहित	अश्रद्धेय—विश्वास के लिये अयोग्य
मत्त—उन्मत्त	संनिभ—समान
प्रलपन्ती—रोने वाली	दुर्जय—जीतने के लिये कठिन
समुत्सुक—उत्सुक	पराभूत—पराभव किया हुवा
स्वल्प—छोटा	कुपित—क्रोधित
गुरु—बडा	मदीय—मेरा
मंत्रित—सलाह दी	सन्—होने वाला
रम्य—रमणीय, सुंदर	आविष्ट—युक्त
स्थित—ठहरा	वाच्य—कहने योग्य
आयात—आया हुवा	अधोमुख—नीचे मुंह कियाहुवा
शून्य—खाली	

क्रिया ।

अविदित्वा—न जानकर	दूषयिष्यति—बिघाडेगा
वसतः—(दो) रहते हैं	व्रजावः—(दोनों) जाते हैं

आधत्त—धारण किया
विहस्य—हंसकर
मुंच—छोड
अपजहार—हरण किया (वह)
अकरोः—(तू) किया
विदित्वा—जानकर
विचिन्त्यतां—सोचीये
आकर्षति—खेंचती है
अन्वेष्यताम्—धूंड लीजिये।
संमन्यसि—मानते हो
शोषयामि—सुखाता हूं
विक्रमन्ते—विजय पाते हैं
समाचर—कर
निवेदयामः—कहेंगे
निर्भर्त्स्य—निंदा करके
संभावयामः—संमान करेंगे
संधाय—लगाकर

अन्य।

द्रुततरं—बहुत शीघ्र
साभिमानं—अभिमानयुक्त
सम्यक्—ठीक
सकाशं—पास

(२२) टिट्टिभी-समुद्रयोः कथा

(१) कस्मिंश्चित् समुद्रैकदेशे[1] टिट्टिभदंपती वसतः। ततो[2] गच्छति काले टिट्टिभी गर्भं आधत्त। आसन्न-प्रसवा सा टिट्टिभं ऊचे। (२) भो कांत, मम प्रसव-समयो वर्तते। तद्विचिन्त्यतां[3] किमपि निरुपद्रवं स्थानं येन तत्र अहं अण्डमोक्षणं करोमि।

(१) (टिट्टिभ-दंपती वसतः)—टिट्टिभ पक्षी के स्त्रीपुरुष

१ समुद्र+एक०। २ ततः+गच्छ०। ३ तत्+विचिं०।

(३) स आह–भद्रे! रम्यो[४]ऽयं समुद्र–प्रदेशः। तदत्रैव[५] प्रसवः कार्यः। सा प्राह–अत्र पूर्णिमादिने समुद्रवेला चलति। सा मत्तगजेन्द्रानपि[६] आकर्षति। तद्दूरं[७] अन्यत्र किंचित्स्थानं अन्वेष्यताम्। (४) तच्छ्रुत्वा विहस्य टिट्टिभ आह। भद्रे न युक्त-मुक्तं[८] भवत्या। का मात्रा समुद्रस्य यो मम दूषयिष्यति प्रसूतिम्। तद्विश्रब्धा[९] अत्रैव गर्भं मुंच। (५) तच्छ्रुत्वा[१०] समुद्रः चिंतयामास। अहो गर्वः पक्षिकीटस्य अस्य। तन्मया[११] अस्य प्रमाणं कुतूहलादपि[१२] द्रष्टव्यम्। किं मम एषोऽण्डाऽपहारे करि-

---

रहते हैं। (गच्छति काले) समय होने पर। (३) तदत्रैव प्रसवः कार्यः)–तो यहां ही प्रसूति करनी योग्य है। (समुद्र-वेला चलति) समुद्र की मर्यादा हिलती है–पानी बढ़ता है। (सा मत्तगजेंद्रान् अपि आकर्षति) वह उन्मत्त बड़े हाथियों को भी खेंचती है। (४) (न युक्तं उक्तं भवत्या)–तुमने ठीक नहीं कहा। (का मात्रा.........प्रसूतिम्) क्या मजाल है समुद्र की जो मेरी प्रसूती को बिघाडेगा। (५) (अहो.........कीटस्य अस्य)–अरे

---

४ रम्यः+अयं। ५ तद्+अत्र+एव। ६ गज+इन्द्रान+अपि। ७ तत्+दूरं+। ८ युक्तं+उक्तं। ९ तत्+विश्रब्धा। १० तत्+श्रुत्वा ११ तत्+मया। १२ कुतूहलात्+अपि।

ष्यति। इति चिंतयित्वा स्थितः। (६) अथ प्रसवानंतरं प्राणयात्रार्थं गतायाः टिटिभ्याः समुद्रोऽण्डानि[13] अपजहार। अथ आयाता सा प्रसवस्थानं शून्यं अवलोक्य प्रलपंती टिट्टिभं ऊचे। (७) भो मूर्ख, कथितं आसीन् मया ते यत्समुद्रवेलया अण्डानां नाशो भविष्यतीति[14]। तद्दुततरं[15] व्रजाव इति। परं मूढतया अहंकारं आश्रित्य मम वचनं नाऽकरोः[16]। (८) स आह—भद्रे—किं मां मूर्खं संभावयसि। तत् पश्य मे बुद्धि प्रभावं यावद् एनं दुष्टं समुद्रं शोषयामि। (९) सा प्राह-अहो, कस्ते[17] समुद्रेण सह विग्रहः। अथवा साधु इदं उच्यते।

क्या अभिमान है इस पक्षी के कीड़े का। (६) (अथ........ अपजहार)—नंतर प्रसूति के पश्चात् भोजन ढूंड़ने के लिये गये हुवे टिटिभी के अण्डे समुद्र ने हरण किये। (शून्यं अवलोक्य) खाली देखकर। (७) (मूढतया........ऽकरोः)—मूर्खता से अभिमान धरकर मेरा वचन नहीं किया। (८) (मूर्खं संभावयसि)—मूर्ख समझते हो। (९) (आत्मनः) अपनी (परस्य च) और शत्रु की (शक्तिं) शक्ति (अविदित्वा) न जानकर जो (समुत्सुकः) जोष से भरा हुवा (अभिमुखः व्रजन्) चढ़ाई करने के लिये सीधा जाता

---

१३ समुद्रः+अण्डा०। १४ भविष्यति+इति। १५ तत्+द्रुत०। १६ न+अकरोः। १७ कः+ते।

अविदित्वाऽऽत्मनः[18] शक्तिं

परस्य च समुत्सुकः ।

व्रजन्नभिमुखो[19] नाशं

याति वह्नौ पतंगवत् ॥

(१०) टिट्टिभ आह—प्रिये मा मा एवं वद । येषां उत्साहशक्तिर्भवति[20] ते स्वल्पा अपि गुरून् अपि विक्रमन्ते । तदनया[21] चञ्च्वा अस्य सकलं तोयं शुष्कस्थलतां नयामि । (११) टिट्टिभी आह । भो कांत, यत्र जाह्नवी नवनदीशतानि गृहीत्वा नित्यमेव प्रविशति तथा सिंधुश्च[22] तत् कथं एतादृशं समुद्रं विप्रुषवाहिन्या चञ्च्वा शोषयिष्यसि । (१२) तत् किं अश्रद्धेयेन उक्तेन इति । स आह—अनिर्वेदः श्रियो मूलम् ।

है वह (नाशं याति) नाश को प्राप्त होता है । जैसा (वह्नौ) अग्नि में (पतंग-वत्) पतंग के समान । (१०) (ते स्वल्पा०........ विक्रमन्ते)—वे छोटे होने पर भी बड़ों को जीतते है । (अनया चञ्च्वा) इस चोंच से । (१२) (नवनदी शताति)—नौ सौं नदियां । (विप्रुषवाहिन्या चञ्च्वा) एक बूंद धरने वाली चोंच से । (१२) अनिर्वेदः श्रियो मूलं)—उत्साह धन का मूल है । (लोह-सन्निभा)

---

१८ विदित्वा+आत्म० । १९ व्रजन्+अपि० ।
२० शक्तिः+भव० । २१ तत्+अनया । २२ सिंधु+च ।

मम चंचुः लोहसंनिभा । अहोरात्राणि दीर्घाणि । तत् किं समुद्रो न शुष्यति । (१३) सा प्राह । यदि त्वया अवश्यं समुद्रेण सह वैरानुष्ठानं कार्यं तद् अन्यानपि विहगान् आहूय सुहृज्जन-सहित एवं समाचर । यतः असाराणामपि[२३] बहूनां समवायो दुर्जयः । (१५) सम्यङ् मंत्रितं भवत्या इत्युक्त्वा[२४] स बकसारस-मयूरादीन् आहूय—भोः पराभूतोऽहं समुद्रेण अण्डा-पहारेण तत् चिंत्यतां अस्य शोषणोपाय[२५] इति प्रोवाच । (१६) ते संमन्त्र्य प्रोचुः । अशक्ता वयं अस्मिन् कर्मणि । तदस्माकं[२६] स्वामी वैनतेयोऽस्ति[२७] । तत्सकाशं गत्वा एतत्परिभव-स्थानं तस्मै निवेदयामः । येन स्वजाति-परिभव-कुपितो वैरानृण्यं गच्छति । (१६) तथा निश्चित्य सर्वे ते गरुडस्य सकाशं गत्वा टिट्टिभ-

---

लोहे के समान । (१४) (असाराणां अपि बहुनां समवायो दुर्जयः)—अनेक दुर्बलों का समूह जीतने के लिये अशक्य है । (१५) (सम्यक् मंत्रितं भवत्या)—तू नें ठीक सलाह दी । (येन स्व०........गच्छति) जिससे स्वजाति के अपमान से क्रोधित

---

२३ साराणां+अपि । २४ इति+उक्त्वा । २५ शोषण+उपाय । २६ तत्+अस्माकं । २७ वैनतेयः+अस्ति ।

वृत्तांतं तस्मै अकथयन् । (१७) तं समाकर्ण्य गरुडः कोपाविष्टः सन् समुद्र-शोषण-निश्चयं चकार । अत्रांतरे विष्णुदूत आगत्य तं उवाच । (१८) भो, गरुत्मन्, देवकार्येण श्रीभगवान् अमरावतीं यास्यति, तत् सत्वरं त्वया आगम्यताम् इति । (१९) गरुडः साभिमानं प्राह-भो दूत, किं मया कुभृत्येन श्रीभगवान् करिष्यति । तद् गत्वा वद, अन्यो भृत्यो वाहनाय अस्मत्स्थाने क्रियताम् । मदीयो[२८] नमस्कारश्च भगवते वाच्यः । (२०) दूत आह-भो वैनतेय, त्वया कदाचिदपि[२९] भगवंतं प्रति न एतादृग् अभिहितम् । तत् कथय किं ते भगवता अपमानस्थानं कृतम् । (२१) गरुड आह—भगवदाश्रयभूतेन[३०] समुद्रेण अस्मट्टिट्टिभाण्डानि[३१] अपहृतानि । तद् यदि निग्रहं न करोति तदहं भगवतो न भृत्य इति, एष निश्चयस्त्वया[३२] वाच्यः । (२२) अथ दूतमुखेन कुपितं वैनतेयं ज्ञात्वा भगवान् सत्वरं तत्सकाशं

हुवा हुवा वैर को प्राप्त होगा । (१९) (साभिमानं प्राह)—घमंड से बोला । (२०) (एतादृक् अभिहितं)—ऐसा कहा । (२१) (यदि निग्रहं न करोति) अगर उसको दण्ड न देगा ।

---

२८ मदीयः+नम० । २९ चित्+अपि । ३० भगवत्+आश्रय । ३१ अस्मत्+टिट्टिभ । ३२ निश्चयः+त्वया ।

जगाम । वैनतेयोऽपि गृहागतं भगवंतं अवलोक्य त्रपाऽधोमुखः[33] प्रणम्य उवाच । (२३) भगवन्, त्वदाश्रयोन्मत्तेन[34] समुद्रेण मम भृत्यस्य अण्डानि अपहृत्य मे अपमानस्थानं कृतम् । परं युष्मल्लज्जया[35] अहं तं स्थलतां न नयामि । यतः स्वामिभयात् शुनोऽपि प्रहारो न दीयते । (२४) तच्छ्रुत्वा भगवान् आह-सत्यमभिहितम् । तद् आगच्छ येन अण्डानि समुद्राद् आदाय टिट्टिभं संभावयामः । (२५) तथा अनुष्ठिते समुद्रो भगवता निर्भर्त्स्य आग्नेयं शरं संधाय अभिहितः । भो दुरात्मन् दीयतां टिट्टिभाण्डानि । नोचेत् स्थलतां त्वां नयामि । (२६) ततः समुद्रेण सभयेन अण्डानि तानि प्रदत्तानि । टिट्टिभेनापि स्वभार्यायै समर्पितानि ।

पंचतंत्रम्

---

(२३) (त्रपाऽधोमुखः) लज्जा से नीचे मुंह करके। (स्वामि भयात्..........दीयते) मालिक के भय से कुत्ते को भी मार नहिं दिया जाता । (२४) (टिट्टिभं संभावयामः) टिट्टिभ का सन्मान करें (२५) (तथा........अभिहितः) वैसा करने पर समुद्र को भगवान ने निंदा करके आग्नेय बाण को लगाकर कहा ।

---

३३ त्रपा+अधः+मुखः । ३४ त्वत्+आश्रय+उन्मत्त० ।
३५ युष्मत्+लज्ज० ।

समासाः ।

(१) समुद्रैकदेशः——————समुद्रस्य एकदेशः ।

(२) आसन्न प्रभवा——————आसन्नः प्रभवः यस्याः ।

(३) अगड मोक्षणं——————अगडानां मोक्षणम् ।

(४) मत्तगजेन्द्रः——————मत्तश्चासौ गजेंद्रश्च ।

(५) समुद्रवेला——————समुद्रस्य वेला ।

(६) बुद्धिप्रभावं——————बुद्ध्याः प्रभावम् ।

(७) अभिमुखः——————अभितः मुखं यस्य ।

(८) विप्रुषवाहिनी——————विप्रुषं वहतीति ।

(९) अश्रद्धेयं——————श्रद्धातुं योग्यं श्रद्धेयं । न श्रद्धेयं अश्रद्धेयम् ।

(१०) सुहृज्जन सहितः—सुहृज्जनेन सहितः ।

(११) वैनतेयः——————विनतायाः अपत्यं वैनतेयः ।

(१२) आग्नेयं——————अग्नेः इदं आग्नेयम् ।

(१३) स्वभार्या——————स्वस्य भार्या ।

२६ षड्विंशः पाठः ।

ऊकारान्तः स्त्रीलिंगः 'चमू' शब्दः ।

(१)	चमूः	चम्वौ	चम्वः
सं०	चमु	,,	,,
(२)	चमूम	,,	चमूः
(३)	चम्वा	चमूभ्याम्	चमूभिः

(४)	चम्वै	,,	चमूभ्यः
(५)	चम्वाः	,,	,,
(६)	,,	चम्वोः	चमूनाम्
(७)	चम्वाम्	,,	चमुषु

इसी प्रकार 'वधू, श्वश्रू, जम्बु, कर्कन्धू, दिधिषू, यवागू, चम्पू,' इत्यादि ऊकारान्त स्त्रीलिंगी शब्द चलते हैं।

ईकारान्तः स्त्रीलिंगः 'स्त्री' शब्दः ।

(१)	स्त्री	स्त्रियौ	स्त्रियः
सं०	स्त्रि	,,	,,
(२)	स्त्रियम्, स्त्रीम्	,,	,, , स्त्रीः
(३)	स्त्रिया	स्त्रीभ्याम्	स्त्रीभिः
(४)	स्त्रियै	,,	स्त्रीभ्यः
(५)	स्त्रियाः	,,	,,
(६)	,,	स्त्रियोः	स्त्रीणाम्
(७)	स्त्रियाम्	,,	स्त्रीषु

इस प्रकार एक स्वर वाले ईकारान्त स्त्रीलिंगी शब्द चलते हैं।

३९ नियम—'क्, च्, ट्, त्, प्' इनके सामने मृदु व्यंजन आने से इनके स्थान पर क्रमशः "ग्, ज्, ड्, द्, ब्" होते हैं।

वाक् + जन्म = वाग्जन्म	त्रिष्टुप् + गंधः = त्रिष्टुब्गंधः।
भूभृत् + भ्याम् = भूभृद्भ्याम्	वषट् + जनः = वषड्जनः।

शब्द—पुल्लिंगी ।

संल्लापः—बातचीत
गिरिः—पर्वत
गुरुजनः—बडेलोक
गुरुः—शिक्षक
क्रतुः—यज्ञ
आत्मजः—पुत्र
रक्षितृ—रक्षण करने वाला
अधिष्ठातृ—मुखिया अधिष्ठाता

पंथा—मार्ग
वटः—बड
बाष्पः—भांफ, आंसु
अपवादः—अकीर्ति
परिणयः—विवाह, शादी
संप्रदायः—पद्धति, प्रकार
अकालमृत्युः—अनुचित समय पर मृत्यु

स्त्रीलिंगी ।

अशरीरिणी—आकाशवाणी
प्रतिकृतिः—मूर्ति

विदिश्—उपदिशा
सहधर्मचारिणी—धर्मपत्नी

नपुंसकलिंगी ।

निर्माणं—उत्पत्ति
सत्रं—यज्ञ
कुसुमं—फूल
अब्रह्मण्यं—दुःखकी पुकार
चतुरंगबलं—चार प्रकारकीसेना

बाष्पं—भांफ, आंसु
वज्रं—तलवार
उरस्ताडनं—छाती पीटनी
चेतस्—चित्त, मन
शास्त्रं—शास्त्र

विशेषण ।

विश्रांता—विश्राम किया हुवा
वल्लभ—प्रिय

दृष्ट—देखा हुवा
प्रक्रांत—प्रारंभ किया हुवा

पञ्च—पांच
कठोर—सख्त
मृदु—नरम
मेध्य—पवित्र
विसृष्ट—छोड दिया
दारुण—कठिन
उपकल्पित—नियुक्त किया
लोकोत्तर—लोकों में विशेष
अन्वित—युक्त
नामशेष—मरा हुवा, जिसका नाम हि बाकी रहाहै।

क्रिया।

समाश्वसिहि—सावधान हो
परिणीतं—विवाह किया
अत्याहितं—बुरा हुआ
अर्हति—योग्य होता है

अन्य।

संप्रति—अब
सांप्रतं—आजकल
शांतंपापं—छू छू, ये क्या !
यथाशास्त्रं—शास्त्रानुकूल
हंत—अरेरे

(२३) आत्रेयी वनदेवतयोः सीताराम-विषयकः संलापः।

(१) **आत्रेयी**—विश्रांताऽस्मि भद्रे। संप्रति अगस्त्या-

---

(१) (**विश्रांताऽस्मि**)—आराम किया, थकावट दूर होगयी। —स्त्रीलिंग में। इसी का पुल्लिंगमें (**विश्रांतोऽस्मि**) ऐसा बनेगा।

श्रमस्य पंथानं ब्रूहि। (२) वनदेवता—इतः पञ्चवटीमनु[1] प्रविश्य गम्यतामनेन[2] गोदावरीतीरेण। (३) आत्रेयी—(सबाष्पा) अपि एषा पंचवटी। अपि सरिद् इयं गोदावरी। अपि अयं गिरिः प्रस्रवणः। अपि वनदेवता जनस्थान-वासिनी वासंती त्वम्। (४) वासंती—अस्ति एतत सर्वम्। (५) आत्रेयी—वत्से जानकि।

---

(२) (पंचवटी अनुप्रविश्य) पंचवटी में प्रवेश करके। (३) (सबाष्पा) (आंखों में आंसू लाकर) (अपि.........त्वम्)—क्या यही तपोवन। क्या यही पंचवटी। क्या यही गोदावरी नदी। क्या यही प्रस्रवण पर्वत। क्या तू ही जनस्थान वासी वनदेवता॥ (इसका तात्पर्य यह है कि आत्रेयी कहती है कि 'क्या यही पंचवटी है कि जहां सीतादेवी एक समय रही थी' और ऐसा कहते हुवे उनको बड़ा दुःख होता है, क्योंकि अब सीताका त्याग श्रीरामचंद्र ने किया है) इसी प्रकार सब स्थान पर समझ लेना॥ (५) (सः एषः)—वह यही (ते वल्लभबंधुवर्गः) तुमारा प्रिय बंधुगण है कि जो (प्रासंगिकानां कथानां विषयः) प्रासंगिक कथाओं का विषय है। और यह (नामशेषां अपि त्वां) तुमारा मृत्यु होने पर भी (दृश्यमानः) नजर आता है। और यही (नः) हमको (प्रत्यक्ष—दृश्यां इव)

---

१ वटीं+अनु। २ गम्यतां+अने०।

स एष ते वल्लभ-बंधुवर्गः ।

प्रासंगिकानां विषयः कथानाम् ॥

त्वां नामशेषामपि[3] दृश्यमानः ।

प्रत्यक्षदृश्यामिव[4] नः करोति ॥१॥

(६) वासंती—(सभयं स्वगतम्) कथं नामशेषां इति आह । (प्रकाशं) आर्ये किं अत्याहितं सीतादेव्याः । (७) आत्रेयी—न केवलमत्याहितम्[5] । सापवादमपि[6] । (८)वासंती-कथमिव॥(९)आत्रेयी—(कर्णे) एवं एवम्॥(१०)वासंती—अहह दारुणो[7] दैवनिर्घातः (इति मूर्च्छति)(११) आत्रेयी—

साक्षात् तुमारा दर्शन होता है ऐसा (करोति) करता है ॥ अर्थात् पंचवटी आदि देखने से तुम्हारा स्मरण होता है । इस समय आत्रेयी समझती है कि सीता बन में छोडने के कारण मर चुकी है ॥ (नामशेषा) मरी हुवी । (सापवादं) अकीर्ति–बदनामी–से भरा हुवा ॥ (९) (कर्णे) कान में सीता के विषय में बात कहती है कि धोबी ने कीई हुवी निंदा सुनकर रामचंद्र ने सीता को बन में छोड दिया इत्यादि० ॥ (१०) (निर्घातः) प्रहार, आघात ।

---

३ शेषां+अपि । ४ दृश्यां+इव । ५ केवलं+अत्याहितं । ६ वादं+अपि । ७ दारुणः+दैव० ।

भद्रे, समाश्वसिहि समाश्वसिहि । (१२) वासंती—हा प्रियसखि । हा महाभागे ! ईदृशस्ते निर्माण भागः । रामभद्र रामभद्र ! अथवा अलं त्वया ! आर्ये आत्रेयि ! अथ तस्माद् अरण्यात् परित्यज्य निवृत्ते लक्ष्मणे सीतादेव्याः किं वृत्तम् इति काचिदस्ति प्रवृत्तिः । (१३) आत्रेयी—नहि नहि । (१४) वासंती—हा कष्टम् ! आर्याऽरुंधतीवसिष्ठाधिष्ठिते रघुकुलगृहे जीवंतीषु च प्रवृद्धराज्ञीषु कथमिदं जातम् । (१५) आत्रेयी—ऋष्यश्रृंगसत्रे गुरुजनः तदा आसीत् । संप्रति परिसमाप्तं तद् द्वादशवार्षिकं सत्रम् । ऋष्यश्रृंगेण च संपूज्य विसर्जिताः गुरवः । ततो भगवती अरुंधती नाहं वधूविरहिता

---

(१२) (ईदृशः ते निर्माणभागः) हाय, यही तुम्हारा जन्म का भाग ॥ अर्थात् ऐसे बदनामी के लिये हि तेरा जन्म है ॥ (अलं त्वया) बस तुमारा । तुम से क्या कहें ॥ (निवृत्ते लक्ष्मणे) लक्ष्मण वापस होने के बाद ॥ (काचिद् अस्ति प्रवृत्तिः) कुछ पता है ॥ (१४) (आर्या........जातं)—श्रेष्ठ अरुंधति और वसिष्ठ रघुकुल में रहते हुवे तथा वृद्ध राणियों के मौजूदगी में यह प्रकार कैसा हुवा ॥ (१५)(विसर्जिताः गुरवः)—गुरुओं को वापस भेजा ।

---

८ ईदृशः+ते । ९ काचित्+अस्ति । १० विसर्जिताः+गुरवः ।

अयोध्यां गमिष्यामि इत्याह । तदेव[11] राममातृभिः अनुमोदितम्। तदनुरोधात् भगवतो वसिष्ठस्य परिशुद्धा वाचो यथा वाल्मीकि तपोवनं गत्वा तत्र वत्स्याम इति ।

(१६) वासंती—अथ स राजा किमारंभः संप्रति । (१७) आत्रेयी—तेन राज्ञा क्रतुः अश्वमेधः प्रक्रान्तः । (१८) वासंती—अहह । धिक् ! परिणीतमपि[12] । (१९) आत्रेयी—शांतं पापम् । (२०) वासंती—का तर्हि यज्ञे सह-धर्मचारिणी । (२१) आत्रेयी—हिरण्मयी सीताप्रति कृतिः । (२२) वासंती—हंत भोः ।

(वधूविरहितां अयोध्यां) लडकी-(सीता)-जहां नहीं है ऐसे अयोध्या को। (परिशुद्धा वाचः) शुद्ध भाषण ।

(१६) स राजा किं आरंभः संप्रति)—उस राजा (राम) ने क्या प्रारंभ किया है अब। (१८) (परिणीतं अपि)—क्या शादी भी की ! (१९) (शांतं पापं)—च् च् छेः,ऐसा कभी होसकता है? शिव शिव। (इस प्रकार का भाव यहां है)। (२१) (हिरण्मयी ....कृतिः)—सोने की सीता की मूर्ति। (२२) (वज्रादपि

---

११ तत्+एव । १२ परिणीतं+अपि ।

वज्रादपि कठोराणि मृदूनि कुसुमादपि ।
लोकोत्तराणां चेतांसि को हि विज्ञातुमर्हति ॥२॥

(२३) आत्रेयी—विसृष्टश्च[13] वामदेवानुमंत्रितः मेध्यो-ऽश्वः[14]। उपकल्पिताश्च[15] यथाशास्त्रं तस्य रक्षितारः । तेषां अधिष्ठाता च लक्ष्मणात्मजः चंद्रकेतुः दत्तदिव्यास्त्र संप्रदायः चतुरंग-साधनान्वितोऽनुप्रहितः । (२४) वासंती—(स स्नेह-कौतुकं) कुमार-लक्ष्मणस्यापि पुत्रः । हंत मातर्जीवामि । (२५) आत्रेयी—अत्रान्तरे ब्राह्मणेन मृतं पुत्रं उत्क्षिप्य

कठोराणि)—वज्र से भी कठिन (कुसुमाद् अपि मृदूनि) फूल से भी नरम ऐसे (लोकोत्तराणां चेतांसि) श्रेष्ठों के मन (हि कः विज्ञातुं अर्हति) कौन जान सकता है। (२३) (वामदेवानु-मंत्रितः)—वामदेव ऋषी ने जिसको अभिमंत्रित किया है । (दत्तदिव्य........प्रहितः) जिसको दिव्य अस्त्रों की परंपरा दी है, तथा चार प्रकार की सेना जिसके साथ है ऐसा (अनुप्रहितः) साथ भेजा है। (२४) (मातः जीवामि)—हे माता मैं बच गयी। (आश्चर्य का यह प्रकाशक भाषण है) । (२५) (सोरस्ताडनं

---

१३ विसृष्टः+च । १४ मेध्य+अश्वः । १५ साधन+अन्वितः+अनु ।

राजद्वारे सोरस्ताडनं अब्रह्मण्यं उद्घोषितम्। ततो न राजाऽपराधं अन्तरेण प्रजासु अकालमृत्युः चरति इति आत्मदोषं निरूपयति करुणामये रामभद्रे सहसैव अशरीरिणी वाग् उदचरत्।

(२६) शंबूको नाम वृषलः
पृथिव्यां तप्यते तपः।
शीर्षच्छेद्यः स ते राम
तं हत्वा जीवय द्विजम् ॥१॥

........उद्घोषितम्)—छाती पीटते हुवे दुःख की पुकार की। (ततो ....उदचरत) नंतर राजा के दोषके बिना प्रजा में अकाल मृत्यु नहीं होता है इसलिये अपना दोष दयामय रामचंद्र ने मानने पर अकस्मात् आकाश वाणी होगई। (२६) (शंबूकः नाम वृषलः)—शंबूक नामक शूद्र (पृथिव्यां तपः तप्यते) पृथ्वी पर तप करता है। (राम, स ते शीर्ष-छेद्यः) हे राम वह तू ने शिरच्छेद करने योग्य है। (तं हत्वा द्विजं जीवय) उसको मारकर ब्राह्मण को जिंदा कर। (इति उपश्रुत्य) ऐसा सुनकर। (कृपाणपाणिः) जिसके हाथ में तलवार है। (शूद्रतापसान्वेषणाय) तप करने

इत्युपश्रुत्य[16] एव कृपाणपाणिः पुष्पकं विमानमारुह्य सर्वा-दिशो[17] विदिशश्च[18] शूद्रतापसान्वेषणाय जगत्पतिः संचरितुं आरब्धवान् । (२७) वासंती—शंबूको नाम घूमपः शूद्रोऽस्मिन्नेव जनस्थाने तपश्चरति तदपि रामभद्रः पुनरपीदं[19] वनं अलंकुर्याद् । (२८) आत्रेयी—भद्रे गम्यतेऽधुना । (२९) वासंती—एवमस्तु । कठोरीभूतो दिवसः ।

उत्तररामचरितम्

वाले शूद्र को ढूंडने के लिये । (२७) (शंबूको........अलं-कुर्यात्)—शंबूक नामक धूम्रपान करने वाला शूद्र इसी जनस्थान में तप करता है । तो रामचंद्र फिर इस वन को सुशोभित करेंगे ॥

---

१६ इति+उपश्रुत्य । १७ दिशः+विदिशः । १८ विदिशः+च । १९ पुनः+अपि+इदं ।

---

२७ सप्तविंशः पाठः ।

इकारान्तः स्त्रीलिंगो 'रुचि' शब्दः ।

(१)	रुचिः	रुची	रुचयः
हे	रुचे	,,	,,
	रुचिम्	,,	रुचीः

(३)	रुच्या	रुचिभ्याम	रुचिभिः
(४)	रुच्यै, रुचये	,,	रुचिभ्यः
(५)	रुच्याः, रुचेः	,,	,,
(६)	,, ,,	रुच्योः	रुचीनाम्
(७)	रुच्याम्, रुचौ	,,	रुचिषु

इस शब्द के चतुर्थी से सप्तमी पर्यंत एकवचन के दो दो रूप होते हैं, एक 'लक्ष्मी' शब्द के समान तथा दूसरा 'हरि' शब्द के समान होता है। यह बात पाठकों ने अवश्य ध्यान में रखनी चाहिये। इस प्रकार 'स्तुति, मति, बुद्धि, शुचि' आदि शब्द चलते है।

उकारान्तः स्त्रीलिंगो 'धेनु' शब्दः।

(१)	धेनुः	धेनू	धेनवः
सं०	धेनो	,,	,,
(२)	धेनुम्	,,	धेनूः
(३)	धेन्वा	धेनुभ्याम्	धेनुभिः
(४)	धेन्वै, धेनवे	,,	धेनुभ्यः
(५)	धेन्वाः, धेनोः	,,	,,
(६)	,, ,,	धेन्वोः	धेनूनाम्
(७)	धेन्वाम्, धेनौ	,,	धेनुषु

इसी प्रकार 'रज्जु, हनु, तनु, लघु' इत्यादि स्त्रीलिंगी) शब्द चलते हैं।

रने

इस शब्द के भी चतुर्थी से सप्तमी पर्यंत एकवचन के दो दो रूप होते हैं, एक 'चमू' शब्द के समान तथा दूसरा 'भानु' शब्द के समान होता है। इकारान्त स्त्रीलिंगी शब्दों से ईकारान्त स्त्रीलिंगी शब्दों में कौनसा भेद है तथा उकारान्त और ऊकारान्त स्त्रीलिंगी शब्दों में कौनसी भिन्नता है इसका विचार पूर्वोक्त रूप देखकर पाठकों ने करना चाहिये। इस पाठ में ह्रस्व इकारान्त तथा ह्रस्व उकारान्त स्त्रीलिंगी शब्द दिये हैं तथा २६वें पाठ में दीर्घ ईकारान्त तथा दीर्घ ऊकारान्त शब्द दिये हैं। पाठकों को चाहिये कि वे इनकी परस्पर तुलना करके परस्पर विशेषता का स्मरण रखें।

धकारान्तः स्त्रीलिंगः 'समिध्' शब्दः।

(१)	समित्	समिधौ	समिधः
सं०	,,	,,	,,
(२)	समिधम्	,,	,,
(३)	समिधा	समिद्भ्याम्	समिद्भिः
(४)	समिधे	,,	समिद्भ्यः
(५)	समिधः	,,	,,
(६)	,,	समिधोः	समिधाम्
(७)	समिधि	,,	समित्सु

इस प्रकार 'सरित्, हरित्, भूभृत्, शरद्, तमोनुद्, बेभिद्, क्षुद्, चेच्छिद्, युयुध्, गुप्, ककुभ्, अग्निमथ्, चित्रलिख्, सर्वशक्' ये शब्द चलते हैं। इनके पुल्लिंग स्त्रीलिंगके रूप समान होते हैं। उक्त

शब्दों में 'सरित्, शरद्, क्षुध्, ककुभ्' ये शब्द स्त्रीलिंगी हैं। इनके थोड़े से रूप नीचे देते हैं । जिनको देखकर पाठक अन्य रूप बना सकेंगे :—

प्रथमा एकवचन	तृतीया एकवचन	तृतीया द्विवचन	सप्तमी बहुवचन
सरित्	सरिता	सरिद्भ्याम्	सरित्सु
शरद्	शरदा	शरद्भ्याम्	शरत्सु
क्षुध्	क्षुधा	क्षुद्भ्याम्	क्षुत्सु
ककुभ्	ककुभा	ककुब्भ्याम्	ककुप्सु
हरित्	हरिता	हरिद्भ्याम्	हरित्सु
भूभृत्	भूभृता	भूभृद्भ्याम्	भूभृत्सु
तमोनुद्	तमोनुदा	तमोनुद्भ्याम्	तमोनुत्सु
बेभिद्	बेभिदा	बेभिद्भ्याम्	बेभित्सु
चेच्छिद्	चेच्छिदा	चेच्छिद्भ्याम्	चेच्छित्सु
युयुत्	युयुधा	युयुद्भ्याम्	युयुत्सु
गुप्	गुपा	गुब्भ्याम्	गुप्सु
चित्रलिख्	चित्रलिखा	चित्रलिग्भ्याम्	चित्रलिक्षु
सर्वशक्	सर्वशका	सर्वशग्भ्याम्	सर्वशक्षु

पाठकों को चाहिये कि वे इनके अन्य विभक्तियों के रूप बनाकर लिखें और उनको 'संमिध्' के रूपों के साथ तुलना करके देखें कि ठीक हुवे हैं या नहीं।

शब्द—पुल्लिंगी

श्यालः—साला

पाटच्चर:—चोर

धीवर:—मच्छी मारने वाला

भावमिश्रः—सज्जन, सभ्य मनुष्य

आगमः—प्राप्ति, वेद

अवसरः—समय

गृध्रः—गीध

मुहूर्त्तः—दो घडी

आपणः—दुकान, बाजार

भावः—सज्जन

नागरिकः—पुलीस का अफसर

प्रतिग्रहः—दान

आजीवः—जीविका, धंदा,

उद्दालः—हूक, मच्छी पकडने का कांटा

आवुत्तः—साला, बहिनका पति

शौंडिकः—शराब-मद्य-बेचने वाला, कलाल

साक्षिन्—गवाही

राजन्—राजा

गंडभेदकः—जेब चोर, गठ्ठी चोर

स्त्रीलिंगी।

कादंबरी—शराब, सरस्वती,

अनुकंपा—कृपा, दया

जातिः—कौम

नपुंसकलिंगी।

अंगुलीयकं—अंगुठी

शासनं—दण्ड, राज्य चलाना

सुमनस्—फूल, पुष्प, अच्छे मन वाला

मरणं—मृत्यु

जालं—जाला

मद्यं—शराब

विशेषण ।

इतोमुख—इदर मुंह करके	प्रकृतिगंभीर—स्वभाव से गंभीर
पर्युत्सुक—उत्कंठित, चितायुक्त	राजकीय—राजसंबंधी
अप्रमत्त—उन्मत्त न हुवा हुवा होश पर रहा हुवा	ईदृश—ऐसा, इस प्रकार
	शोभन—अच्छा
उपपन्न—ठीक प्रतीत हुवा	भासुर—चमकीला, तेजस्वी
कल्पित—माना हुवा	विशुद्ध—पवित्र
उपसर्पणीय—पास होने योग्य	समासादित—प्राप्त किया

क्रिया ।

मारयत—मारीये	कलयित्वा—मानकर
ताडयित्वा—ठोक-मार-कर	पिनद्धम्—बांधने के लिये
प्रस्फुरतः—स्फुरण होते है (दो)	प्रतीक्ष्य—देखकर
भावयितु—बताने के लिये	भणसि—बोलता है (तूं)
भणति—बोलता है (वह)	प्रतिबध्य—रुकावट कर
मुंचत—छोडीये	प्रणम्य—नमन करके
निर्दिशति—अंगुलीसे बताता है	

अन्य

मुहूर्तम्—थोडी देर	साक्षिकं—गवाही में रखकर

(२४) अंगुलीयकः प्राप्तिः

(ततः प्रविशति नागरिकः श्यालः—
पश्चाद् बद्धपुरुषमादाय रक्षिणौ च)

(१) रक्षिणौ—(ताडयित्वा) अरे कुंभीरक*, कथय कुत्र त्वया एतद् राजकीयं अंगुलीयकं समासादितम् । (२) पुरुषः—(भीति-नाटितकेन) प्रसीदन्तु भावमिश्राः । अहं न ईदृशकर्मकारी ! (३) प्रथमः—किं शोभनो ब्राह्मण इति कलयित्वा राज्ञा प्रतिग्रहो दत्तः । (४) पुरुषः—श्रृणुत

(ततः प्रवि०........रक्षिणौ च) नंतर प्रवेश करता है राजश्यालक थानेदार और पीछे से हाथकड़ियां डाले हुए एक पुरुष को लेकर दो पुलीस ।

(१) (कुंभीरक)—यह उस पुरुष का नाम है । (२) (भीति नाटितकेन)—डरने का भाव बताकर । (प्रसीदन्तु भावमिश्राः) आप सज्जन कृपा कीजिये । (ईदृश कर्मकारी) ऐसा कर्म करने वाला । (३) (किं शोभनो........दत्तः)—क्या उत्तम ब्राह्मण ऐसा समझ कर (तुम्हें) राजा ने दान दिया । (४) (शक्रावताराभ्यंतर

* कुंभीरक यह धीवर का नाम है । सूचक, जानक ये दो पोलिसों के नाम है । नागरिक यह थानेदार के समान पोलिस अफसर का ओहदा है जो एक शहर के ऊपर हुकुमत करता है .

इदानीम् । अहं शक्रावताराभ्यंतरवासी धीवरः ।

(५) द्वितीयः—पाटच्चर ! किमस्माभिः जातिः पृष्टा ?

(६) श्यालः—सूचक, कथयतु सर्वमनुक्रमेण। मा एनं अंतरे प्रतिबंधय । (७) उभौ—यद् आवुत्त आज्ञापयति । कथय ।

(८) पुरुषः—अहं जालोद्गालादिभिः मत्स्य–बंधनोपायैः कुटुंब–भरणं करोमि । (९) श्यालः—विशुद्ध इदानीं आजीवः । (१०) पुरुषः—सहजं किल यद् विनिंदितं न खलु तत् कर्म विवर्जनीयम् । (११) श्यालः—ततस्ततः ।

(१२) पुरुषः—एकस्मिन् दिवसे खण्डशो[1] रोहित–मत्स्यो मया कल्पितः । यावत् तस्य उदराभ्यंतरे इदं रत्नभासुरं अंगुलीयकं

वासी)—शक्रावतार गांव का रहने वाला। (६) (कथयतु........ क्रमेण)—क्रम से सब कहने दो। (८) (अहं........करोमि)—मैं जाल और हुक आदि मच्छी पकडने के साधनों से कुटुंब का पोषण करता हूं। (१०) (सहजं........वर्जनीयं)—जन्म से उत्पन्न हुवा २ जो कुछ भी काम हो वह निंदनीय (होने पर भी) वह कार्य छोडना नहिं चाहिये।

(११) (ततः ततः)—बाद क्या हुवा ? (१२) (कस्मिन्........

---

१ खण्डशः+रोहित० ।

दृष्टम् । पश्चाद् अहं तस्य विक्रयाय दर्शयन् गृहीतो भावमिश्रैः । मारयत वा मुञ्चत वा । अयं अस्य आगमवृत्तान्तः । (१३) श्यालः—जानुक, विस्रगंधी गोधादी मत्स्यबन्ध एव निःसंशयम् । (१४) रक्षिणौ—तथा । गच्छ, अरे गण्ड-भेदक ।

(सर्वे परिक्रामन्ति)

(१५) श्यालः—सूचक, इमं गोपुरद्वारे अप्रमत्तौ प्रतिपालयतं । यावद् इदं अंगुलीयकं यथागमनं भर्तुर्निवेद्य ततः

कल्पितः)—एक दिन रोहित मच्छी के मैने टुकडे किये । (पश्चात् ....मिश्रैः) पश्चात् मैं उसके विक्रीके लिये बताता (था इतने में) आप सज्जनों ने मुझे पकडा । (१३) (विस्रगंधी)—जिसको मच्छी की बदबू आती है, (गोधादी) गोधा जानवर को खाने वाला (मत्स्यबंध) मच्छि पकडने वाला हि (निःसंशयं) निःसंदेह है । (१४) (सर्वे परिक्रामन्ति) सब (इदर उधर घूमते हैं) । (१५) (इमं........पालयतं)—इसको गोपुर के दरवाजे पर (तुम दोनों ने) ध्यान से रखना । (यावत्........निष्क्रामामि) जब (कि मैं) इस

---

२ भर्तुः+निवेद्य ।

शासनंप्रतीक्ष्य निष्क्रामामि। (१६) उभौ—प्रविशतु आवुत्तः स्वामिप्रसादाय।

(इति निष्क्रान्तः श्यालः)

(१७) प्रथमः—जानुक, चिरायते खलु आवुत्तः।

(१८) द्वितीयः—ननु, अवसरोपसर्पणीया राजानः।

(१९) प्रथमः—जानुक, प्रस्फुरतो[3] मम हस्तौ अस्य वधार्थं।

(इति पुरुषं निर्दिशति)

(२०) पुरुषः—नार्हति भावोऽकारणमारणं[4] भावयितुम्।

(२१) द्वितीयः—(विलोक्य) एष नौ स्वामी पत्रहस्तो[5] राज-

अंगुठी का आगमन वृत्तान्त राजा को निवेदन कर उनसे दण्ड के बाबद पूछ कर आता हूं। (१७) (चिरायते.........आवुत्तः) राजश्यालक को (वापस) आने के लिये देरी लगी! (१८) (अवसरोपसर्पणीयाः राजानः)—राजाओं के पास अवसर मिलने पर जाना होता है। (२०) (नार्हति.........भावयितुं)—योग्य नहि आप सज्जन को विना कारण मारने का भाव लाने के लिये। (२१) (एष.........दृश्यते)—यह हमारा स्वामी हाथ में पत्र लेता हुवा राजा से दंड

---

३ प्रस्फुरतः+मम। ४ भावः+अकारण। ५ पत्रहस्तः+राज०।

शासनं प्रतीक्ष्य इतोमुखो दृश्यते । गृध्रबलिर्भविष्यसि शुनो-मुखं वा द्रक्ष्यसि ।

(प्रविश्य)

(२२) श्यालः—मुच्यतां एष जालोपजीवी । उपपन्नः खलु अंगुलीयकस्य आगमः । (२३) सूचकः—यथा आवुत्तो भणाति । (२४) द्वितीयः—एष यमसदनं प्रविश्य प्रतिनिवृत्तः । (२५) पुरुषः—(श्यालं प्रणम्य) भर्तः ! अथ कीदृशो मे आजीवः । (२६) श्यालः—एष भर्त्रा अंगुलीयक-मूल्यसंमितः प्रसादो॒ऽपि दापितः ।

(इति पुरुषं प्रयच्छति)

(२७) पुरुषः—(सप्रणामं प्रतिगृह्य) भर्तः, अनुगृहीतो

ी आज्ञा लेकर इसी ओर आरहा है ऐसा दीखता है । (गृध्रबलिः विष्याति) या तो यह गीध की शिकार होगा अथवा कुत्ते का मुंह वेगा ।(२५) (भर्तः........आजीवः)—हे स्वामिन् ! अब मेरा गुजारा कैसे होगा । (२६) (एषः........दापितः)—यह राजा ने अंगुठी के मूल्य के बराबर प्रसाद भी दिया है । (२७)(अनुगृहीतो

---

६ प्रसादः+अपि

ऽस्मि । (२८) सूचकः—एष नामानुग्रहः । यत् शूलाद् अवतार्य हस्तिस्कंधे प्रतिष्ठापितः । (२९) जानुकः—आवुत्त, पारितोषिकं कथयति, तेन अंगुलीयकेन भर्तुः संमतेन भवितव्यम् इति। (३०) श्यालः—न तस्मिन् महार्हं रत्नं भर्तुर्बहुमतं इति तर्कयामि । तस्य दर्शनेन भर्तुरभिमतः जनः । प्रकृतिगंभीरोऽपि मुहूर्तं पर्युत्सुकमना आसीत ।

अभिज्ञानशाकुंतलम् ।

ऽस्मि)—मेरे पर बडी कृपा होगई । (२८)(एषः....प्रतिष्ठापितः)—इसका नाम है प्रसाद । जो कि शूल पर से (फांसी पर से) उतार कर हाथी पर बिठलाया । (२९) (तेन........इति)—वह अंगुठी राजा को प्यारी होगी (३०)(न........आसीत)—उसमें मूल्यवान रत्न है इसलिये उन[ko] प्यार होगई ऐसा मैं नहीं समझता । परन्तु उसके दर्शन से रा[जा] के प्रिय दोस्त (का स्मरण हुवा) स्वभावतः गंभीर होते हुवे कुछ देर तक बडा उत्सुक जैसा विदित हुवा ।

---

७ भर्तुः+बहु० । ८ भर्तुः+अभि० । ९ गंभीरः+अपि ॥

२८ अष्टाविंशः पाठः।

चकारान्तः स्त्रीलिंगो 'वाच्' शब्दः।

(१)	वाक्	वाचौ	वाचः
सं०	,,	,,	,,
(२)	वाचम्	,,	,,
(३)	वाचा	वाग्भ्याम्	वाग्भिः
(४)	वाचे	,,	वाग्भ्यः
(५)	वाचः	,,	,,
(६)	,,	वाचोः	वाचाम्
(७)	वाचि	,,	वाक्षु

इसी प्रकार 'स्रज्, दिश्, उष्णिह्, दृश्, त्विष्, प्रावृष्' इत्यादि शब्द चलते है। जिनके थोड़े रूप नीचे देते हैं :——

प्रथमा एक वचन	द्वितीया एक वचन	तृतीय द्विवचन	सप्तमी बहु वचन
स्रक्	स्रजम्	स्रग्भ्याम्	स्रक्षु
दिक्	दिशम्	दिग्भ्याम्	दिक्षु
उष्णिक्	उष्णिहम्	उष्णिग्भ्याम्	उष्णिक्षु
दृक्	दृशम्	दृग्भ्याम्	दृक्षु
त्विट्	त्विषम्	त्विड्भ्याम्	त्विट्सु
प्रावृट्	प्रावृषम्	प्रावृड्भ्याम्	प्रावृट्सु

इ० रूपों को देखकर अन्य रूप पाठको ने स्वयं बनाना चाहिये

ऋकारान्तः स्त्रीलिंगो 'मातृ' शब्दः ।

(१)	माता	मातरौ	मातरः
सं०	मातः, मातर्	,,	,,
(२)	मातरम्	,,	मातॄः
(३)	मात्रा	मातृभ्याम्	मातृभिः
(४)	मात्रे	,,	मातृभ्यः
(५)	मातुः	,,	,,
(६)	,,	मात्रोः	मातॄणाम्
(७)	मातरि	,,	मातृषु

इसी प्रकार 'दुहितृ, ननान्दृ, यातृ' ये शब्द चलते हैं ।

ऋकारान्तः स्त्रीलिंगः 'स्वसृ' शब्द ।

(१)	स्वसा	स्वसारौ	स्वसारः
सं०	स्वसः, स्वसर्	,,	,,
(२)	स्वसारम्	,,	स्वसॄः
(३)	स्वस्रा	स्वसृभ्याम्	स्वसृभिः

शेष रूप 'मातृ' शब्द के समान होते हैं। प्रथमा द्वितीया संबोधन के रूपों में 'स्वसृ' शब्द के सकार में अकार दीर्घ होता है, वैसा 'मातृ' शब्द के तकार में अकार दीर्घ नहीं होता इतना ही इन दोनों शब्दों भेद है ।

स्वसृ—स्वसा	स्वसारौ	स्वसारः
मातृ—माता	मातरौ	मातरः

इस प्रकार प्रथमा द्वितीया संबोधन के रूपों में भेद है। अन्य रूप समान हैं।

ओकारान्तः स्त्रीलिंगो 'द्यो' शब्दः।

(१)	द्यौः	द्यावौ	द्यावः
सं०	,,	,,	,,
(२)	द्याम	,,	द्याः
(३)	द्यवा	द्योभ्याम	द्योभिः
(४)	द्यवे	,,	द्योभ्यः
(५)	द्योः	,,	,,
(६)	,,	द्यवोः	द्यवाम
(७)	द्यवि	,,	द्योषु

इसी प्रकार 'गो' शब्द चलता है:—

(१)	गौः	गावौ	गावः
सं०	,,	,,	,,
(२)	गाम्	,,	गाः

शेष 'द्यो' शब्द के समान रूप होते हैं।

शब्द—पुल्लिंगी।

समरः—युद्ध	जातः—प्रसिद्ध, प्रिय
कुरुनाथः—दुर्योधन	गांडीविन्—अर्जुन

विक्रमः—पराक्रम
जैत्रः—विजयशालि
महिमन्—महत्व
दिवसनाथः—सूर्यः
किरीटिन्—अर्जुन
अनलः—अग्नि

स्त्रीलिंगी ।

प्रतीहारभूमि—देवडी
मति—बुद्धि
अबला—स्त्री, बलहीन
प्रतीहारी—द्वार रक्षक स्त्री

नपुंसकलिंगी ।

अंगण—आंगन, मकान के पास का खुला स्थान
प्रलपितं—बडबड, भक्बक्
मुग्धत्वं—मूढता
निदानं—कारण
अत्याहितं—दुर्दैव, बड़ा कष्ट

विशेषण ।

संभ्रांत—भ्रम युक्त
अमर्षित—क्रोधित
उद्दीपित—उत्तेजित
उत्तप्तः—क्रोधित
उद्विग्नः—शोक युक्त

क्रिया

याचते—(वह) मांगता है
उपसृत्य—पास जाकर
उपपादय—तैयार करो
रोदिति—रोती है
जयतु—विजय हो
प्रवेशय—अन्दर ले आ
प्रवेशयति—प्रवेश करता है ।

अन्य ।

मिथ्या—झूट
अप्रगल्भं—बाल बुद्धि, अप्रौढ
साशंकं—संशय युक्त
सास्रं—आंख में आंसु लाकर

[२५] अर्जुन-प्रतिज्ञातवधस्य जयद्रथस्य माता दुर्योधनमभयं[1] याचते ।

(प्रविश्य)

(१) प्रतीहारी—(सोद्वेगं उपसृत्य)-जयतु जयतु महाराजः । महाराज, एषा खलु जामातुः सिंधुराजस्य माता दुःशला च प्रतीहार-भूम्यां तिष्ठति । (२) दुर्योधनः—(स्वगतम्) किं जयद्रथ-माता दुःशला चेति । कच्चिदभिमन्यु-वधाऽमर्षितैः पाण्डुपुत्रैर्न[2] कच्चिद् अत्याहितं भवेत् । (प्रकाशं) गच्छ, प्रवेशय शीघ्रम् । (३) प्रतीहारी—यन्महाराज[3] आज्ञापयति । (इति निष्क्रान्ता)

(अर्जुनप्रति०........याचते) अर्जुन ने जिसके वध की प्रतिज्ञा की है उस जयद्रथ की माता दुर्योधन के पास अभय मांगती है ।

(सोद्वेगं उपसृत्य)-कष्ट से आगे होकर । (प्रतीहारभूम्यां तिष्ठति) देवडी पर है । (२) (कच्चित........भवेत्)-कदाचित् अभिमन्यु के मृत्यु से गुस्से चढे हुवे पांडवों ने कुछ बुरा भला

---

१ दुर्योधनं+अभयं । २ पुत्रैः+न । ३ यत्+महा० ।

(ततः प्रविशति संभ्रांता
जयद्रथमाता दुःशला च)

(४) उभे—(सास्रं दुर्योधनस्य पादयोः पततः) (५) माता—परित्रायतां परित्रायताम् कुरुनाथः । (६) दुःशला—(सोदिति) (७) राजा—(ससंभ्रमं उत्थाय)—अम्ब समाश्वासिहि । किमत्याहितम् । अपि कुशलं समराङ्गणेषु अप्रतिरथस्य जयद्रथस्य । (८) माता—जात, कुतः कुशलम् । (९) राजा—कथमिव[४] । (१०) माता—(साशंकम्) अद्य खलु पुत्रवधामर्षितोद्दीपितेन[५] गांडीविना अन

किया तो नहीं होगा ? (४) (पादयोः पततः)—दोनों पांव पर गिरते हैं। (७) (ससंभ्रमं उत्थाय)—गडबड से उठकर । (समरांगणेषु) युद्ध भूमी के ऊपर । (अप्रतिरथः) जिसके बराबर का कोई लढवय्या नहीं है ऐसा लढने वाला। (८) (कुतः कुशलं)—कहां से कुशल है। (१०) (अद्य........प्रतिज्ञातः)—आज निश्चय से पुत्र के मृत्यु के कारण गुस्से चढे हुवे अर्जुन ने सूर्य अस्त होने से पहिले उसका वध करने की प्रतिज्ञा की है।

---

४ कथं+इव । ५ वध+अमर्षित+उद्दीपितेन ।

स्तामिते दिवसनाथे तस्य वधः प्रतिज्ञातः। (११) राजा—(सस्मितं आत्मगतं) इदं तद् अश्रुकारणं अंबायाः दुःशलायाश्च। पुत्रशोकाद् उत्तप्तस्य किरीटिनः प्रलपितैः एवं अवस्था। अहो मुग्धत्वं अबलानाम्। (प्रकाशं) अंब, कृतं विषादेन। वत्से दुःशले, अलं अश्रुपातेन। कुतश्च अयं अस्य धनंजयस्य प्रभावो दुर्योधन-बाहु-रक्षितस्य महाराज-जयद्रथस्य विपत्तिं उत्पादयितुम्। (१२) माता—जात, यतो बंधुवधोद्दीपित-कोपानला वीरा अनपेक्षित-शरीराः परिक्रामन्ति। (१३) राजा—(सोपहासं) एवं एतत्। सर्वजन-प्रसिद्धं एव

---

(११) (इदं.........उत्पादयितुं)—यही आंसुओंका कारण है माता जी का तथा दुःशला जी का। पुत्र के शोक से गुस्से चढे हुए अर्जुनके बडबडाले से ऐसी अवस्था होगई। अरे स्त्रियों की मूर्खता है। (बाहर) माता जी! अब दुःख बस कीजिये। काकि दुःशले। अब आंसू डालने बस कीजिये। कहां है इस अर्जुन का सामर्थ्य जो कि दुर्योधन के बाहुओं से रक्षित हुवे हुवे महाराज जयद्रथ के लिये कष्ट देसके। (१२) (यतः.........क्रामन्ति)—कारण बंधु के मृत्यू से जिनके गुस्से की आग बढगई है ऐसे शूर पुरुष विशिष्ट शरीरों से युक्त होकर इदर उदर घूमते हैं। (१३) पांडवों का गुस्सा

---

६ यतः+बंधु।

अमर्षित्वं पांडवानाम्। (१४) माता—असमाप्त-प्रतिज्ञाभरस्य आत्मवधोऽस्य प्रतिज्ञातः। (१५) राजा—यदि एवं आनंद-स्थानेऽपि ते विषादः। ननु वक्तव्यं उत्सन्नः खलु सानुजो युधिष्ठिर इति। मातः शक्तिरस्ति धनंजयस्य वाऽन्यस्य कुरु-शतपरिवार-वर्धित-महिम्नो महाविक्रमस्य नामापि ग्रहितुं ते तनयस्य। (१६) भानुमती—आर्यपुत्र, यद्यप्येवं तथापि गुरुकृत-प्रतिज्ञा-भरो धनंजयो निदानं खलु शंकायाः।

सब दुनियां में प्रसिद्ध है। (१४) प्रतिज्ञा पूर्ण न होने पर अपने वध की उनो ने प्रतिज्ञा की है। (१५) अगर ऐसा है तो आनंद के स्थान में तुम दुःख करती हो। सचमुच कहिये कि बंधु सहित युधिष्ठिर उखडगया। माता जी! ताकद् है इस अर्जुन अथवा दूसरे किसी की भी (कि जो) सौ कौरवों की महिमा जिसने बढाई है ऐसे प्रतापशाली तुम्हारे लडके का नाम भी ले सके। (१६) (यद्यपि)—यद्यपि ऐसा है तथापि भयानक प्रतिज्ञा करने के कारण अर्जुन संशय के लिये तो कारण हुवा ही है।

---

७ स्थाने+अपि ८ स अनुजः+युधि०। ९ शक्तिः+अस्ति। १० वा+अन्य० ११ महिम्नः+महा०। १२ यदि+अपि+एवं। १३ भरः+धनंजयः+निदानं।

(१७) माता—जाते साधु कालोचितं त्वया मंत्रितम् ।

(१८) राजा—आः, मम अपि नाम दुर्योधनस्य शंकास्थानं पांडवाः । अपि भानुमति । विज्ञात-पाण्डव-प्रभावे त्वं अपि एवं आशंकसे । कः कोऽत्र भोः । जैत्रं मे रथं उपपादय यावद् अहमपि तस्य अप्रगल्भस्य मिथ्या-प्रतिज्ञा-वैलक्षण्य-संपादितं अशस्त्रपूतं मरणं उपदिशामि ।

(इति निष्क्रांताः सर्वे)

वेणीसंहारं

---

(१७) (साधु)—ठीक, समय के योग्य तुम ने सलाह दी ।

(१८) (मम)—मुझ दुर्योधन जैसे के मन में भी पांडवों के बावद शंका होगी ! हे भानुमति ! पांडवों का शौर्य जानने पर भी तुम इस प्रकार संशय करती है । कौन है यहां । मेरा जैत्र रथ झटपट ले आ । जबतक मैं उस मूर्ख (अर्जुन) को झूठी प्रतिज्ञा करने से प्राप्त हुवा हुवा शस्त्र से पवित्र न हुवा हुवा मरण समझा देता हूं । (यहां तात्पर्य यह है कि क्षत्रिय के लिये युद्ध में शस्त्रों से हुवा हुवा मृत्यु पवित्र समझा जाता है । अर्जुन की प्रतिज्ञा पुर्ण न होने से उसका जो मृत्यु होगा वह शस्त्रों से न होने के कारण अपवित्र होगा अर्थात बदनामी के लिये होगा ।

२९ एकोनत्रिंशः पाठः ।

ईकारान्तः स्त्रीलिंगो 'धी' शब्दः ।

(१)	धीः	धियौ	धियः
सं०	,,	,,	,,
(२)	धियम्	,,	,,
(३)	धिया	धीभ्याम्	धीभिः
(४)	धियै, धिये	,,	धीभ्यः
(५)	धियाः, धियः	,,	,,
(६)	,, ,,	धियोः	धियाम्, धीनाम्
(७)	धियाम्, धियि	,,	धीषु

इस प्रकार 'सुधी, दुर्धी, शुद्धधी, ह्री, श्री सुश्री, भी' इत्यादि शब्द चलते हैं। पाठकों को चाहिए कि वे धी शब्द के समान इन शब्दों के रूप बनाकर लिखें।

ऊकारान्त स्त्रीलिंगो 'भूः' शब्दः ।

(१)	भूः	भुवौ	भुवः
सं०	,,	,,	,,
(२)	भुवम्	,,	,,
(३)	भुवा	भूभ्याम्	भूभिः
(४)	भुवै, भुवे	,,	भूभ्यः
(५)	भुवाः, भुवः	,,	,,

(६)	,, ,,	भुवोः	भुवाम्, भूनाम्
(७)	भुवाम् भुवि	,,	भूषु

इस प्रकार 'सुभू, भ्रू, सुभ्रू' इत्यादि शब्द चलते हैं । पाठकों को चाहिये कि वे इन शब्दों के रूप बनाकर लिखें ।

वकारान्तः स्त्रीलिंगो 'दिव्' शब्दः ।

(१)	द्यौः	दिवौ	दिवः
सं०	,,	,,	,,
(२)	दिवम्	,,	,,
(३)	दिवा	द्युभ्याम्	द्युभिः
(४)	दिवे	,,	द्युभ्यः
(५)	दिवः	,,	,,
(६)	,,	दिवोः	दिवाम्
(७)	दिवि	,,	द्युषु

पाठकों ने इस शब्द के रूपों के साथ 'द्यो' शब्द के रूपों की तुलना करनी चाहिये । और दोनों का विशेष ध्यान में रखना चाहिए ।

सकारान्तः स्त्रीलिंगो 'भास्' शब्दः ।

(१)	भाः	भासौ	भासः
सं०	,,	,,	,,
(२)	भासम्	,,	,,

(३)	भासा	भाभ्याम्	भाभि
(४)	भासे	,,	भाभ्यः
(५)	भासः	,,	,,
(६)	,,	भासोः	भासाम्
(७)	भासि	,,	भास्सु

इस प्रकार सकारान्त स्त्रीलिंगी शब्द चलते हैं ॥

शब्द—पुल्लिंगी ।

वृत्तान्तः—हकीकत, इतिहास
आयासः—कष्ट
गुणः—गुण, सिफत
सोदरः—पुत्र
कल्लोलः—पानी की लहर
सुहृत्—मित्र
जनः—लोक, सज्जन
तरुः—वृक्ष
कुमारः—लडका
वैश्यः—व्यापारी, सेठ
श्वशुरः—सुसरा,
पोतः—किश्ती, नौका
समुद्रः—सागर
क्लेशः—कष्ट

सुतः—लडका
वारणः—हाथी
पुञ्जः—गोल,
गुल्मः—गुंज, जमाव
पल्लवः—पत्ते
कंठीरवः—हाथी
रवः—शब्द
महाग्रहः—मगर, नक्र
दंतावलः—हाथी
मर्कटः—बंदर
अवनिरुहः—वृक्ष
उदन्तः—वृत्तांत
निदेशः—हुकुम

स्त्रीलिंगी ।

अवनिः—भूमि
अटवी—जंगल
संपत्—दौलत, संपत्ति
मालिका—माला
ललना—स्त्री
वनिता—स्त्री
नंदिनी—पुत्रि, लडकी
नतांगी—कोमल स्त्री
गर्भिणी—गर्भवती
धात्री—दाया
तीर भूमिः—किनारा
प्रसववेदना—प्रसूतीके कष्ट
लता—बेल
चिरायुष्मत्ता—बहुत आयु से युक्त
सत्वसंपन्नता—बलिष्ठ होना

नपुंसकलिंगी ।

भूवलयं—भूमंडल
रामतीर्थं—राम नामक क्षेत्र
तालयवनं—द्वीपका नाम
आलयं—घर
वस्तु—पदार्थ
विलोकनं—देखना
काननं—वन
द्वीपं—चारों ओर पानी के बीच में जो देश होता है
प्रवहणं—नौका, किश्ती
पुष्पपुरं—पुष्पपुर शहर
अंभस्—पानी
फलकं—तक्ता, फट्टा
प्रच्छायं—घनी छांब
तलं—नीचे का स्थान

विशेषण ।

अपविद्ध—त्याग किया हुवा
धार्यमाण—धरा हुवा
विवश—परस्वाधीन
अलस—आलसी, सुस्त

स्थविर—बुड्ढा
धनाढ्य—पैसे वाला
रमणीय—प्यारा
भ्रांत—घूमा हुवा
उद्युक्त—उत्सुक, तैयार
प्रत्यागच्छन्—वापस होने वाला
उज्वलाकार—तेजस्वी
उद्वहन्—उठाने वाला
वृद्ध—बुड्ढा
भव—उत्पन्न हुआ हुआ
मनोहारी—सुंदर
व्यवहारी—व्यापार करने में कुशल

कल्पित—नियुक्त
परिवृत—घेरा हुवा
निमग्न—डूबा हुआ
अधिगत—प्राप्त
विचेतन—बेहोष, मूर्च्छित
शीतल—ठंडा
विजन—मनुष्य हीन
अनुचित—अयोग्य
वन्य—जंगली
समुत्पात्यमान—फैंका हुवा
परीक्ष्यमाण—निरीक्षण किया हुआ
इतर—अन्य

क्रिया।

अभाषत—बोला (वह)
अभाषि—बोला
अभिप्रतस्थे—चलपडा
अधिरुह्य—चढकर
अस्रुत—प्रसुत होगई
अन्विष्य—धुंडकर
अभाषिषि—(मैं) बोला
अनुनीय—मनवाकर

अगमम्—(मैं) आगया
अन्वेष्टुं—ढूंडने के लिये
अभावि—होगया
अनायि—लाया है
अदृश्यत—नजर में आया
निपात्य—फेंक कर
प्राद्रवत्—दौड गया
अतिष्ठं—ठहरा (मैं)

अमज्जत्—डूब गया | अनायि—गया
निवेद्य—कह कर

अन्य ।

पुरः—सामने | पृष्ठतः—पीछे से

(२६) अपविद्ध-बालकस्य वृत्तान्तः ।

(१) कदाचिद् वामदेव-शिष्यः सोमदेव शर्मा नाम कंचिद् एकं बालकं राज्ञः पुरो निक्षिप्य अभाषत । (२) "देव, रामतीर्थे स्नात्वा प्रत्यागच्छता मया काननाऽवनौ वनितया कयाऽपि धार्यमाणं एनं उज्ज्वलाकारं कुमारं विलोक्य सादरं अभाणि । (३) स्थविरे, का त्वम् । एतस्मिन् अटवीमध्ये बालकं उद्वहन्ती किमर्थं आयासेन भ्रमसि । (४) वृद्धया अपि अभाषि । मुनिवर, कालयवननाम्नि द्वीपे कालगुप्तो नाम धनाढ्यो वैश्यवरः कश्चिद् अस्ति । (५) तन्नंदिदीं नयनानंदकारिणीं सुवृत्तां नाम एतस्माद् द्वीपाद् आगतो मगधनाथ-मंत्रि-संभवो रत्नोद्भवो नाम रमणीयगुणालयो भ्रांतभूवलयो मनोहारी व्यवहारी उपगम्य

(१) (काननावनौ)—जंगल में । (३) (स्थविरे)—हे वृद्ध-स्त्रि । (५) (मगधनाथमंत्रि-संभव)—मगध राजा के मंत्रि का

१ कानन+अवनौ ।

सु-वस्तु-संपदा श्वशुरेण संमानितोऽभूत[2] । (६) कालक्रमेण नतांगी गर्भिणी जाता । ततः सोदर-विलोकन-कुतूहलेन रत्नोद्भवः कथंचित् श्वशुरं अनुनीय अनया सह प्रवहणं आरुह्य पुष्पपुरं अभिमतस्थे । (७) कल्लोल-मालिका[3]ऽभिहतः पोतः समुद्रां[4]ऽभसि अमज्जत् । गर्भभराऽलसां[5] तां ललनां धात्रीभावेन कलिता[6]ऽहं कराभ्यां उद्वहन्ती फलकं एकं अधिरुह्य तीरभूमिं अगमम् । (८) सुहृज्जन-परिवृतो रत्नोद्भवस्तत्र[7] निमग्नो वा केनोपायेन तीरमगमद्[8] वा न जानामि । क्लेशस्य परां काष्ठां अधिगता सुवृत्ता अस्मिन् अटवीमध्ये अद्य सुतं असूत । (९) प्रसव–वेदनया–विचेतना सा प्रच्छायशीतले तरुतले निवसति । विजने वने स्थातुं अशक्यतया जनपद–गामिनं अन्वेष्टुं उद्युक्तया मया विवशायाः तस्याः समीपे बालकं निक्षिप्य गन्तुं अनुचितं इति कुमारोऽपि अनायि इति ।

पुत्र ।(६) (रमणीयगुणालयः)–सद्गुणी ।(भ्रांतभूवलयः) जिसने पृथ्वी का चक्कर लगाया । (९)(प्रच्छायशीतले तरुतले)–घनदार

---

२ मानितः+अभूत । ३ मालिका+अभिहतः । ४ समुद्र+अंभसि । ५ भरा+अलसा । ६ कलिता+अहं । ७ उद्भवः+तत्र । ८ तीरं+अगमद् ।

(१०) तस्मिन् एव क्षणे वन्यो[६] वारणः कश्चिद् अदृश्यत । तं विलोक्य भीता सा बालकं निपात्य प्राद्रवत् । अहं समीप-लता-गुल्मं प्रविश्य परीक्ष्यमाणो अतिष्ठम् । (११) निपतितं बालकं पल्लव-कवलमिव आददाति गजपतौ कंठीरवो भीमरवो महाग्रहेण न्यपतत् । (१२) भयाकुलेन दंतावलेन झटिति वियति समुत्पात्यमानो बालको न्यपतत् । चिरायुष्मत्तया स च उन्नत-तरु-शाखा-समासीनेन वानरेण केनचित् पक्व-फल-बुद्ध्या परिगृह्य फलेतरतया विततस्कंध-मूले निक्षिप्तोऽभूत् । (१३) सोऽपि मर्कटः क्वचिद् अगात् । बालकेन सत्व-संपन्नतया सकल-क्लेश-सहेन अभावि । केसरिणा करिणं निहत्य कुत्रचिद् अगामि । (१४) लता-गृहात् निर्गतोऽहमपि तेजः पुञ्जं बालकं शनैः अवनिरुहाद् अवतार्य वनान्तरे वनितां अन्विष्य अविलोक्य एनं आनीय गुरवे निवेद्य तन्निदेशेन भवन्निकटं आनीतवान् अस्मि" इति । (१५) सर्वेषां सुहृदां एकदा एव अनुकूल-दैवाभावेन महदाश्चर्यं बिभ्राणो राजा रत्नोद्भवः

छांव वाले वृक्ष के नीचे । (११) (पल्लव-कवलं)—पत्तों का कौर ।

६ वन्यः+वारणः ।

कथं अभवद् इति चिंतयन् तन्नंदनं पुष्पोद्भवनामधेयं विधाय तदुदंतं 'व्याख्याय सुश्रुताय विषाद-संतोषौ अनुभवन् तद् अनुज--तनयं समर्पितवान् ।

दशकुमार-चरितम् ।

३० त्रिंशः पाठः ।

ऐकारान्तः स्त्रीलिंगो 'रै' शब्दः ।

(१)	राः	रायौ	रायः
सं०	,,	,,	,,
(२)	रायम्	,,	,,
(३)	राया	राभ्याम्	राभिः
(४)	राये	,,	राभ्यः
(५)	रायः	,,	,,
(६)	,,	रायोः	रायाम्
(७)	रायि	,,	रासु

पुल्लिंग में 'रै' शब्द इसी प्रकार चलता है। कोई भेद नहीं होता ॥

पकारान्त स्त्रीलिंगः 'अप्' शब्दः ।

'अप्' शब्द सदैव बहु वचन में ही चलता है। इस लिये इस के एक वचन द्विवचन के रूप नहीं होते हैं।

(१)	आपः	(२)	अपः
सं०	आपः	(३)	अद्भिः

(४)	अद्भ्यः	(६)	अपाम्
(५)	,,	(७)	अप्सु

आकारान्तः स्त्रीलिंगो 'जरा' शब्दः ।

प्रथमा सम्बोधन के एक वचन में तथा 'भ्यां, भिः, सु' प्रत्यय आगे आने पर 'जरा' शब्द में कोई भेद नहीं होता है। परन्तु अन्य वचनो में 'जरा' शब्द के लिये 'जरस्' ऐसा आदेश विकल्प से होता है ॥

(१)	जरा	जरे	जरसौ	जराः,	जरसः
सं०	जरे	,,	,,	,,	,,
(२)	जराम्, जरसम्	,,	,,	,,	,,
(३)	जरया, जरसा	जराभ्याम्		जराभिः	
(४)	जरायै, जरसे	,,		जराभ्यः	
(५)	जरायाः, जरसः	,,		,,	
(६)	,, ,,	जरयोः,	जरसोः	जराणाम्,	जरसाम्
(७)	जरायाम्, जरसि	,,	,,	जरासु	

'जरा' शब्द 'विद्या' के समानहि चलता है परन्तु जिस समय उस के स्थान में 'जरस्' अदेश होता है, उस समय वह सकारान्त शब्द के समान रूप बनता है।

'अजर, निर्जर' शब्द पुल्लिग में होने से वे 'देव' शब्द के समान चलते हैं। परन्तु उक्त विभक्तियों के वचन में उन को भी 'अजरस, निर्जरस्' ऐसे आदेश होते है। अर्थात् इन के

भी 'जरा' शब्द के समान दो दो रूप बनते है। जैसाः—

(३) निर्जरसा, निर्जरेण।

(३) अजरसा, अजरेण।

इतर विभक्तियों के वचन पाठक स्वयं बनायेंगे।

शब्द—पुल्लिंगी।

समर—युद्धः

आलोकः—दृश्य

सप्रहारः—आघात युक्त।

परिकरः—वस्त्र, कपड़ा

समूहः—मिलाव, भीड़

सन्नाहः—लोहे का कोट, युद्ध की तैयारी

वंशः—बांस

केतुः—झंडा

स्त्रीलिंगी।

अक्षौहिणी—प्रायः दो लाख सैनिकों का पथक

श्लाघा—स्तुति

विशेषण।

लून—टूटा हुआ

घन—घना

पर्याकुल—दुःखी

नपुंसकलिंगी।

कंकपत्रं—बाणों के पीछे जो पर लगे होते हैं।

भागधेयं—दैव

शल्यं—बाण, भाला

क्रिया ।

विचेष्यामि—ढूंढूंगा	अविचित्य—ढूंढकर
उपालप्स्ये—निंदा करूंगा	उपलक्ष्य—ध्यान देकर
अनुम्रीयते—मरती है	तर्कयामि—जानता हूं

(२७) समरालोकः ।

(ततः प्रविशति सप्रहारः पुरुषः ।)

(१) पुरुषः—आर्याः । अपि नाम अस्मिन् उद्देशे सारथि-द्वितीयः दृष्टः युष्माभिः महाराज-दुर्योधनो न [1]वेति । कथं न कोऽपि मंत्रयते । भवतु । बद्धपरिकराणां पुरुषाणां समूहः दृश्यते । तत्र गत्वा प्रक्ष्यामि । (२) कथं एते खलु स्वस्वामिनः गाढप्रहारस्य घनसन्नाहजाल-दुर्भेद्यमुखैः कंकपत्रै हृदयात् शल्यानि उद्धरान्ति । तत् खलु एते न जानान्ति ।

(१) (अस्मिन् उद्देशे)—इस ओर। (सारथि-द्वितीयः) जिसके साथ एक सारथि है। (कथं न कोपि मंत्रयते) कोई भी क्यों उत्तर नहीं देता है। (बद्ध परिकराणां) जिन्होंने अपने चोगे बांधे हैं। (२) (गाढ प्रहारस्य)—जिस पर बहुत मार हुवी है। (घन-सन्नाह-जालदुर्भेद्य-मुखैः) लोहे के कोट के घने जाल के

१ वा+इति । २ तत्+न+पतिऽपि ।

भवतु । अन्यतः विचेष्यामि । (३) (अन्यतो विचित्य) इमे खलु अपरे प्रभूततराः संकलिता वीरमानुषाः । तदत्र गत्वा प्रक्ष्यामि । (उपगम्य) हं हो ! जानीथ कस्मिन् उद्देशे कुरु-नाथो वर्तते इति । कथमेतेऽपि मां दृष्ट्वा अधिकतरं रुदन्ति । तन्नैते[२]ऽपि जानन्ति । हा दुष्करं खलु अत्र वर्तते । (४) एषा वीरमाता समर-विनिहितं पुत्रकं श्रुत्वा रक्तांशुकानिवसनया समग्रभूषणया वध्वा सह अनुम्रियते । (सश्लाघं) साधु । अन्यस्मिन्नपि जन्मान्तरे अनिहतपुत्रका भविष्यसि । भवतु । अन्यतो विचेष्यामि । (अन्यतो विलोक्य) (५) अयमपरो बहुप्रहार-निहत कायोऽकृत प्रतीकार एव योधसमूहः इमं

कारण भेद करने के लिये जिनके मुंह कठिन हुवे हैं। (शल्यान् उद्धरान्ति) (शरीर में घुसे हुवे) कांटों को बाहर निकालते हैं ।

(अन्यतो विचेष्यामि)—दूसरी ओर ढूंढूंगा । (३) (प्रभूततरा)-बहुत । (हंहो) अहो, अरे । (४) (एषा..........भविष्यसि)—यह वीर माता युद्ध में मरे हुवे पुत्र को सुनकर लाल कपड़े तथा सारे भूषण पहने हुए उसकी स्त्री के साथ मरती है । (स्तुती करके) वाह वीर माता वाह, दूसरे जन्म में न मरे हुवे पुत्र की माता होजाओगी । अर्थात तुम्हारे सामने पुत्र का मृत्यु नहीं होगा। (५) (बहु-प्रहार-निहतकायः)—बहुत मार पड़ने से जिसका (काय)

शून्यासनं तुरंगमं उपलभ्य रोदिति। (६) नूनं एषां अत्रैव स्वामि व्यापादितः। तन्न त्वेतेऽपि जानन्ति। भवतु। अन्यतो प्रक्ष्यामि। (सर्वतो विलोक्य) कथं सर्व एव अवस्थानुरूपं व्यसनमनुभवन् भागधेय-विमुखतया पर्याकुलो जनः (७) तत् किमत्र वा उपलप्स्ये। भवतु स्वयमेवात्र विचेष्यामि। (परि-क्रम्य) दैवमिदानीं उपालप्स्ये। अहो दैव! एकादशानां अक्षौहिणीनां नाथो, ज्येष्ठो भ्रातृशतस्य, भर्ता गांगेय-जयद्रथ-द्रोणांऽगराज-शल्य-कृप-कृतवर्माऽश्वत्थाम-प्रमुखस्य राजचक्रस्य, सकल-पृथिवी-मंडलैकनाथो महाराजदुर्योधनोऽपि अन्विष्यते। (८) न जाने कस्मिन्नुद्देशे स वर्तत इति। (विचिंत्य निश्वस्य

शरीर फूटा है। (अकृत-व्रण प्रतीकारः) जिनके व्रणों का प्रतिकार नहीं किया है। (शून्यासनं तुरंगमं) जिस के आसन पर कोई बैठा नहीं ऐसा घोड़ा। (व्यसनं) कष्ट। (भागधेय विमुखतया) दैव उलटा होने से। (७) एका दशानां........ अन्विष्यते) ग्यारह अक्षौहिणी सैन्य का मालिक, सौ भाइयों का बड़ा भाई, भीष्म-जयद्रथ आदि वीरों राजाओं का पोषक, संपूर्ण पृथ्वी का राजा महाराज दुर्योधन भी धूंडा जाता है। अर्थात् दुर्दैव से ऐसी अवस्था आती है कि इतना बड़ा आदमी भी धूंड धूंड कर मिलना मुष्कील होता है। (८) (लूनकेतुवंशः)

च)। अथवा किमत्र दैवमुपालभे। (अन्यतो विलोक्य) यथा अत्रैष लूनकेतुवंशो रथो दृश्यते तदहं तर्कयामि अवश्यमेतेन महाराजदुर्योधनस्य विश्रामोद्देशेन भवितव्यम्।

वेणी-संहारम्

जिस रथका झंडे का खम्बा टूटा है। (विश्रामोद्देश) विश्राम का स्थान॥

३१ एकत्रिंशः पाठः।

स्त्रीलिंगी नामों के रूप बनाने का प्रकार पूर्व पाठ तक समाप्त होगया। अब पाठक पुल्लिंगी, स्त्रीलिंगी तथा नपुंसकलिंगी नामों के सातों विभक्तियों के रूप बनाने में समर्थ होगये हैं। संस्कृत भाषा बोलने लिखने में इन्हीं रूपों की बड़ी भारी आवश्यकता होती है। इस लिये पाठकों को उचित है कि वे समय समय पर पूर्व बताये हुवे शब्दों को देखते रहें ताकि वे उनकी विशेषता को न भूलें।

अब पाठकों को बताना है कि, स्त्रीलिंगी सर्व नामों के रूप किस प्रकार होते हैं:—

आकारान्तः स्त्रीलिंगः 'सर्वा' शब्दः।

(१)	सर्वा	सर्वे	सर्वाः
सं०	सर्वे	,,	,,
(२)	सर्वाम्	,,	,,

(३)	सर्वया	सर्वाभ्याम्	सर्वाभिः
(४)	सर्वस्यै	,,	सर्वाभ्यः
(५)	सर्वस्याः	,,	,,
(६)	,,	सर्वयोः	सर्वासाम्
(७)	सर्वस्याम्	,,	सर्वासु

इसी प्रकार ‘पूर्वा, परा, अवरा, दक्षिणा, उत्तरा, अपरा, अधरा, नेमा’ इत्यादि सर्वनामों के रूप होते हैं।

‘प्रथमा, चरमा, द्वितया, त्रितया, अल्पा, अर्धा, कतिपया’ इत्यादि सर्वनाम स्त्रीलिंगी होते हुवे भी ‘विद्या’ के समान चलते हैं। इनके पुल्लिंगी रूप ‘देव’ के समान चलते हैं। ऐसा पाठ १६। १७ देखीये पृ० १६२ पर लिखा है यह पाठक भूले नहीं होंगे। अर्थात तीनों लिंगों में ये शब्द सर्वनाम होने पर भी तीनों लिंगों के नामों के समान रूप बनाते हैं।

‘द्वितीया, तृतीया’ इनके रूप दो दो प्रकार के होते हैं। जैसाः—

आकारान्तः स्त्रीलिंगो ‘द्वितीया’ शब्दः।

(१)	द्वितीया	द्वितीये	द्वितीयाः
सं०	द्वितीये	,,	,,
(२)	द्वितीयाम्	,,	,,
(३)	द्वितीयया	द्वितीयाभ्याम्	द्वितीयाभिः
(४)	द्वितीयस्यै, द्वितीयायै	,,	द्वितीयाभ्यः
(५)	द्वितीयस्याः, द्वितीयायाः	,,	,,

(६)	,,	,, द्वितीययोः	द्वितीयानाम्
(७)	द्वितीयस्याम्,द्वितीयायाम्	,,	द्वितीयासु

इसी प्रकार तृतीया शब्द चलता है।

स्त्रियाम् 'यद्' शब्द ।

(१)	या	ये	याः
(२)	याम्	,,	,,
(३)	यया	याभ्याम्	याभिः
(४)	यस्यै	,,	याभ्यः
(५)	यस्याः	,,	,,
(६)	,,	ययोः	यासाम्
(७)	यस्याम्	,,	यासु

इसी प्रकार 'अन्या, अन्यतरा, इतरा, कतरा, कतमा, त्वा' इत्यादि सर्वनामों के रूप होते हैं।

'अन्यतमा' शब्द के सर्वनाम होते हुवे भी विद्या के समान रूप बनते हैं, यह बात ध्यान में रखनी चाहिये।

शब्द—पुल्लिंगी

संहारः—नाश

बभ्रुः—एक यादव का नाम

अहन्—दिन

युवन्—जवान

विप्रलंभः—धोखा, छल

कलहः—टंटा, झगड़ा

मदः—नशा

मुसलभावः—मुसलपन

स्नेहः—मैत्री

उपहासः—मखौल, हंसी, ठट्ठा

क्रोधः—गुस्सा

पतंग—टिड्डी, दीवे पर उड़ने वाला प्राणी पतिंगा

वह्निः—आग	कुरुः—कुरुदेश
अंतकः—यम	योगः—(ध्यान) योग, हठयोग
लुब्धकः—शिकारी	

स्त्रीलिंगी

दिदृक्षा—देखने की इच्छा	द्वारका—द्वारका शहर
दया—कृपा	बंधुता—भाईपन
रथ्या—बाजार, रथ का मार्ग	तीर्थयात्रा—तीर्थों में घूमना
जिघांसा—हनन करने की इच्छा	युवती—स्त्री
यदृच्छा—दैव	देवी—देवता

नपुंसकलिंगी

पानं—पीना	संक्रमणं—गमन
प्रभासं—प्रभास तीर्थ	आयुधं—शस्त्र

विशेषण

अनुशप्तः—शाप दिया हुवा	घोर—भयानक
अमित—अगणित	कतिपय—कई एक
पुरोगम—अग्रेसर, आगे जाने वाला	प्रमत्त—उन्मत्त, पागल
आविष्ट—युक्त	धर्षित—बेइज्जती, जुल्म किया हुवा
निवृत्त—वापस हुवा हुवा	विषण्ण—दुःखित
शासत्—राज्य चलाने वाला	

अन्य

क्षिप्रं—शीघ्र

शीघ्रं—जलदी

क्रिया ।

निहत्य—हनन करके
अप्राक्षीत्—पूछा (उन्होंने)
व्यनशन्—नाश हुवे
अव्राजिषु—गये
आनैषुः—लाये
आभाषिषत—बोले
अभाक्षुः—सेवन किया
अशाप्सुः—शाप दिया
न्यवात्सुः—रहे
अग्रहीषुः—लिया
प्रमाथिषुः—मारा (उन्होंने)
आदिशत्—आज्ञा की
अवधार्य—जानकर

न्यरौत्सीत्—रोका
व्यस्राक्षीत्—छोड़ा
भूषयित्वा—कपड़े पहनकर
जनिष्यति—पैदा करेगी
जायेत—होगा
एत्य—आकर
समजनि—उत्पन्न हुवा
प्रत्यपादि—प्राप्त हुवा
अबोधिषत—जाना
अग्रसीत्—खाया
अश्रौषीत्—सुना
निवेद्य—कह
आस्थाय—बैठकर

(२८) जनमेजय-पृष्टो वैशंपायनो यादव संहारवृत्तान्तं कथयति ।

(१) केन अनुशप्ता यादवा अन्योन्यं निहत्य व्यनशन् इति जनमेजयो वैशम्पायनं अप्राक्षीत् । स चैवं अवादीत् । (२) युधिष्ठिरस्य शासतः षड्विंशे वर्षे कण्व-नारद-विश्वामित्रा[१] त्रयो मुनयः कृष्णादिदृक्षया द्वारकां अव्राजिषुः । यादवास्तान्[२] रथ्यासु परिभ्रमतो[३] दृष्ट्वा तदुपहास-कृत-मतयः कंचिद् युवानं स्त्रीमिव भूषयित्वा समीपं आनैषुः । (३) आभाषिषत च । इयं स्त्री पुत्रकामस्य बभ्रोः अमिततेजसः । ऋषयः साधु जानीत किं इयं जनिष्यति । तद्विप्रलंभ-धर्षितास्ते[४] मुनयः परं क्रोधं

---

(१) (अन्योन्यं निहत्य) एक दूसरे को मारकर । (२) (युधिष्ठिरस्य शासतः) युधिष्ठिर के राज्य शासन के । रथ्यासु परिभ्रमतो दृष्ट्वा) बजार में घूमते हुए देखकर । (तदुपहास—कृतमतयः) उनकी ठट्ठा करने की बुद्धि से । (३) (अमिततेजसः) बेशुमार तेज वाला । (तद्....इति) इस ठट्ठा से अपमानित हुए हुए वे मुनि बहुत क्रोध को प्राप्त

---

१ मित्राः+त्रयः । २ यादवाः+तान् । ३ भ्रमतः+दृष्ट्वा । ४ धर्षिताः+ते ।

अभाक्षुः अशाप्सुः च यादवकुल-विनाशकं घोरं मुसलं अस्य यूनोर्जायेत इति। (४) अथ निवृत्ते मुनिजने कतिपयैः अहोभिः कृष्णपुरोगमा यादवास्तीर्थयात्रायै प्रास्थिषत। प्रभासं एत्य च तत्रैव ते न्यवात्सुः। तेषां पानमदाविष्टानां महान् कलहः समजानि। (५) अन्योन्य-जिघांसया यद् यद् आयुधं ते अग्रहीषुस्तत तत् मुसलभावं प्रत्यपादि। तैर्मुशलैस्ते परस्परं प्रमाथिषुः। प्रमत्ता इव स्नेहं दयां बन्धुतां वा न किल अबोधिषत। अवधीत् पितरं पुत्रः पिता पुत्रं अघातयत्। (६) पतंगान् इव वह्निस्तान् तदा अन्तकः अग्रसीत्। पति-विना-कृतानां युवतीनां महान्तं आक्रोशं कृष्णो यदा अश्रौषीत तदा विषण्ण-मना दारुकं आदिक्षत्। (७) भद्र कुरून् गत्वा सर्वं इमं वृत्तान्तं पांडवेभ्यो निवेद्य क्षिप्रं च अर्जुनं आनय इति। पुनः प्रभासं प्रतिनिवृत्य स बलरामं दिवं गतं अद्राक्षीत। (८) आत्मनोऽपि

हुवे और उन्होंने शाप दिया। कि यादव कुल का संहार करने वाला मुसल इस जवान से उत्पन्न होगा।

(८) (आत्मनोऽपि""न्यरौत्सीत्) अपना भी जाने का समय आया है ऐसा जानकर योग लगाकर इन्द्रियों को रोका। दैव से शिकारी का बाण लग कर प्राणों को छोड़ा।

---

५ यूनः+जायेत। ६ यादवाः+तीर्थ०। ७ अग्रहीषुः+तान्।

संक्रमणकालोऽयं इति अवधार्य योगं आस्थाय इंद्रियाणि न्यरौत्सीत्। यदृच्छया च लुब्धक-शर-विद्धः प्राणान् व्यस्राक्षीत्।

३२ द्वात्रिंशः पाठः।

स्त्रियां 'किम्' शब्दः।

(१)	का	के	काः
(२)	काम्	,,	,,
(३)	कया	काभ्याम्	काभिः
(४)	कस्यै	,,	काभ्यः
(५)	कस्याः	,,	,,
(६)	,,	कयोः	कासाम्
(७)	कस्याम्	,,	कासु

स्त्रियाम् 'तद्' शब्दः।

(१)	सा	ते	ताः
(२)	ताम्	ते	ताः
(३)	तया	ताभ्याम्	ताभिः
(४)	तस्यै	,,	ताभ्यः
(५)	तस्याः	,,	,,
(६)	,,	तयोः	तासाम्
(७)	तस्याम्	,,	तासु

इसी प्रकार 'त्यद्' सर्वनाम के स्त्रीलिंग के रूप होते हैं।

(१)	त्या	त्ये	त्याः
(२)	त्याम्	त्ये	त्याः

इत्यादि 'तद्' शब्द के समान रूप होते हैं।

स्त्रियां 'एतद्' शब्दः।

(१)	एषा	एते	एताः
(२)	एताम्, एनाम्	एते, एने	एताः, एनाः
(३)	एतया, एनया	एताभ्याम्	एताभिः
(४)	एतस्यै	,,	एताभ्यः
(५)	एतस्याः	,,	,,
(६)	,,	एतयोः, एनयोः	एतासाम्
(७)	एतस्याम्	,, ,,	एतासु

शब्द—पुल्लिंगी।

सुहृत्—मित्र	मदनः—काम
अनलः—अग्नि	पिशाचः—भूत
अनिलः—वायु	मनोरथः—इच्छा

स्त्रीलिंगी।

विधवा—जिसका पति मरा हो ऐसी स्त्री	निष्ठुरता—कठोरत्व, जालिमपन
	दक्षिणा—दक्षिण दिशा

नपुंसकलिंगी।

परिदेवनं—शोक	दुष्कृतं—पाप
दाक्षिण्यं—दक्षता	प्रतिवचनं—उत्तर, जवाब
स्मितं—किंचित हास्य	वचनं—भाषण

विशेषण ।

हत—मरा हुवा
वञ्चित—ठगाया हुवा
दुर्विनीत—रूखा, गुस्ताख
शून्य—खाली
अपरिचित—नावाकिफ्
दग्ध—जला हुवा
आपतित—आपड़ा
उत्सन्न—विनष्ट, बरबाद
मुषित—चुराया हुवा
परिचित—घरेलू, वाकिफ
निर्घृण—निर्लज्ज, बेशर्म

क्रिया ।

प्रतिपालय—रक्षा करो
वह—उठाव, लेजाव,
याचे—मांगता हूं
उपैमि—पास होता हूं

अन्य ।

कृते—के लिये
ऋते—विना, सिवाय

(२१) कपिंजलस्य प्रियसुहृत्पुंडरीककृते परिदेवनम्।

(१) हा हतोऽस्मि । हा दग्धोऽस्मि । हाः किमिदं[1] आपतितम् । किं वृत्तम् । उत्सन्नोऽस्मि । दुरात्मन् मदनपिशाच पाप निर्घृण किमिदं अकृत्यं अनुष्ठितम् । (२) आः पापे

(१) (हा हतोऽस्मि) हाय जल गया हूं। (उत्सन्नोऽस्मि) बरबाद हो गया हूं। (किमिदं अकृत्यमनुष्ठितं) क्या यह करने अयोग्य कर छोड़ा है। (२) (दुर्विनीते महाश्वेते) हे क्रूर

१ किं+इदं+आपतितम् ।

दुष्कृतकारिणि दुर्विनीते महाश्वेते, किं अनेन ते अपकृतम् । आः पाप दुश्चरित चन्द्र चांडाल, कृतार्थोऽसि । इदानीं अपगत-दाक्षिण्य दक्षिणानिल–हतक, पूर्णास्ते[२] मनोरथाः । कृतं यत्कर्तव्यम् । वह इदानीं यथेष्टम् । (३) हा भगवन् श्वेतकेतो पुत्रवत्सल, न वेत्सि मुषितं आत्मानम् । हा धर्म, निष्परिग्रहो ऽसि । हा तपः, निराश्रयं आसि । हा सरस्वति, विधवाऽसि । (४) हा सत्य, अनाथमसि[३] । हा सुरलोक, शून्योऽसि । सखे,

---

माहाश्वेते । (कृतार्थोऽसि) धन्य हो । (अपगत–दाक्षिण्य दक्षिणानिल हतक) दक्षता से रहित दक्षिण दिशाके अधम वायो । (वह इदानीं यथेष्टं) बहते रहो अब अपनी इच्छानु-सार । (३) (न वेत्सि, मुषितमात्मानं) क्या नहीं जानते हो अपने आपको ठगाया हुवा ! (निष्परिग्रहोऽसि) असहाय हो । अर्थात् पुंडरीक मरने से अब तुम्हारी मदत करने वाला कोई नहीं रहा । इसी प्रकार आगे के वाक्यों में जानना चाहिए । (हा सरस्वति विधवासि) हे विद्यादेवी तूं अब विधवा हो गई हो । पुंडरीक मरने के पश्चात् तुम्हारा भोक्ता कोई भी रहा नहि इस प्रकार मृत्यु के पश्चात् के शोक के समय अत्युक्ती के भाषण, हुवा करते हि हैं । (४) (कथं........यासि) कैसा

---

२ पूर्णाः+ते । ३ अनाथं+असि ।

प्रतिपालय माम् । अहमपि भवन्तं अनुयास्यामि । न शक्नोमि भवन्तं विना क्षणमपि अवस्थातुं एकाकी । (५) कथं अपरिचित[४] इव, अदृष्टपूर्व[५] इव, अद्य मां एकपदे उत्सृज्य प्रयासि । कुतस्तवेयं[६] अतिनिष्ठुरता । कथय त्वदृते[७] क्व गच्छामि । कं याचे । कं शरणं उपैमि । (६) अन्धोऽस्मि संवृत्तः । शून्या मे दिशो जाताः । निरर्थकं जीवितम् । अप्रयोजनं तपः । निःसुखाश्च[८] लोकाः । केन सह परिभ्रमामि । कं आलपामि । केन वार्तां करोमि । (७) उत्तिष्ठ त्वम् । देहि मे प्रतिवचनम् । क्व तत्[९] ममोपरि, सुहृत्, प्रेम । क्व सा स्मितपूर्वाऽभिभाषिता च ।

कादंबरी ।

नावाकिफ जैसा, पहिले न देखा हुवा जैसा, आज मुझे एक पांव पर छोड़कर जाते हो । (त्वदृते) तेरे बिना । (कं शरणमुपैमि) किस की शरण जाऊं । (६) (अंधोऽस्मि संवृत्तः) मैं अंधा हो गया (अप्रयोजनं तपः) निष्कारण तप हुवा (निःसुखाश्च लोकाः) लोक सुख रहित हुए हैं । (केन वार्तां करोमि) किस के साथ बोलूं । (७) (क्व तन्ममोपरि प्रेम) कहां वह मेरे ऊपर का प्रेम । (क्व........ भाषिता) कहां वह हास्य पूर्वक भाषण ।

---

४ अपरिचितः+इव । ५ अदृष्टपूर्वः+इव । ६ कुतः+तव+इयं । ७ त्वत्+ऋते । ८ सुखाः+च । ९ तत्+ मम+उपरि ॥

३३ त्रयस्त्रिंशः पाठः ।

स्त्रियाम् 'इदम्' शब्दः ।

(१)	इयम्	इमे	इमाः
(२)	इमाम्, इनाम्	इमे, एने	इमाः, एनाः
(३)	अनया, एनया	आभ्याम्	आभिः
(४)	अस्यै	,,	आभ्यः
(५)	अस्याः	,,	,,
(६)	,,	अनयोः, एनयोः	आसाम्
(७)	अस्याम्	,, ,,	आसु

स्त्रियां 'अदस्' शब्दः ।

(१)	असौ	अमू	अमूः
(२)	अमुम्	,,	,,
(३)	अमुया	अमूभ्याम्	अमूभिः
(४)	अमुष्यै	,,	अमूभ्यः
(५)	अमुष्याः	,,	,,
(६)	,,	अमुयोः	अमूषाम्
(७)	अमुष्याम्	,,	अमूषु

'द्वि' शब्द स्त्रीलिंग में नपुंसकलिंगी 'द्वि' शब्द के समान ही चलता है । (देखिये पाठ २३ पृ० २२६) इसका द्विवचन में ही प्रयोग होता है ।

'त्रि' शब्द का बहुवचन में ही प्रयोग होता है । इसके स्त्रीलिंग के रूप नीचे दिये हैं :—

स्त्रियां 'त्रि' शब्दः ।

(१)	तिस्रः	(५)	तिसृभ्यः
(२)	तिस्रः	(६)	तिसृणाम्
(३)	तिसृभिः	(७)	तिसृषु
(४)	तिसृभ्यः		

(यहां 'तिसॄणाम्' ऐसा रूप नहीं होता है । स्मरण रहे)

स्त्रियाम् 'चतुर्' शब्दः ।

(१)	चतस्रः	(५)	चतसृभ्यः
(२)	,,	(६)	चतसृणाम्
(३)	चतसृभिः	(७)	चतसृषु
(४)	चतसृभ्यः		

(यहां 'सृ' दीर्घ नहीं होता है)

'विंशति' शब्द स्त्रीलिंगी है । इसके रूप 'रुचि' शब्द के समान होते हैं । प्रायः इसका प्रयोग एकवचन में ही हुआ करता है । परन्तु प्रकरणानुसार अन्य वचनों में भी होता है । जैसाः—

पुस्तकानां विंशतिः—— बीस किताबें

विंशतिः पुस्तकानि —— ,, ,,

पंडितानां (द्वे) विंशती ——-चालीस पंडित (दो बीस पंडित)

विद्यार्थिनां त्रयः विंशतयः—विद्यार्थियों के तीन बीस (६०विद्यार्थी)

इस प्रकार प्रकरण के अनुसार सब वचनों में प्रयोग हो सकता है।

'त्रिंशत्, चत्वारिंशत्, पञ्चाशत्' ये शब्द स्त्रीलिंगी हैं। इनके रूप 'सरित्' शब्द के समान होते हैं।

(देखिये पाठ २७ पृ० २६८)

'षष्ठि, सप्तति, अशीति, नवति' ये शब्द स्त्रीलिंगी हैं। इनके रूप 'रुचि' शब्द के समान होते हैं। (देखिये पाठ २७पृ०२६५)

'कोटि' शब्द का स्त्रीलिंग है। इसके रूप 'रुचि' शब्द के समान ही होते हैं।

'पंचन, षष्, सप्तन्, अष्टन्, नवन्, दशन्' इनके स्त्रीलिंगी रूप पुंलिंग के समान ही होते हैं। (पाठ १७ पृ० १७४ देखिये)

शब्द—पुंल्लिंगी

दोस्—हाथ	शिशुः—लड़का
दाशरथिः—रामचंद	चण्डीशः— } महादेव
संग्रामः—युद्ध	चंद्रमौलिः— } महादेव
प्रश्रयः—सन्मान, सभ्यता नम्रता	हरः— } महादेव
शिखामणिः—श्रेष्ठ, चोटी का जेवर	पुरवैरिन्— } महादेव
प्रणामः—नमस्कार	त्र्यक्षः— } महादेव
समुदाचार—सदाचारः	नाराचः—बाण
दर्पः—गर्व	प्रेतभर्तृ—यम
	अंजलिः—जोड़े हुवे दो हाथ

कुठारः—कुल्हाड़ा
कौशिकः—विश्वामित्र
पद्मासनः—ब्रह्मदेव
मौलिः—सिर, मुकुट, उच्च
भार्गवः—परशुराम
शिखंडकः—चोटी, बालों का गुच्छा
विलासः—खेल
विस्मयः—आश्चर्य
बाहुः—बाहु, भुजा
पोतः—लड़का
खद्योतः—जुगनु
समरः—युद्ध

नपुंसकलिंगी

अवतरणं—उतरना
काननं—अरण्य
वित्तं—धन
ब्रह्मन—ब्राह्मण
क्षत्रं—क्षत्रिय
चित्रं—विचित्र
डंबरं—ढोल
संगतं—मेल
कार्मुकं—, शरासनं—, कोदण्डं—, धनुष्यं— } धनुष्य
ज्ञानं—ज्ञान
पालनं—रक्षा
धामन्—घर

विशेषण

निमर्दक—तोड़ने वाला
कलंकित—धब्बा लगा हुआ
त्रैयक्ष—महादेव का
नारायणीय—नारायण का
गर्वित—अभिमानी
प्रचुर—बहुत
विदित—ज्ञात
रमणीय—मनोहर

स्वाधीन--अपने आधीन | दग्ध--जला हुवा
ब्राह्मं --ब्राह्मण संबंधी | चण्ड--प्रचंड
अलीक--असत्य | अभिलषित--इच्छित

स्त्रीलिंगी

तनुः--शरीर | वाग्वृत्तिः--बोलने का प्रकार
शिखा--चोटी | मनोवृत्ति--मन की अवस्था

क्रिया

ययाचे--प्रार्थना की | बध्वा--बांधकर
शातयामि--छीलता हूं | निधाय--डालकर, रखकर
प्रकुप्य--गुस्सा करके | शीतलयसि--ठंडा करते हो
प्रयुंजे--उपयोग करता हूं | विद्योतसे--प्रकाशते हो
गणयति--गिनता है | अवतरामः--उतरेंगे

अन्य

अतिमात्रं--बहुत | स्वस्ति--कल्याण, सुरक्षितता



(३०) भार्गवदाशरथ्योः संगतं संग्रामावतरणं च।

(ततः प्रविशतः राम—लक्ष्मणौ)

(१) लक्ष्मणः—आर्य किं पुनरिदं ब्रह्मक्षत्रवर्णात्मकं चित्रमिदं स्फुरति। (२) रामः—वत्स न विदितं ते। ननु अयं स भगवान् भार्गवो येन क्रौंचमहीधर-शिखरं विद्धं, छिन्नं च यस्य क्रीडाकुठारेण हैहयपतेः काननम्। (३) लक्ष्मणः—तर्हि विस्मयशीलो भगवान्। (४) रामः—विस्मयशीलानां शिखामणिः इति वक्तव्यम्।

(भार्गव.........अवतरणं च) परशुराम और रामचन्द्र इन का मिलना और युद्ध के लिये तैयार होना। (प्रविशतः) दोनों प्रवेश करते हैं। (१) (आर्य.........स्फुरति) हे श्रेष्ठ! क्या फिर यह ब्राह्मण तथा क्षत्रिय इन दो वर्णों से युक्त हुवा २ यह विचित्रसा चमकता है। (२) (वत्स.........काननं) लड़के, तुम्हें पता नहीं! सचमुच यह वही भगवान् परशुराम है जिसने क्रौंच पर्वत का शिखर छेदन किया और जिसके खेलने के कुहाडे से हैहयपती का वन छिन्नभिन्न होगया। (४) (विस्मय—शीलानां ....वक्तव्यं)—आश्चर्य कारकों का शिखामणि (अर्थात सब से

(उभौ परिक्रामतः)

(५) रामः—(अंजलिं बद्ध्वा) भगवन्, भृगु-कुल-शिरः-शिखंडक, एष सानुजस्य मे प्रश्रय-रमणीयःप्रणामः ।

(६) जामदग्न्यः—समरविजयी भूयाः । (७) रामः—भगवन्, भृगुकुल-मौलि-माणिक्य, अनुगृहीतोऽस्मि ।

(८) भार्गवः—(स्वगतं । सकरुणं) रामे चंद्राऽभिरामे विनयवति शिशौ किं प्रकुप्याऽतिमात्रम् । (विमृश्य सक्रोधं) हुं चापं चंद्रमौलेश्चपलमतिरसाविन्तुभंजं बभञ्ज ॥ (पुनः सानुक्रोशं) बाला वैधव्यदीनां जनकनृपसुता नार्हतियं

बडा आश्चर्य कारक ऐसा कहा।(५) (भृगुकुलशिरः शिखंडक)—भृगुकुल के शिर की चोटी अर्थात् भृगुकुल के सब मनुष्यों में सब से श्रेष्ठ। (सानुज.........प्रणाम): भाई के साथ मेरा यह नम्रता से रमणीय हुवा २ नमस्कार है। (अनुज) छोटा भाई (भूयाः) हो (माणिक्य) जेवर लाल (८) (स्वगतं सकरुणं)—अपने में दया से युक्त होकर (चंद्राभिरामे) चांद के समान रमणीय (विनयवति शिशौ) नम्रता युक्त ऐसे लडके (रामे) रामचंद्रमे (अतिमात्रं प्रकुप्य किं) बहुत गुस्सा करके क्या करना है । (विमृश्य सक्रोधं) सोच कर क्रोध के साथ। (हुं) हुंः (चंद्रमौलेः चापं) महादेव का धनुष्य

मदस्त्रात् । (पुनर्विचिन्त्य सामर्ष) आः शान्तो मे कुठारः कथमयमधुना रेणुकाकण्ठशत्रुः ॥ (प्रकाशं) दाशरथे, इयं असौ मे त्वयि समुदाचारानुसारिणी वाग्वृत्तिरेव । (६) रामः—(विहस्य) मनोवृत्तिस्तु कीदृशी ।
(१०) भार्गवः—चण्डीश-कार्मुक-विमर्दकयोः तव बाह्वोः दर्पं कठिनेन अनेन कुठारेण शातयामि । (११) रामः—भगवन्, निग्रहाऽनुग्रहयोः स्वाधीनोऽयं जनः । परं ते कोपबीजं ज्ञातुं इच्छामि । (१२) भार्गवः—अहो दर्पान्धता !

(असौ चपलमतिः) यह चंचल बुद्धि वाला (इक्षुदण्डं बभञ्ज) ईख के दण्डे के समान तोड दिया । (पुनः सानुक्रोशं) फिर सदयता से (जनक नृपसुता) राजा जनक की कन्या (इयं बाला) यह लड़की (मदस्त्रात्) मेरे अस्त्र से (वैधव्यदीक्षां) वैधव्य व्रत के लिये (न अर्हति) योग्य नहीं है । (पुनः विचिन्त्य सामर्ष) पुनः सोचकर क्रोध से । (आः) अरे (रेणुकाकण्ठशत्रुः) रेणुकाके कण्ठका शत्रु (अयं मे कुठारः) यह मेरा कुल्हाड़ा (कथं अधुना शान्तः) किस प्रकार अब शांत होगया। (दाशरथे......वृत्तिरेव) हे रामचंद्र ! यह मेरा तुझ में सदाचारानुसारिणी वाचाका प्रयोग है । (१०) (चण्डीश......शातयामि) महादेव का धनुष्य तोडने वाले तुम्हारे बाहुओं का गर्व इस कठिन कुल्हाढ़े से छीलता हूं। (११) (निग्रहा......ऽयंजनः) पकड़ने छोड़ने

ननु रे न भग्नं किं त्वया जगद्गुरुशरासनम्। (१३) रामः— भगवन्, अलीक-लोक-वार्तया निरपराधे मयि मुधा कोप-कलंकितोऽस्मि । (१४) भार्गवः—तत् किं स्वस्ति हर—कार्मुकाय । (१५) रामः—नहि नहि ।

(१६) भार्गवः—तत् कथं निरपराधोऽसि।

(१७) रामः—मया स्पृष्टं नवा स्पृष्टं
कार्मुकं पुरवैरिणः ।
भगवन् आत्मनैवेदं
अभज्यत करोमि किम् ॥

(१८) भार्गवः—आः कथं रे चंदनदिग्धं नाराचं निधाय

के लिये यह मनुष्य (मैं) आपके आधीन है। (१३) (अलीक...... कलंकितोऽस्मि) असत्य लोक वार्ता से मेरे जैसे निरपराधी पर क्रोध से व्यर्थ धब्बा लगा है । (१४) (तत्......कार्मुकाय) तो क्या महादेव का धनुष ठीकहि है ।

(१७) (मया स्पृष्टं नवा स्पृष्टं) मैंने स्पर्श किया न किया (पुरवैरिणः कार्मुकं) महादेव के धनुष्य को (भगवन् आत्मना एव) महाराज अपने आपहि (इदं अभज्यत) यह टूटा है (करोमि किम) करुं क्या ? (१८) (आःकथं......प्रवीरो भव)

हृदयं मे शीतलयासि । तद् अलं अनेन । (कुठारं उद्यम्य) हे राम, हरकार्मुकभंग-संजात-पातक । तव एष कठोरधारो निष्करुणः कुठारः कण्ठं विशतु । तत प्रवीरो भव ।

(१९) रामः—हारः कण्ठं विशतु यदि वा
तीक्ष्णधारः कुठारः ।
स्त्रीणां नेत्राण्यधिवसतु नः
कज्जलं वा जलं वा ॥
संपश्यामो ध्रुवमिह सुखं
प्रेतभर्तुर्मुखं वा ।
यद्वा तद्वा भवतु न वयं
ब्राह्मणेषु प्रवीराः ॥

और किस प्रकार चंदन से लिपटा हुवा बाण लगाकर मेरा हृदय शांत करना चाहते हो ? बस अब इस से (कुल्हाड़ा ऊपर करके) हे राम, महादेव के धनुष्य के भंग से बने हुवे पापी । (एष कठोर धारः निष्करुणः कुठारः) यह तीक्ष्ण धार वाला निर्दय परशु (तव कंठं विशतु) तुम्हारे गले में प्रवेश करे। (तत् प्रवीरो भव) इस लिये शूर बनो । (१९) (हारः कंठं विशतु) माला गले में प्रवेश करे । (यदि वा) अथवा (तीक्ष्णधारः कुठारः) तीक्ष्ण धारा वाला कुल्हाड़ा । (नः स्त्रीणां) हमारे स्त्रियों के

(२०) जामदग्न्यः—(सामर्ष) कथं मां प्रणतिपात्रं मुनिमात्रं मन्यसे । कथं क्षत्रियजाति-गर्वितो ब्राह्मणजातिं तृणाय मन्यसे । स एष जामदग्न्यः खलु अहं यैः क्षत्रकंठ-विगलदुष्णाऽसृजोंऽजलीन् समर्प्य पितॄंस्तोषयामास। तदलम् । (२१) रामः—हे भृगुतिलक, आत्मनो यशोवित्तं मुधा मा हारय। (२२) जामदग्न्यः—कथं रे हारयिष्यामि । (वि-

---

(नेत्राणि कज्जलं जलं वा अधिवसतु) नेत्रों में कज्जल अथवा जल रहे । काजल सौभाग का लक्षण है तथा जल रोने का लक्षण है । (इह ध्रुवं सुखं संपश्यामः) यहां अटल सुख देखें (वा प्रेतभर्तुः मुखं) अथवा यम का मुंह देखें । (यत् वा तद्वा भवतु) यह अथवा वह हो परन्तु (वयं ब्राह्मणेषु प्रवीराः न) हम ब्राह्मणों में हि शूर नहीं । इस प्रकार परशुराम का रामने अपमान करने के लिये भाषण किया (२०) (प्रणतिपात्रं) नम-स्कार योग्य (तृणाय मन्यसे) घांस के समान समझते हो ॥ (क्षत्रिय-कंठ-वि-गलद्-उष्ण-असृजः) क्षत्रियों के गले से चलने वाले गरम खून के (अंजलीन् समर्प्य) अंजलीयों का अर्पण करके (पितॄन् तोषयामास) पितरों को तृप्त किया (२१) (मुधा मा हारय) व्यर्थ न खो । (२२) (वाग्-डंबर-पंडितेषु) बड़ बड़ करने में प्रवीण (युष्मासु) ऐसे तुम्हारे लिये (प्रचुरा वाणीः) बहुत भाषण (किं नाम) किस लिये (प्रयुंजे) उपयोग

मृश्य) अथवा—

किं नाम वाग्डंबरपंडितेषु ।

युष्मासु वाणीः प्रचुरा प्रयुञ्जे ॥

बाणान् रिपु-प्राणहरान् मदीयान् ।

सर्वेऽपि यूयं सहिताः सहध्वम् ॥

(२३) रामः—ननु अहमेव सहिष्ये । (२४) भार्गवः—रे तव गुरुरपि कौशिको मन्नाराचभयात् पद्मासनं भगवंतं ब्राह्मीं तनुं ययाचे । (२५) रामः—कथं गुरुं अपि अधिक्षिपसि । तदतःपरं न सहिष्ये । (साटोपं) अये जामदग्न्य ! तत् कुलिश कठिनं कोदण्डं रामेण एव अनेन भग्नम् । भवतु तत् त्रैयक्षं वा नारायणीयम् वा । मम दोर्विलासः तन्न गणयति । (२६) जामदग्न्यः—(सहर्षं) साधु रे क्षत्रिय-पोत, यत् किल जा-

---

करूं । (रिपु—प्राणहरान्) शत्रु के प्राणों का हरण करने वाले (मदीयान् बाणान्) मेरे बाणों को (यूयं सर्वेऽपि सहिताः) तुम सब मिलकर (सहध्वं) सहन करो । (२४) (मन्नाराच—भयात्) मेरे बाणों के भय से (ब्राह्मीं तनुं) ब्राह्मण का शरीर (२५) (गुरुं अपि अधिक्षिपसि) गुरु की भी मान हानी करते हो । (साटोपं) अभिमान से । (कुलिश—कठिनं कोदण्डं) वज्र के समान सख्त धनुष्य । (मम दोः विलासः तत न गणयति) मेरे बाहुओं का खेल उसको नहीं गिनता है । (२६) (चण्डधाम्नः)

मदन्न्य-नाम्नः चण्डधाम्नः पुरतो खद्योत इव विद्योतसे ।
(२७) रामः—अलं अलं वाग्डंबरेण अनेन । क्रियतां यथाऽभिलषितम् । (२८) भार्गवः—यदि शक्तोऽसि तद् एहि । समरक्षमां क्षमां अवतरामः ।

(इति निष्क्रान्तौ)

प्रसन्नराघवम्

प्रचंड कीर्ति वाले (खद्योत इव विद्योतसे) जुगनु के समान चमकते हो ।

(२७) (अलं वाग्डंबरेण) बड़ बड़ बस करो (क्रियतां यथाभिलषितं) करो जैसी इच्छा हो । (२८) (समरक्षमां क्षमां अवतरामः) युद्ध सहन करने वाली भूमी पर उतरें ॥

---

३४ चतुस्त्रिंशः पाठः ।

संस्कृत भाषा के मुख्य मुख्य शब्द चलाने का ज्ञान अब पाठकों को होचुका है । अब विभक्तियों के रूपों को बनाने का प्रकार लिखते हैं । शब्दों को प्रत्यय लगकर विभक्तियों के रूप किस प्रकार बनते हैं इसका संक्षेप से विवरण अब करना है ।

अकारान्त पुल्लिंगी शब्द चलाने के लिये निम्न लिखित प्रत्यय होते हैं :—

अकारान्त पुल्लिंगी शब्दों के लिये
प्रत्यय

१ प्रथमा	:	औ	अः
संबोधन	०	,,	,,
२ द्वितीया	म्	,,	न्
३ तृतीया	इन	भ्याम्	ऐः
४ चतुर्थी	य	,,	भ्यः
५ पंचमी	त्	,,	,,
६ षष्ठी	स्य	योः	नाम्
७ सप्तमी	इ	,,	सु

उक्त प्रत्यय लगाकर अकारान्त पुल्लिंगी शब्दों के रूप किस प्रकार बनते हैं, देखिये :—

(१) प्रथमा

विक्रम+ः =विक्रमः

विक्रम+औ=विक्रमौ

विक्रम+अः=विक्रमाः

संबोधन

विक्रम+० =विक्रम

विक्रम+औ=विक्रमौ

विक्रम+अः=विक्रमाः

(२) द्वितीया

विक्रम+म् =विक्रमम्

विक्रम+औ=विक्रमौ

विक्रम+न् =विक्रमान्*

(३) तृतीया

विक्रम+इन =विक्रमेण

विक्रम+भ्याम् =विक्रमाभ्याम्*

विक्रम+ऐः =विक्रमैः

(४) चतुर्थी

विक्रम + य =विक्रमाय*

विक्रम+भ्याम्=विक्रमाभ्याम्*

विक्रम+भ्यः =विक्रमेभ्यः●

(५) पंचमी

विक्रम + त् =विक्रमात्*

विक्रम+भ्याम्=विक्रमाभ्याम्*

विक्रम +भ्यः =विक्रमेभ्यः●

(६) षष्ठी

विक्रम +स्य =विक्रमस्य

विक्रम+योः =विक्रमयोः

विक्रम+नाम् =विक्रमाणाम्*

(७) सप्तमी

विक्रम + इ =विक्रमे

विक्रम+योः =विक्रमयोः

विक्रम+सु =विक्रमेषु●

इस प्रकार सब अकारान्त पुल्लिंगी शब्दों के रूप होते हैं। नकार का णकार तृतीयैकवचन में तथा षष्ठी बहुवचन में नियम ३ के अनुकूल होता है (पाठ १ पृ० ३०, ३१ देखिये)।

सब अकारान्त पुल्लिंगी नाम इसी प्रकार चलते हैं।

* 'न्, भ्याम, य, त्, नाम,' यह प्रत्यय सामने आने से पूर्व अकार का 'आ' बनता है। तथा 'भ्यः, सु' ये प्रत्यय आगे आने से पूर्व अकार का 'ए' बनता है।

शब्द

अम्बा—माता

वनिता—स्त्री

तातः—पिता

दासजनः—सेवक

सख्यः—मित्र

अभिरत—प्रेम किया हुआ

एकाकिन्—अकेला

एकाकिनी—अकेली

युगं—युग, सहस्रों वर्षों का अवधि

सकृद्—एकवार	निधनं—मृत्यु
वत्सल—प्रेमी	कृच्छ्रं—कष्ट
अनुरक्त—प्रेमी	निबंधनं—संबंध
अपराद्धम्—अपराध किया	कौलीन—कुलीनता, बुरा काम
मंदभागिन्—दुर्भागी, अभागी	प्राणिमि—जिंदा रहता हूं
नृशंस—क्रूर	पूरय—पूर्णकर
इषत्—थोड़ा	आचक्ष्व—कह
आर्तः—दुःखित, कष्टी	आलप—बोल

(३१) महाश्वेता पुण्डरीकनिधनं अनुशोचति ।

(१) हा अंब, हा तात, हा सख्यः, हा नाथ, जीवित निबंधन, आचक्ष्व क मां एकाकिनीं अशरणां अकरुण विमुच्य यासि । पृच्छ तरलिकां त्वत्कृते मया याऽनुभूताऽवस्था[1] । युगसहस्रायमाणः कृच्छ्रेण नीतो दिवसः । प्रसीद । (२) सकृदपि आलप । दर्शय भक्तवत्सलताम् । ईषद् अपि

(निधनं अनुशोचति) मृत्यु के बाद रोति है । (१) (जीवित निबंधन) जीवन के आश्रय । (विमुच्य यासि) छोड़कर जाते हो । (मया.........अवस्था) मैंने तुम्हारे लिये जो अवस्था-हालत-अनुभव की । (युगसहस्रा......दिवसः) सहस्र युगों के समान कष्ट से दिन समाप्त किया । (२) (सकृद् अपि आलप)

१ या+अनुभूता+अवस्था ।

विलोकय । पूरय मे मनोरथम् । आर्ताऽस्मि । भक्ताऽस्मि । अनुरक्ताऽस्मि । अनाथाऽस्मि । बालाऽस्मि । अगतिकाऽस्मि । दुःखिताऽस्मि । अनन्यशरणाऽस्मि । (३) किमिति न करोषि दयाम् । कथय किमपराद्धम् । किंवा नाऽनुष्ठितं[२] मया । कस्यां वा नाऽऽज्ञायां[३] आदृतम् । कस्मिन् वा त्वदनुकूले[४] नाभिरतम् । येन कुपितोऽसि (४) दासजनं अकारणात् परित्यज्य व्रजन् न बिभेषि कौलीनात् । आः अहं अद्यापि प्राणिमि । हा, हता ऽस्मि मंदभागिनी । धिङ्[५] मां दुष्कृतकारिणीम् । यस्याःकृते तव इयं ईदृशी दशा वर्तते । (५) नास्ति मत्सदृशी नृशंस–हृदया, या एवं विधं भवन्तं उत्सृज्य गृहं गत-

एक बार तो बोल । (ईषद् अपि विलोकय) थोड़ा तो देख । (आर्ता अस्मि) मैं कष्टी हूं । (अगतिका अस्मि) निरुपाय हूं । (३) (कथय किमपराद्धं) कह क्या अपराध किया । (कस्यां वा न आज्ञायां आदृतं) किस आज्ञा में आदर नहीं किया । (४) (दास जनं......कौलीनात्) सेवकों को निष्कारण छोड़कर जाने में होने वाली बुराई से डरते नहीं हो । (धिक् मां दुष्कृतकारिणीं) धिक्कार है मुझे पाप करने वाली को ॥

(५) (नृशंस हृदया) क्रूर मन वाली । (किं मे गृहेण) क्या

२ न+अनुष्ठितं । ३ न+आज्ञायां । ४ त्वत्+अनुकूले+न अभिरतं । ५ धिक्+मां ॥

वती। किं मे गृहेण, किं अंबया, किं तातेन, किं बंधुभिः, किं परिजनेन। हाः कं उपयामि शरणम्। (६) मयि देव दर्शय दयाम्। विज्ञापयामि त्वाम्। कुरु कृपाम्। पाहि वनितां अनाथाम्। प्रयच्छत अस्य प्राणान्।

कादंबरी

मुझे घर में (किं अंवया) क्या माता से (मैंने करना है) (कं उपयामि शरणं) किस को जाऊं शरण। (६) (दर्शय दयां) दया बताव (पाहि वनितां अनाथां) रक्षा करो अनाथ स्त्री की। (प्रयच्छत) दीजिये॥

---

३५ पञ्चत्रिंशः पाठः।

आकारान्त स्त्रीलिंगी नामों के रूप बनाने के लिये प्रत्यय

१	०	इ	अः
सं०	इ	,, ...	,,
२	म	,, ...	,,
३	या	भ्याम	भिः
४	यै	,, ...	भ्यः
५	याः ...	,, ...	,,
६	,, ...	योः	नाम्
७	याम् ...	,, ...	सु

पूर्व पाठ में तथा इस पाठ में ☐ ऐसी चार लकीरें डाल कर किन् किन् विभक्तियों के प्रत्यय समान होते हैं, यह बताया है

'भ्याम्' प्रत्यय सब शब्दों के लिये एकसा ही रहता है। जैसा :—

देवता—देवताभ्याम्   दिव्—द्युभ्याम्

कवि—कविभ्याम्   राजन्—राजभ्याम्

विष्णु—विष्णुभ्याम्   पूषन्—पूषभ्याम्

पितृ—पितृभ्याम्   चंद्रमस्—चंद्रमोभ्याम्

राज्—राड्भ्याम्   लक्ष्मी—लक्ष्मीभ्याम्

इस प्रकार अन्य शब्दों के विषय में जानना चाहिये। अकारान्त पुलिंगी शब्दों का अन्तिम अकार इस प्रत्यय के आगे आने से दीर्घ होता है ऐसा पूर्व पाठ में कहा है। जैसा:—सूर्य—सूर्याभ्याम्।

'भ्यः' प्रत्यय भी (अकारान्त पुलिंगी शब्दों को छोड़कर) सब शब्दों के लिये समान आता है। जैसा :—

कृपा—कृपाभ्यः   स्त्री—स्त्रीभ्यः

भूभृत्—भूभृद्भ्यः   द्यो—द्युभ्यः

नदी—नदीभ्यः   गो—गोभ्यः

वधू—वधूभ्यः   वायु—वायुभ्यः

इस प्रत्यय के सामने होने से अकारान्त पुलिंग शब्दों के अंतिम अकार के स्थान पर 'ए' होता है। जैसा:—

कृष्णः—कृष्णेभ्यः।

'या, योः' ये प्रत्यय लगने से पूर्व आकारान्त स्त्रीलिंगी शब्दों के 'आ' का 'अ' होता है। जैसाः—

रमा—रमया, रमयोः
वनिता—वनितया, वनितयोः
निष्ठा—निष्ठया, निष्ठयोः
आज्ञा—आज्ञया, आज्ञयोः

शब्द—पुल्लिंगी।

आक्रन्दः—शोक, रोना
दशग्रीवः—रावण
आमयः—रोग
संश्रवः—वचन, सुनना
विषयः—देश
भारः—बोझ
धन्विन्—धनुष्य चलाने वाला
शरी—बाण मारने वाला
वनस्पति—वृक्ष, (छोटा या बड़ा)
हेतुः—कारण
खरः—गधा

स्त्रीलिंगी।

गिर्—बात
वरारोहा—सुंदर स्त्री
दारा—धर्मपत्नी
वैदेही—सीता
जिह्वा—जबान

नपुंसकलिंगी।

तुण्डं—तोंड
वासस्—कपड़ा
विमर्षणं—अत्याचार
चीरं—, वल्कलं— } वल्कल, वृक्षों के छिलके के कपड़े
वृन्तं—फल का आधार

विशेषण ।

अपहरन् — अपहार करने वाला	पुराण — पुराणा
आभा — समान	अनुतिष्ठन् — करनेवाला
ध्रुव — स्थिर	प्रसुप्त — सोया हुवा
शुभा — उत्तम, कल्याणकारी	यशस्विन् — यशवाला
धीर — शूर, धैर्यशाली	अनामय — निरोगता, तनदुरुस्ती
कुशलिन् — स्वस्थ, आराम	दर्शयन् — बतानेवाला

क्रिया ।

आह्वयते — आह्वान करता है	शायिष्यसे — सुलाये जाओगे
हर्तुं — हरण करने के लिये	व्याजहार — बोला
निरैक्षत — देखा	विसृज — छोड़
गर्हयेत् — निंदा होगी	परामृशेत् — अत्याचार करेगा
ददर्श — देखा	

अन्य ।

मुहूर्तं — घड़ीभर	सांप्रतं — अब

(३२) सीतामपहरन्तं रावणं जटायुर्युद्धाय आह्वयते ।

सीताक्रन्दं प्रसुप्तोऽसौ जटायुरथ शुश्रुवे ।
निरैक्षद् रावणं क्षिप्रं वैदेहीं च ददर्श सः ॥१॥
ततः पर्वतशृंगाभः तीक्ष्ण–तुण्डः खगोत्तमः ।
वनस्पतिगतः श्रीमान् व्याजहार शुभां गिरम् ॥२॥
दशग्रीव स्थितो धर्मे पुराणे सत्य–संश्रवः ।
भ्रातस्त्वं निंदितं कर्म कर्तुं नार्हसि सांप्रतम् ॥३॥

(सीतां......आह्वयते) सीता का हरण करने वाले रावण को जटायु युद्ध के लिये पुकारता है । (अथ) नंतर (असौ प्रसुप्तः जटायुः) इस सोये हुए जटायु ने (सीता क्रंदं) सीता का रोना (शुश्रुवे) सुना । (क्षिप्रं रावणं निरैक्षत्) तत्काल रावण को देखा (सः वैदेहीं च ददर्श) उस ने सीता को भी देखा ॥१॥ (ततः) नंतर (पर्वत शृंगाभः, तीक्ष्णतुंडः) पर्वत के शिखर के समान, तीखे मुंह वाला (वनस्पति गतः श्रीमान् खगोत्तमः) वृक्ष के बीच में रहने वाला श्रीयुत पक्षि श्रेष्ठ (शुभां गिरं व्याजहार) उत्तम भाषण बोला ॥२॥ हे (दशग्रीव) रावण (पुराणे धर्मे स्थितः) सनातन धर्म में रहने वाला (सत्य संश्रवः) सत्य प्रतिज्ञा करने वाला (त्वं) तू है (भ्रातः) भाई, (सांप्रतं निंदितं कर्म कर्तुं) अब निंदा के योग कर्म करने के लिये (न अर्हसि) योग्य नहीं हो ॥३॥ (गृध्राणां) गीधों का (राजा) राजा (महा-

जटायुर्नाम गृध्राणामस्मि राजा महाबलः ।
राजा सर्वस्य लोकस्य महेन्द्रवरुणोपमः ॥ ४ ॥
लोकानां च हिते युक्तो रामो दशरथात्मजः ।
तस्यैषा लोकनाथस्य धर्मपत्नी यशस्विनी ॥५॥
सीता नाम वरारोहा यां त्वं हर्तुमिहेच्छसि ।
कथं राजा स्थितो धर्मे परदारान् परामृशेत् ॥६॥
न तत् समाचरेद्धीरो यत्परोऽस्य विगर्हयेत् ।

बलः जटायुः नाम) बड़ा शक्तिमान् जटायु नामक मैं (अस्मि) हूं । (महेन्द्र वरुणोपमः) इन्द्र वरुण के समान (सर्वस्य लोकस्य राजा) लोकों का राजा ॥ ४ ॥ (च लोकानां हिते युक्तः) और लोकों के कल्याण में तत्पर (दशरथात्मजः रामः) दशरथ का पुत्र राम है । (तस्य लोकनाथस्य) उस राजा की (एष यशस्विनी धर्मपत्नी) यह यश वाली पत्नी है ॥५॥ (सीता नाम वरारोहा) सीता नामक सुंदर स्त्री है (यां त्वं इह हर्तुं इच्छसि) जिसको तुम यहां हरण करना चाहते हो । (धर्मे स्थितः राजा) धर्म में रहने वाला राजा (परदारान् कथं परामृशेत्) दूसरे के स्त्रि के साथ किस प्रकार अत्याचार कर सकता है ॥ ६ ॥ (धीरः तत् न समाचरेत्) शूर पुरुष ने वह नहीं करना चाहिये (परः यत् अस्य विगर्हयेत्) दूसरा मनुष्य जो इस का कार्य निंदेगा । (यथा आत्मनः) जैसी अपनी (तथा अन्येषां दाराः विमर्षणात् रक्ष्याः)

यथात्मनस्तथाऽन्येषां दारा रक्ष्या विमर्षणात् ॥७॥
अर्थं वा यदि वा कामं शिष्टाः शास्त्रेष्वनागतम् ।
व्यवस्यन्त्यनुराजानं धर्मं पौलस्त्यनन्दन ॥८॥
राजा धर्मस्य कामस्य द्रव्याणां चोत्तमो निधिः ।
धर्मः शुभं वा पापं वा राजमूलं प्रवर्तते ॥९॥
विषये वा पुरे वा ते यदा रामो महाबलः ।
नापराध्यति धर्मात्मा कथं तस्यापराध्यसि ॥१०॥

वैसी दूसरे की स्त्री अत्याचार से रक्षा करने योग्य है ॥७॥

हे (पौलस्त्यनन्दन) हे पुलस्तिके पुत्र ! (शास्त्रेषु आनगतं) शास्त्र ग्रंथों में न आये हुए (अर्थं वा यदि कामं) द्रव्य या काम के लिये (धर्म वा) धर्म के किये (शिष्टाः राजानं अनु व्यवस्यन्ति) शिष्टलोक राजा के अनुसार चलते हैं ॥८॥

(धर्मस्य, कामस्य द्रव्याणां च) धर्म काम और द्रव्य इनका (उत्तमः निधिः राजा) उत्तम खजाना राजा है । (धर्मः शुभं वा पापं वा) धर्म तथा पुण्य और पाप (राजमूलं प्रवर्तते) राजा से ही प्रवृत्त होता है ॥९॥

(महाबलः धर्मात्मा रामः) महाशक्तिमान् धर्मात्मा राम (ते पुरे वा विषये वा) तुम्हारे नगर में अथवा देश में (न अपराध्यति) अपराध नहीं करता है (तस्य कथं अपराध्यसि) उस का क्यों अपराध करते हो ॥ १० ॥

क्षिप्रं विसृज वैदेहीं मा त्वा घोरेण चक्षुषा ।

दहेद्दहनभूतेन वृत्रमिंद्राशनिर्यथा ॥११॥

सर्पमाशीविषं बध्वा वस्त्रान्ते नावबुध्यसे ।

ग्रीवायां प्रतिमुक्तं च कालपाशं न पश्यसि ॥१२॥

स भारः सौम्य भर्तव्यो यो नरं नावसादयेत् ।

तदन्नमपि भोक्तव्यं जीर्यते यदनामयम् ॥१३॥

यत्कृत्वा न भवेद्धर्मो न कीर्ति र्न यशो ध्रुवम् ।

(क्षिप्रं वैदेहीं विसृज) अभी सीता को छोड़ । वह (दहन भूतेन) अग्नि के समान (घोरेण चक्षुषा) भयानक आंख से (त्वा मा दहेत) तुझे न जलाये (यथा वृत्रं अशनिः) जिस प्रकार वृत्र (राक्षस) को (विद्युत् जलाती है) ॥११॥

(आशीविषं सर्पं) जालिम विष वाले सांप को (वस्त्रान्ते बध्वा) कपड़े के अंदर बांधकर (न अवबुध्यसे) जानते नहीं हो (च ग्रीवायां प्रतिमुक्तं कालपाशं न पश्यसि) और गले में पड़े हुवे यम के पाश को देखते नहीं हो ॥१२॥

हे (सौम्य) सज्जन ! (स भारः भर्तव्यः) वही बोझ उठाना चाहिये (यः नरं न अवसादयेत्) जो मनुष्य को नहीं गिरायगा । (अन्नं अपि तद् भोक्तव्यं) अन्न भी वही खाना चाहिये (यत् अनामयं जीर्यते) जो बीमारी न करता हुवा हजम होजाय ॥ १३ ॥

(यत् कृत्वा) जो करके (धर्मः न, कीर्तिः न, ध्रुवं यशः न

शरीरस्य भवेत्खेदः कस्तत्कर्म समाचरेत् ॥१४॥
षष्ठिवर्ष–सहस्राणि जातस्य मम रावण ।
पितृपैतामहं राज्यं यथावदनुतिष्ठतः ॥१५॥
वृद्धोऽहं त्वं युवा धन्वी सरथः कवची शरी ।
न चाप्यादाय कुशली वैदेहीं मे गमिष्यासि ॥१६॥
न शक्तस्त्वं बलाद्धर्तुं वैदेहीं मम पश्यतः ।
हेतुभिर्न्याय–संयुक्तै र्ध्रुवां वेदश्रुतीमिव ॥१७॥

भवेत्) धर्म, कीर्ति और स्थिर यश नहीं होता है और (शरीरस्य खेदः भवेत्) शरीर को कष्ट होता है (तत् कर्म कः समाचरेत्) वह काम कौन करेगा ॥ १४ ॥

हे रावण ! (मम जातस्य) मेरे पैदा हुवे हुवे (पितृपैतामहं राज्यं यथावद् अनुतिष्ठतः) बाप दादा का राज्य पहिले के समान चलाते हुवे (षष्ठिवर्ष सहस्राणि) साठ हजार वर्ष हुए ॥ १५ ॥

ऐसा (अहं वृद्धः) मैं बूढ़ा हूं । (त्वं युवा धन्वी सरथः कवची शरी) तूं जवान, धनुर्धर, रथयुक्त, कवचयुक्त, बाण मारने वाला है । परन्तु (मे) मेरी (वैदेहीं आदाय) सीता को लेकर (कुशली न गमिष्यसि) आराम से नहीं जाओगे ॥१६॥

(मम पश्यतः) मेरे देखते हुवे (वैदेहीं बलात् हर्तुं न शक्तः) सीता को बल से हरण करने के लिये समर्थ नहीं हो। जिस प्रकार न्यायसंयुक्तैः हेतुभिः) न्याय के तर्क जाल से (ध्रुवां वेदश्रुतीं इव) नित्य वेद श्रुती (हटायी नहीं जासकती) ॥ १७ ॥

युध्यस्व यदि शूरोऽसि मुहूर्तं तिष्ठ रावण ।
शायिष्यसे हतो भूमौ यथा पूर्वं खरस्तथा ॥१८॥
असकृत संयुगे येन निहता दैत्यदानवाः ।
न चिराच्चीरवासास्त्वां रामो युधि हनिष्यति ॥१९॥
अवश्यं तु मया कार्यं प्रियं तस्य महात्मनः ।
जीवितेनापि रामस्य तथा दशरथस्य च ॥२०॥
तिष्ठ तिष्ठ दशग्रीव मुहूर्तं पश्य रावण ।
वृन्तादिव फलं त्वां तु पातयेयं रथोत्तमात् ॥२१॥

रामायणम्

(यदि शूरः असि) अगर शूर हो तो (मुहूर्तं तिष्ठ) घड़ी भर ठहर। हे रावण (युध्यस्व) युद्ध कर। (यथा पूर्वं खरः) जिस प्रकार खर राक्षस पूर्व समय में (तथा भूमौ हतः शाययिष्यसे) उस प्रकार जमीन पर मरा हुवा तुमको सुलाया जायगा ॥ १८ ॥

(येन संयुगे दैत्य-दानवाः) जिसने युद्ध में राक्षस और दैत्य (असकृत् निहताः) अनेक वार मारे हैं। (चीरवासाः रामः) वल्कल पहनने वाला वह राम (युधि त्वां) युद्ध में तुमको (न चिरात्) बहुत देर से नहीं, शीघ्र ही (हनिष्यति) मारेगा ॥ १९ ॥

(तस्य महात्मनः) उस महात्मा (रामस्य तथा दशरथस्य च) राम और दशरथ का (जीवितेनापि अवश्यं प्रियं कार्यं) जीवन से भी जरूर प्रिय करना है ॥ २० ॥

हे दशग्रीव रावण! (मुहूर्तं तिष्ठ तिष्ठ) घड़ी भर ठहर २ (वृन्तात् फलं इव) जड़ से फल गिराने के समान (त्वां रथोत्तमात् पातयेयं) तुमको उत्तम रथ से गिराऊंगा ॥ २१ ॥

३६ षट्त्रिंशः पाठः ।

अकारान्त नपुंसकलिंगी नामों के लिये प्रत्यय ।

(१)	...	म्	... ...	इ	... ...	आनि
सं०	...	,,	... ...	,,	... ...	,,
(२)	...	,,	... ...	,,	... ...	,,

शेष विभक्तियों के प्रत्यय अकारान्त पुलिंगी शब्द के प्रत्ययों के समान हैं ।

धन + म् = धनम्

धन + इ = धने

धन + आनि—धनानि

अन्य रूप पुलिंगी नामों के समान होते हैं (पाठ ३४ पृष्ठ ३२५ देखीये)

शब्द—पुल्लिंगी ।

विग्रहः—युद्ध, लड़ाई

शुकः—तोता

सर्वतः—सब प्रकार से

संकीर्तयति—कहता है

संक्षेपः—सारांश

मंत्रयितुं—सला करने के लिये

मौहूर्तिकः—ज्योतिषी

उत्साहः—जोष, फुर्ती

आत्मोदयः—अपनी उन्नति

उत्कर्षः—उन्नति

अपकर्षः—अवनति

स्त्रीलिंगी।

प्रकृतिः—स्वभाव	परभूमिः—शत्रूका स्थान
श्रीः—धन दौलत	परज्यानिः—शत्रूका नाश, हानी
वार्ता—वृत्तान्त, हकीकत	व्यसनिता—आपत्ति
धीः—बुद्धि	यात्रा—चढाई, हमला, तीर्थयात्रा

नपुंसकलिंगी

कनकं—सुवर्ण, सोना	शुभलग्नं—उत्तम मुहूर्त
यात्राकरणं—चढाई करना	आह्वानं—युद्धके लिये ललकारना

विशेषण

आहूत—बुलाया हुवा	अवध्य—वध के अयोग्य
सुधी—बुद्धीमान	सांत्वयन्—शांत करने वाला
शिष्टः—बड़ा, सन्माननीय	उचित—योग्य
अतिक्रमणीय—उल्लंघन करने योग्य	अनुचित—अयोग्य
अनतिक्रमणीय—उल्लंघन करने अयोग्य	उदित—उदय हुवा हुवा, कहा हुवा
	आवेदित—कहा हुवा

क्रिया

निर्णीय—निश्चय करके	व्याचष्ट—बोला, कहा
अवस्थातुं—रहने के लिये	गलहस्तयति—गला पकडता है
प्रबोध्य—समझा कर	गलहस्तयसि—गला पडते हो।

(३३) विग्रहः ।

(१) ततः सभां कृत्वा आहूतः शुकः काकश्च । शुकः किंचिदुन्नतशिरो दत्तासन उपविश्य ब्रूते । भो हिरण्यगर्भ त्वां महाराजाधिराजः श्रीमच्चित्रवर्णः समाज्ञापयति । (२) यदि जीवितेन श्रिया वा प्रयोजनमस्ति तदा सत्वरं आगत्य, अस्मच्चरणौ प्रणम । नोचेद् अवस्थातुं स्थानान्तरं चिन्तय (३) राजा सकोपं आह । आः सभायां कोऽपि अस्माकं नास्ति य एनं गलहस्तयति । (४) उत्थाय मेघवर्णो ब्रूते—देव, आज्ञापय । हन्मि दुष्टं शुकम् । (५) सर्वज्ञो राजानं काकं च सांत्वयन् ब्रूते—श्रणु तावत् ।

(विग्रहः) युद्ध की तैयारी (१) (अहूतः शुकः काकः च) तोते और कौवे को बुलाया । (किंचिद् उन्नतशिराः) थोड़ा सा ऊपर सिर करके । (दत्तासनः) जिसको आशन दिया है । (चित्रवर्णः समाज्ञापयति) महा० चित्रवर्ण आज्ञा करता है । (२) (यदि ......प्रणाम) अगर जीवित और धनदौलत तुम चाहते हो तो शीघ्र आकर हमारे चरणों पर नमस्कार कर । (नोचे०...... चिन्तय) नहीं तो रहने के लिये दुसरा स्थान देख । (३) (य एनं गल हस्तयति) जो इस को गला पकड कर बाहर निकालेगा (४) (हन्मि दुष्टं शुकं) मैं दुष्ट तोते को मारता हूं । (५) (सर्वज्ञ... ......संकीर्तयति) सर्वज्ञ मन्त्री राजा को और कौवे को शांत करके बोला—सुनो तो सही । दूत सब प्रकार से अवध्य है । क्योंकि

दूतः सर्वतोऽवध्यः । यतो राजा दूत-मुखो विद्यते । दूतोक्तैः स्वापकर्षं परोत्कर्षं वा सुधीर्न मन्यते । अवध्यभावेन अकुतोभयो दूतः सर्वं संकीर्तयति । (६) ततो राजा काकश्च स्वां प्रकृतिं आपन्नौ । शुकोऽपि उत्थाय चलितः । पश्चात् चक्रवाकेण आनीय प्रबोध्य कनकालंकारादिकं दत्वा सम्प्राषतो ययौ । (७) शुको विंध्याचलं गत्वा राजानं प्रणतवान् । तमालोक्य चित्रवर्णो राजा आह । शुक, का वार्ता । कीदृशोऽसौ देशः । (८) शुको ब्रूते—देव, संक्षेपादियं वार्ता संप्रति युद्धोद्योगः क्रियताम् । देशश्चाऽसौ कर्पूरद्वीपः स्वर्गैकदेशः । कथं वर्णयितुं

राजा दूत मुख है (अर्थात् राजा का मुख दूत ही है)। दूत के कहने से अपना अपमान अथवा दूसरे का मान कोई समझदार समझता नहीं । वध होने का भय न रहने से सब प्रकार से निडर होकर दूत सब कुछ कहता है । (६) (स्वां प्रकृतिं आपन्नौ) अपनी होश पर आगये । (चक्रवाकेण आनीय प्रबोध्य) चक्रवाने ले आकार समझा कर (कनकालंकारादिकं दत्वा) सोने के गहने दे कर (संप्रषितः ययौ) अच्छी प्रकार वापस भेजा हुआ गया । (७) (राजानं प्रणतवान्) राजा को नमस्कार किया । (तं आलोक्य) उसे देखकर । (८) (देव......क्रियतां) हे राजा सारांश से यही कहना है कि अब जंग की तैयारी कीजिये । (कर्पूरद्वीपः स्वर्गैक देशः) कर्पूरद्वीप स्वर्गके एक हिस्से के समान

शक्यते। (९) ततः सर्वान् शिष्टान् आहूय राजा मंत्रयितुं उपविष्टः। आह च संप्रति कर्तव्यविग्रहे यथाकर्तव्यं उपदेशं ब्रूत। विग्रहः पुनरवश्यं कर्तव्यः। (१०) दूरदर्शी नाम गृध्रो ब्रूते—देव व्यसनितया विग्रहो न विधिः। राजाऽऽह। मम बलानि तावद् अवलोकयतु मंत्री, तदा एतेषां उपयोगो ज्ञायताम्। एवं आहूयतां मौहूर्तिकः। (११) निर्णीय शुभलग्नं कार्यार्थं ददातु। मंत्री ब्रूते—तथापि सहसा यात्रा—करणं अनुचितम्। राजा आह—मंत्रिन्, मम उत्साह—भंगं सहसा मा कृथाः। विजिगीषुः यथा परभूमिं आक्रमति तथा कथय। (१२) गृध्रो

है। (कथं वर्णयितुं शक्यते) किस प्रकार वर्णन किया जासकता है। (९) (मंत्रयितुं उपविष्टः) सलाह करने के लिये बैठ गया। (संप्रति......कर्तव्यः) अब युद्ध कर्तव्य (है इस में) जो कुछ करना चाहिए इसका उपदेश कीजिये। (१०) (व्यसनितया विग्रहः न विधिः) कष्ट के कारण युद्ध करना ऐसा विधि नहीं है। (मम बलानि) मेरी फौज। (आहूयतां मौहूर्तिकः) ज्योतिषी को बुलाइये। (११) (सहसा यात्रा करणं अनुचितं) एकदम चढ़ाई उचित नहीं। (मा कृथाः) न कीजिये। (विजिगी०......कथय) विजय की इच्छा करने वाला शत्रू की भूमी पर जिस प्रकार हमला करेगा वैसा कहिये। (राजाऽऽदेशः च अनति

ब्रूते—तत् कथयामि । किन्तु तदनुष्ठितमेव फलप्रदम् । राजाऽऽदेशश्चाऽनतिक्रमणीय इति यथाश्रुतं निवेदयामि । (१३) ततो मंत्री विग्रहपराणि कामन्दकीनीति—शास्त्र—वचनानि विस्तरतो व्याचष्ट । ततो राजाऽऽह-आः किं बहुनोदितेन । आत्मोदयः परज्यानिः इति द्वयाद् व्यतिरिक्तो न कश्चिन्नीति पदार्थोऽस्ति । (१४) मंत्रिणा विहस्य उक्तम्—सर्वं सत्यमेतत् । तत उत्थाय राजा मौहूर्तिकावेदित—लग्ने प्रस्थितः ॥

क्रमणीयः) राजा की आज्ञा उल्लंघन करने योग्य नहीं । (यथाश्रुतं) जिस प्रकार कहते हैं, जिस प्रकार शास्त्रों में कहा है । (१३) (ततः .... व्याचष्ट) नन्तर मन्त्री ने युद्ध के विषय में कामन्दक रचित नीति शास्त्र के वचन विस्तार से कहे । (किं बहुना उदितेन) क्या बहुत बोलने से । (आत्मो.... ऽस्ति) अपनी उन्नति और शत्रु का नाश इन दो के सिवाय अन्य कोई नीति शब्द का अर्थ नहीं । (१४) मौहूर्तिकावेदित लग्न प्रस्थितः) ज्योतिषीने कहे हुवे मुहूर्त पर चल पड़ा ॥

३७ सप्तत्रिंशः पाठः ।

इकारान्त तथा उकारान्त पुल्लिंगी शब्दों के लिये ।

प्रत्यय

१	०	+	अः
सं०	+	+	अः
२	म्	+	न
३	या	भ्याम्	भिः
४	यै	,, ...	भ्यः
५	: ...	,, ...	,,
६	: ...	ओः	नाम्
७	औ ...	,, ...	सु

प्रथमा का एक वचन—रविः, शंभुः ।

प्रथमा, संबोधन तथा द्वितीया के द्विवचन में कोई प्रत्यय नहीं है । परन्तु अन्तिम 'इ, उ' दीर्घ होते हैं—रवी, शंभू ।

प्रथमा और संबोधन के बहुवचन में तथा चतुर्थी के एक वचन में अन्तिम 'इ' के स्थान में 'अय्' तथा 'उ' के स्थान में 'अव्' होता हैः—रवयः, शंभवः । रवये, शंभवे ॥

संबोधन के एक वचन में अन्तिम इकार का 'ए' तथा उकार का 'ओ' होता है । रवे, शंभो ।

द्वितीया तथा षष्ठी के बहुवचन के समय अन्तिम 'इ, उ' दीर्घ होते हैं—रवीन् शंभून् । रवीनाम् । शंभूनाम ।

तृतीया में कोई फरक नहीं होता है—रविणा, शंभुना । रवि-भ्याम्, शंभुभ्याम् । रविभिः, शंभुभिः ।

चतुर्थी पंचमी के द्विवचन बहुवचन में कोई भेद नहीं होता है—रविभ्याम्, रविभ्यः । शंभुभ्याम्, शंभुभ्यः ।

पंचमी षष्ठी के एकवचन में अंतिम इकार के स्थान में 'ए' तथा उकार के स्थान में 'ओ' होता है—रवेः । शंभोः ।

षष्ठी सप्तमी के द्विवचन में इकार के स्थान पर 'य्' और उकार के स्थान पर 'व्' होता है —रव्योः । शंभ्वोः ।

सप्तमी एकवचन में अंतिम 'इ, उ' का लोप होता है—रवौ, शंभौ ।

सप्तमी बहुवचन में कोई भेद नहीं होता—रविषु, शंभुषु ।

इस प्रकार अन्यान्य शब्दों के प्रत्ययों के विषय में जानना चाहिए । रूपों को देखकर प्रत्ययों का ज्ञान हो सकता है ।

शब्द—पुल्लिंगी

अमात्यः—मंत्री,	विभवः—दौलत, संपत्ति
श्रेष्ठिन—व्यौपारी	व्याधिः—बीमारी
कृतान्तः—मृत्यु, यम	गृहजनः—स्त्री आदि, घर के लोग
निवापांजलिः—बीजमुष्टी, दान मृतकतर्पण	भंगः—टूटणा
निवापः—बीज, मृतक को पानी देना	शूलायतनाः—शूल पर चढाने वाले लोक
	एकदेशः—एक हिस्सा

प्रयासः—कष्ट
पादपः—वृक्ष
उपालंभः—मखौल
शूलः—शूल, फांसी देनेका खंबा

नपुंसकलिंगी ।

चारित्रं—धार्मिक जीवन
महाव्यसनं—बड़ा कष्ट
बाष्पं—आंसू
आयतनं—स्थान
अपथ्यं—रास्ते पर न चलना, नापसंद
सलिलं—जल
जलं—उदक

विशेषण ।

दीन—अनाथ
भीरु—डरपोक
समुद्वहमान—करने वाला
विषम—समान नहि, कष्टकारक असमान
गुर्वी—बड़ी

क्रिया ।

अपसरत, अपेत } दूर होजाइये
समाघ्राय—सूंघ कर
भेतव्यं—डरने योग्य
निवर्तस्व—वापस हो
समर्पयति—देता है, देगा
प्रतीथ—मानते हो
प्रेक्षध्वं—देखीये
भणितव्यं—कहने योग्य
भणथ—कहते हो
अनुकंपन्ते—दया करते हैं

अन्य

देशान्तरं—अन्य देश में | सबाष्पं—आंख में आंसु लाकर

(३४) अमात्यो राक्षसः आत्मनः परं मित्रं चन्दनदासं महाव्यसनान्मोचयति ।

(ततः प्रविशति चाण्डालः)

(१) चाण्डालः—अपसरत, अपसरत । अपेत अपेत । यदि प्राणान् विभवं कुलं कलत्रं च रक्षितव्यं तद् विषमं राजाऽपथ्यं सुदूरेण परिहरत । (२) अपि च । अपथ्ये सेविते व्याधिः मरणं वा पुरुषस्य भवति । राजाऽपथ्ये पुनः सेविते सकलं अपि कुलं म्रियते । (३) तद् यदि न प्रतीथ तद् अत्र प्रेक्षध्वम् एनं राजाऽपथ्यकारिणं श्रेष्ठिचंदनदासं

(अमात्यो........मोचयति) राक्षस नामक मंत्री अपने परममित्र चंदनदास को बड़ी तकलीफ से बचाता है । (१) (यदि ......परिहरत) अगर प्राण, धन, कुल, स्त्री आदि की रक्षा करनी हो तो कष्ट कारक राजा के विरोधी आचरण दूर से त्याग दीजिये । (२) (अपि च......भवति) अगर अवश्य-(खानपान में बेपरहेजी)-किइ तो मनुष्य को व्याधि या मरण होता है । (राजा......म्रियते राजा का विरोध करने से संपूर्ण कुल मर जाता है । (३) (एनं ......नीयमानं) राजा का नापसंद काम करने वाले इस सेठ

सपुत्रकलत्रं वधस्थानं नीयमानम् । (४) (आकाशे श्रुत्वा) आर्याः किं भणथ ! अस्ति अस्य कोऽपि मोक्षोपाय इति । आर्याः, अस्ति अमात्यराक्षसस्य गृहजनं यदि समर्पयाति । (५) (पुनराकाशे) किं भणथ । एष शरणागतवत्सल आत्मनो जीवितमात्रस्य कारणे ईदृशं अकार्यं न करिष्याति इति । आर्याः, तेन हि अवधारयत अस्य सुखां गतिम् । किमिदानीं युष्माकं अत्र प्रतीकार-विचारेण । (६) (ततः प्रविशति द्वितीयचांडालानुगतः वध्यवेषधारी शूलं स्कंधेन आदाय कुटुंबिन्या पुत्रेण च अनुगम्यमानः चन्दनदासः) ।

(७) **चन्दनदासः**—(सबाष्पम्) हा धिक् ! हा धिक् ! अस्मादृशानां आपि नित्यं चारित्र-भंग-भीरूणां चोरजनोचितं

चंदनदास को स्त्री पुत्र के साथ वधस्थान के पास लिया जाता है। (४) (मोक्षोपायः) छूटने का उपाय । (५) (एषः......न करिष्यति) यह शरण आये हुवों का रक्षा करने वाला केवल अपने जीवन के लिये इस प्रकार का कुकर्म नहीं करेगा । (तेन......गतिः) उस से जानीये इसकी संतोषकारक गति अर्थात् इसकी गति आनंद-कारक होगी ऐसा समझीये । (किं इदा०......विचारेण) क्या अब तुम्हारे यहां प्रतीकार करने के विचार से होता है । (७) (ततः प्रवि०......चन्दनदासः) नंतर प्रवेश करता है दूसरे चांडाल के

मरणं भवति इति नमः कृतान्ताय। (८) अथवा न नृशंसानां उदासीनेषु, इतरेषु वा, विशेषोऽस्ति (समन्ताद् अवलोक्य) भोः प्रियवयस्य विष्णुदास कथं प्रतिवचनमपि न मे प्रतिपद्यसे (९) अथवा दुर्लभाः ते खलु मानुषाः ये एतस्मिन् काले दृष्टिपथेऽपि तिष्ठन्ति। एतेऽस्मत्प्रिय-वयस्या अश्रुपातमात्रेण कृत-निवाप-सलिला इव कथमपि प्रतिनिवर्तमानाः शोकदीनवदना बाष्प-गुर्व्या दृष्ट्या मां अनुगच्छन्ति। (१०) चाण्डालः–

साथ वध का पोशाख धारण किया हुवा शूल को कंधे पर लेकर स्त्री पुत्र के साथ चंदनदास। (७) (अस्मादृशानां......कृतान्ताय) हमारे जैसे लोकों का कि जो सदा धर्माचरण का भंग करने के लिये डरने वाले हैं उनका भी चोरों के समान मरण होता है। इस कारण नमस्कार है इस यम को। (८) (अथवा......विशेषः अस्ति) अथवा क्रूर पुरुषों के लिये उदासीन अथवा इतर इनमें कोई विशेष प्रतीत नहीं होता है, अर्थात् उनकी क्रूरता सब पर एकसी चलती है। (समंतात्) चारों ओर (भोः प्रिय०......प्रतिपद्यसे) हे प्रिय मित्र विष्णुदास, कैसा उत्तर भी मुझे नहि देते हो। (९) (एते अस्मत्......अनुगच्छन्ति) ये हमारे प्रियमित्र, आंसुएँ बह कर जैसे जल से तर्पण कर रहे हैं, वे कैसे भी वापस होते हुवे, शोक से दीन मुख करके, आंसुओं से भरे हुए दृष्टी के साथ मेरे पीछे पीछे चलते हैं। (१०) (तद्......परिजनं) इसलिये छोड

आर्य, चन्दनदास, आगतोऽसि वध्यस्थानं तद् विसर्जय परिजनम् । (११) चन्दनदासः—कुटुंबिनि, निवर्तस्व सांप्रतं सपुत्रा । न युक्तं खलु अतः परं अनुगंतुम् । (१२) कुटुंबिनी—(सबाष्पम्) परलोकं प्रस्थित आर्य न देशांतरम् । (१३) चंदन०—आर्ये, अयं मित्र-कार्येण मे विनाशः, न पुनः पुरुषदोषेण । तद् अलं विषादेन । (१४) कुटुं०—आर्य, यद्येवं तद् इदानीं अकालः कुल-जनस्य निवार्ततुम् । (१५) चंदन०—अथ किं व्यवसितं कुटुंबिन्या । (१६) कुटुं०—भर्तुश्चरणौ[1] अनुगच्छन्त्या आत्मानुग्रहो भवति इति । (१७) चंदन०—दुर्व्यवसितं इदं

परिवार को । (११) (निवर्तस्व……अनुगन्तुं) पीछे जा अब लड़के के साथ । नहि है योग्य सचमुच इस से परे आना न (१३) (अयं……विषादेन) यह मित्र के कार्य से मेरा नाश है, नहीं फिर मनुष्य के दोष से । इसलिये बस कर दुःख। (१४) (अकालः……निवर्तितुं) यह समय नहि परिवार के वापस होने के लिये। (१५) (किं व्यवसितं कुटुंबिन्या) क्या प्रारंभ किया है (मेरे) स्त्री ने। (१६) (भर्तुः……भवति) पति के पीछे चलने से अपना लाभ होता है। (१७) (दुर्व्यव०……अनुग्रहीतव्यः) बहुत

१ भर्तुः+चरणौ ।

त्वया । अयं पुत्रकोऽश्रुत-लोक-संव्यवहारो बालोऽनुग्रहीतव्यः।
(१८) कुटुं०—अनुगृह्णन्तु एनं प्रसन्ना देवताः । जात
पुत्रक, पत पश्चिमयोः पितुः पादयोः । (१९) पुत्रः—
(पादयोर्निपत्य) किं इदानीं मया तात-विरहितेन अनुष्ठातव्यम् ।
(२०) चंदन०—पुत्र, चाणक्यविरहिते देशे वस्तव्यम् ।
(२१) चांडालः—आर्य चंदनदास । निखातः शूलः, तत्
सज्जो भव । (२२) कुटुं०—आर्याः, परित्रायध्वं परित्राय-
ध्वम् । (२३) चंदन०—आर्ये, अथ किं अत्र आक्रंदासि ।
स्वर्गं गतानां तावद् देवा दुःखितं परिजनं अनुकंपन्ते ।
अन्यच्च, मित्रकार्येण मे विनाशो न अयुक्त-कार्येण । तत् किं
हर्षस्थानेऽपि रुद्यते । (२४) प्रथमश्चांडालः—अरे

बुरा किया यह तूनें । यह लडका जिसको लोक व्यवहार का ज्ञान
नहि ऐसा केवल बालक है इसके ऊपर दया कर।(१८) (पत......
पादयोः) पड पिता के अंतिम पांवों पर। (२०) (चाणक्य......
वस्तव्यं) जहां चाणक्य नहि हैं ऐसे देश में रहना। (२१) (निखातः
शूलः) गाड दिया। (सज्जो भव) तैयार हो। (२३)(किं आक्रंदसि)

---

२ पुत्रकः+अश्रुत । ३ बालः+अनुग्रहीतव्यः ।
४ पादयोः+ निपत्य । ५ प्रथमः+चांडालः ।

बिल्वपत्र, गृहाण चन्दनदासम् । स्वयमेव परिजनो गमिष्यति । (२५) द्वितीयः चांडालः—अरे वज्रलोमन्, एष गृह्णामि । (२६) चंदन०—मुहूर्तं तिष्ठ यावत् पुत्रकं सान्त्वयामि । (पुत्रकं मूर्ध्नि समाघ्राय) जात, अवश्यं भवितव्ये विनाशे मित्रकार्यं समुद्वहमानो विनाशं अनुभवामि । (२७) पुत्रः—तात, किं इदमपि भणितव्यम् । कुलधर्मः खलु एषोऽस्माकम् । (इति पादयोः पतति) । (२८) चाण्डालः—अरे गृहाण एनम् । (२९) कुटुं०—(सोरस्ताडनम्) आर्य, परित्रायस्व, परित्रायस्व । (प्रविश्य पटाक्षेपेण) । (३०) राक्षसः—भवति न भेतव्यम् । भोः भोः शूलायतनाः न खलु व्यापादयितव्यः चन्दनदासः । (३१) चंदन०—(सबाष्पं) अमात्य किमिदम् ।

क्यों रोती है । (तत्......रुद्यते) तो हर्ष के स्थान में रोया क्यों जाता है । (२६) (पुत्रकं सान्त्वयामि) लडके को शांत करता हूं । ((मूर्ध्नि समाघ्राय) शिर में सूंघकर । (मित्रकार्यं समुद्वहमानः) मित्र का कार्य करने वाला । (२७) (किं इदमपि भणितव्यं) क्या यह भी बोलना चाहिये। (२९) (सोरस्ताडनं) छाती पीटकर। (पटाक्षेपेण) कपडे को झटका देकर । (३०) (न खलु व्यापा०.. ...चन्दनदासः)

(३२) राक्षसः—त्वदीय-सुचरितैकदेशस्य अनुकरणं किल एतत। (३३) चंदन०—सर्वं अपि इमं प्रयासं निष्फलं कुर्वता त्वया किं अनुष्ठितम्। (३४) राक्षसः—सखे स्वार्थ एव अनुष्ठितः। कृतं उपालंभेन। भद्रमुख, निवेद्यतां दुरात्मने चाणक्याय। (३५) वज्र०—किमिति। (३६) राक्षसः—अहं अमात्य-राक्षसोऽस्मि। (३७) प्रथमः चांडा०—त्वं तावत चंदनदासं गृहीत्वा इह एतस्य श्मशानपादपस्य छायायां मुहूर्तं तिष्ठ यावदहं आचार्य चाणक्यस्य निवेदयामि गृहीतोऽमात्य-राक्षस इति। (३८) द्वितीo चांडा०—अरे वज्रलोमन् गच्छ।

(इति सपुत्रदारेण चंदनदासेन सह निष्क्रांतः)

मुद्रा-राक्षसम्।

न मारो चंदनदास को। (३२) (त्वदीय......एतत्) तुम्हारे उत्तम आचरण के एक अंश का अनुकरण है सचमुच यह। (३३) (सर्वं ......अनुष्ठितं) सब इस कष्ठ को विफल करके तूनें क्या यह किया। (३४) (कृतं उपालंभेन) बस होगया मखौल। (३७) (त्वं ......राक्षसः) तूं तो चंदनदास को लेकर यहां ही इस शमशान वृक्ष के छाया में घडी भर ठहर, जबतक मैं आचार्य चाणक्य को कहता हूं कि पकडा है मंत्री राक्षस।

सूचना—इस पाठ में तथा आगामी पाठ में अथवा किसी पाठ में जिस जिस स्थान पर पाठकों को कोई कठिनता उपस्थित होगी तो उस उस पाठ को पाठक विचार पूर्वक बार बार पढते रहेंगे तो उनका समाधान स्वयं हो जायगा । तथा कथा में आये हुए किसी वाक्य का अर्थ ध्यान में न आया तो विचार पूर्वक उस संपूर्ण कथा को बार बार पढने से उस अर्थ का प्रकाश उन के मन में होगा ।

३८ अष्टात्रिंशः पाठः ।

शब्द—पुल्लिंगी

वेणीसंहारः—बालों को गूंदना बटना ।
शिलीमुखः—बाण
आसारः—हमला, वर्षा
निषंगः—तलवार, धनुष्यकीडोरी
ज्वलनः—अग्नि
किरीटिन्—अर्जुन
क्षयः—नाश
व्यापारः—व्यवहार
भुजदर्पः—बाहुओं का गर्व
शिलीमुखासारः—बाणोंसे हमला
सैनिकः—फौजी आदमी
आवेगः—गड़ बड़
केशः—बाल
पाणि—हाथ
रिपुः—शत्रु
सिद्धजनः—सिद्ध मनुष्य, योगी

स्त्रीलिंगी

वेणी—स्त्रियों के सिर के बालों को बांधने की एक तरज, गूंद
शंका—संशय, संदेह
याज्ञसेनी, पांचाली } द्रौपदी
तपस्विनी—तप करने वाली स्त्री
पांचालराजकन्या—द्रौपदी

नपुंसकलिंगी

समन्तपंचकं—कुरुक्षेत्र
क्षतं—घाव, व्रण
क्षतजं—घाव से बहने वाला खून
गदाकौशलं—गदा युद्ध मे प्रवीणता
अंबरं—वस्त्र, आकाश
अश्रु—आंसु,
तलं—तला,
नभः—अकाश

विशेषण

उक्षित—भरा हुवा
संचारिन्—घूमने वाला
सज्ज—तैयार
आयुष्मान्—आयु वाला
दुर्लक्ष्य—देखने के लिये कठिन
अन्तरित—ढका हुए
अवकृष्ट—खेंचा हुवा
सन्निहिता—है, रखी है
भीरु—डरपोक
अरुणित—लाल हुवा हुवा
पूरित—पूर्ण कि हुई
अलीक—असत्य

क्रिया।

अपसर्पति—पीछे हटती है
भेतव्यं—भीने योग्य
उपनीयताम्—ले आइये
गम्यते—जाया जाता है
वंच्यसे—ठगाये जा रहे हो
अन्वेषयति—ढूंडता है
संयच्छामि—बांधता हूं
अभिपातयामि—गिराता हूं
बध्नाति—बांधता है
परिक्रामति—कांपती है
आलिंग्य—आलिंगन करके
आश्वासयसि—विश्वास देते हो

(

मार्जयति—साफ करता है	मुक्त्वा—छोड़ कर
अवशिष्टं—बाकी है, शेष	संयम्यतां—बांध लीजिये
अभिनंद्यते—आनन्दित किया जाता है	शिक्षिष्ये—सीखूंगी

अन्य ।

सहसा—एक दम	उद्धतं—घमंड से
गाढं—दृढ, सख्त	निष्ठुरं / निर्दयं } कठोरता से
हञ्जे—अरे	समं—साथ
स्वैरं—अपने आप	
सस्नेहं—प्यार से	

(३५) वेणी-संहार-महोत्सवः ।

(नेपथ्ये)

(१) भो भो समंतपंचक संचारिणो योधाः, कृतं अस्मद्दर्शन-त्रासेन । कथय कस्मिन्नुद्देशे याज्ञसेनी सन्निहिता ।

(२) युधिष्ठिरः—(सहसा उत्थाय) पांचालि, न भेतव्यं न

(वेणी संहार महोत्सवः) वेणी बांधने का उत्सव । (नेपथ्ये) पड़दे के पीछे । (१) (कृतं अ०......त्रासेन) बस की जिये अब हमारे दर्शन से दुःखी होना । (कस्मिन्......सन्निहिता) कहां है द्रौपदी । (२) (दुर्योधन हतक) हे दुष्ट दुर्योधन । (अपनया...

भेतव्यम् । उपानीयतां मे सज्जं धनुः । दुरात्मन् दुर्योधन-हतक, आगच्छ । अपनयामि ते गदाकौशल-संभूतं भुजदर्पं शिलीमुखासारेण ।

(ततः प्रविशति—क्षतज—सिक्त—सर्वांगो भीमसेनः)

(३) भीमसेनः—(उद्धतं परिक्रामन्) भोः भोः समन्त पंचक-संचारिणः सैनिकाः कोऽयमावेगः । (४) युधिष्ठिरः—कः कोऽत्र भोः । सनिषंगं धनुरुपनय । कथं न कश्चित् परिजनः । भवतु बाहुद्वयेन एव दुरात्मानं गाढं आलिंग्य ज्वलनं अभिपातयामि । (परिकरं बध्नाति) (५) द्रौपदी—(भयात परिक्रामति) (६) भीमः—तिष्ठ, तिष्ठ, भीरु, क्व अधुना गम्यते । (इति केशेषु महीतुं इच्छति) (७) युधिष्ठिरः—

...सारेण) दूर करता हूं गदा युद्ध की प्रवीणता से उत्पन्न हुए हुए तुम्हारे बाहुओं के गर्व को, बाणों के आघात से । (क्षतज-सिक्त सर्वांगः) आदमी के खून से भरा हुआ सब अंग हैं जिसका । (३) (कः अयं आवेगः) क्यों यह गड़बड़ । (४) (सनिषंग···उपनय) सब साधनों के साथ धनुष्य लाव । (ज्वलनं अभिपातयामि) आग में फेंकता हूं । (परिकरं बध्नाति) चोगा बांधता है । (६) (क्व अधुना गम्यते) कहां अब जाती है । (७) (विष्फुरं आलिंग्य)

(भीमं निष्ठुरं आलिंग्य)—दुरात्मन्, भीमार्जुनशत्रो सुयोधन हतक, (८) भीमः—अये, कथं आर्यः सुयोधनशंकया निर्दयं मां आलिंगति । (९) कंचुकी—(उपगम्य सहर्षं) महाराज, वंच्यसे । अयं खलु आयुष्मान् भीमसेनः सुयोधन-क्षतजाऽरुणित-शरीरांबरो दुर्लक्ष्य—व्यक्तिः । अलं अधुना संदेहेन । (१०) चेटी—(द्रौपदीं आलिंग्य) देवि, पूरित-प्रतिज्ञाभरो नाथो देव्याःवेणीसंहारं कर्तुं त्वां अन्वेषयति । (११) द्रौपदी—हञ्जे,किं मां अलीक-वचनैःआश्वासयसि ।

क्रूरता के साथ आलिंगन देकर,जोर से पकड़ कर । (८) (अये… आलिंगति) अरे कैसा बड़ा (भाई धर्मराज) दुर्योधन के संशय से क्रूरता से मुझे आलिंगन देता है । (९) (महाराज, वंच्यसे) हे महाराजा ! ठगते हो अर्थात् तुम जो इसको दुर्योधन समझ रहे हो यह ठीक नहीं । (सुयोधन-क्षत-जाऽरुणित-शरीरांऽबरः) दुर्योधन के घावों से निकले हुए रक्त से लाल हुए हुए शरीर तथा वस्त्र जिनके (ऐसा भीमसेन) । (दुर्लक्ष्य व्यक्तिः) पहचानने के लिये कठिन । (१०) (देवि……अन्वेषयति) हे देवी ! पूर्ण किया हुआ है प्रतिज्ञा का भार जिसने ऐसा पति देवी की वेणी बांधने के लिये तुम को ढूंढ रहा है। (११)(अलीक वचनैः आश्वासयसि) झूटे भाषण से आश्वासन दे रही है ॥

(१२) कंचुकी—महाराज । वञ्च्यसे । (१३) युधिष्ठिरः—जयंधर, अपि सत्यं नायं मम वैरी सुयोधन हतकः । (१४) भीमः—देव, अजातशत्रो कुतो अद्यापि सुयोधन हतकः। (१५) युधिष्ठिरः—(स्वैरं मुक्त्वा भीमं अवलोकयन् अश्रूणि मार्जयति) ।* (१६) भीमः—(पादयोः पतित्वा) जयतु आर्यः । (१७) युधिष्ठिरः—वत्स, बाष्पजलांतरित-नयनत्वान् न पश्यामि ते मुखचंद्रम् । तत् कथय कच्चित् जीवति भवान् समं किरीटिना । (१८) भीमः—निहत-सकलरिपुपक्षे त्वयि नराधिपे जीवति भीमोऽर्जुनश्च । (१९) युधिष्ठिरः—(सस्नेहं पुनः गाढं आलिंगति) । (२०) भीमः—आर्य, मुंचतु मां क्षणं एकं भवान् ।

---

(१३) (अपि......हतकः) अरे यह सच है क्या, कि यह मेरा शत्रु दुर्योधन नहीं है । (१४) (आजातशत्रो) हे धर्मराज (१५) (अश्रूणि मार्जयति) आंसु पूंछता है । (१७) (बाष्पजलान्तरितनयनत्वात्) आंसु के जल से भरे हुवे आंख होने के कारण । (समं किरीटिना) अर्जुन के साथ । (१८) (निहत०......अर्जुनश्च) जिसका शत्रुका सब पक्ष मारा गया है, ऐसा तूं राजा होने पर भीम तथा अर्जुन

(२१) युधिष्ठिरः—किं अपरं अवशिष्टम् । (२२) भीमः—आर्य सुमहद् अवशिष्टम । संयच्छामि तावद् अनेन दुर्योधन-दुःशासन-रुधिरोक्षितेन पाणिना पांचाल्याः दुःशासनावकृष्टं केशहस्तम् । (२३) राजा—सत्वरं गच्छतु भवान् । अनुभवतु तपस्विनी वेणीसंहार-महोत्सवम् । (२४) भीमः—भवति पांचाल-राजकन्ये । दिष्टया वर्धसे रिपुकुलक्षयेण । (२५) द्रौपदी—(उपसृत्य) जयतु जयतु नाथः । (भयाद् अपसर्पति) । (२६) भीमः—राजपुत्रि, अलं एवं मामवलोक्य त्रासेन । बुद्धिमतिके क संप्रति भानुमती या उपहसति पांडवदारान् । (२७) द्रौपदी—आज्ञापयतु नाथः । (२८) भीमः—स्मरति वा भवती, यत् मया

जिंदा हैं । (२१) (किं ..शिष्टं) क्या और बाकी है । (२२) सुमहत् अवशिष्टं) बहुत कुछ रहा है । (संयच्छामि......केशहस्तं) दुर्योधन दुःशासन के खून से भरे हुवे हाथों से द्रौपदी के दुःशासन ने खेंचे हुवे बालों के गुच्छे को तबतक बांधता हूं । (२४) (दिष्ट्या वर्धसे रिपुकुलक्षयेण) सुदैव (तूं) से बढती है शत्रू के कुल के नाश से । (२६) (बुद्धिमतिके) हे बुद्धिमति नामक स्त्रि । (क......दारान्) कहां है अब भानुमति जो हंसती थी पाडवों के स्त्रियों को । (२८) (स्मरति......आसीत्) याद है तुमको जो मैं ने प्रतिज्ञा की

प्रतिज्ञातं आसीत् । (२९) द्रौपदी—नाथ स्मरामि, अनु भवामि च । (३०) भीमः—संयम्यतां इदानीं धार्तराष्ट्रकुल-कालरात्रिः दुःशासन-विलुलिता वेणी । (३१) द्रौपदी—नाथ विस्मृताऽस्मि एतं व्यापारम् । नाथस्य प्रसादेन पुनरपि शिक्षिष्ये । (३२) चेटी—वेणीं बध्नाति । (३३) युधिष्ठिरः—देवि, एष ते वेणी—संहारोऽभिनंद्यते नभस्तल-संचारिणा सिद्धजनेन ।

वेणीसंहारम् ।

श्री । (३०) (संयम्यतां......वेणी) बांधीये अब धृतराष्ट्र पुत्रों के कुल की काल-(मृत्यु)-रात्री जैसी दुःशासन ने बिघाडी हुई वेणी । (३१) (नाथ......व्यापारं) हे पति। भूलगई हूं इस व्यवसाय को । (३३) (देवि......सिद्धजनेन) हे पत्नी ! यह तुम्हारा वेणी बांधने का उत्सव आनंदित किया जाता है आकाश में संचार करने वाले सिद्ध लोकों ने ।

३९ एकोन चत्वारिंशत् पाठः ।

शब्द—पुल्लिंगी ।

युवराजः—राजपुत्र

यौवराज्याभिषेकः—राजपुत्र को राजगद्दी का अधिकारी बनाने का संस्कार

गभस्तिः—किरण

उपदेष्टृ—उपदेशक

अभिनिवेशः—इच्छा, प्रीति,

परिभवः—पराभव

समवायः—समूह
मलः—मैल, गन्धगी
रजनिकरः—चंद्र
प्रतिशब्दः—प्रतिध्वनि
बिंदुः—बूंद
विनयः—नम्रता
निसर्गः—स्वभाव
मदः—गर्व, अभिमान
अविनयः—घमंड, गुस्ताखी
भवादृशः—आप जैसा मनुष्य
स्फटक मणिः—चमकीला मणी
उपरचिताऽञ्जलिः—हाथ जोड़ने वाला
विटः—मखौली, विनोदी मनुष्य
द्विषन्—द्वेष करने वाला
सचिवः—मंत्री,
हितवादिन्—हितकारक बोलने वाला
धीरः—धैर्यशाली,
सिद्धादेशः—जिसकी आज्ञा सब मानते हैं ऐसा

स्त्रीलिंगी।

अनर्थपरंपरा—दुःखका सिलसिला
प्रज्ञा—बुद्धि
प्रकृति—स्वभाव
रजनि—रात्रि
कालुष्यता—मलीनता
देवता—देवता, विद्वान, पूजनीयजन

नपुंसकलिंगी।

तमः—अंधेरा
गर्भेश्वरत्वं—गर्भ से राजा का अधिकार
भाजनं—पात्र, बरतन
श्रुतं—अध्ययन
अधिष्ठानं—आश्रय
तृणं—घास
माहात्म्यं—बड़ेपन

शीलं—स्वभाव
गंधर्वनगर—बादल, मेघ
अभ्रं—नोक
यौवनं—जवानी
आयतनं—स्थान
वैदग्ध्यं—विद्वत्ता, ज्ञानीपण

अधिदैवतं—देवता
वचः—भाषण
वैक्लव्यं—भ्रांति, भ्रम
त्रैलोक्यं—तीन लोक, स्वर्ग मृत्यु पाताल

विशेषण ।

विनीत—नम्र
समुपस्थित—प्राप्त
विनीततर—अधिक नम्र
गहन—घना
दारुण—भयंकर
अमानुष—मनुष्यों में न दीखने वाला
विरल—मुश्कील से निकलने वाले
उद्दाम—बंधन रहित
विक्लव—भ्रांत
आरूढ—चढा हुवा
अश्वारूढ—घोडे पर चढा हुवा
प्रभव—उत्पन्न हुवा हुवा

अपगत—गया हुवा
अवधीरयन्—अपमान करने वाला
निर्भर—भरा हुवा
धूर्त—ठग
समारोपित—ऊपर रखा हुवा
अभिजात—कुलीन,
उपशांत—शांत
मान्य, अर्चनीय—सन्मान के योग्य
तरल—चंचल
मुखरीकृतवान्—बोलने को उत्साहित करने वाला

अभिनव—नवीन, नूतन

अप्रतिम—असमान, असाधारण

प्रक्षालित—धोया हुवा

निर्मृष्ट—मांजा हुवा

क्रिया ।

प्रोवाच—बोला

खेदयन्ति—दुःख देते हैं

ईक्षते—, आलोकयते— } देखती है

प्रमाणी करोति—प्रमाण मानती है

प्रणमन्ति—नमस्कार करते हैं

अर्चयन्ति—सत्कार करते हैं

उपयाति—प्राप्त होती है

परिपाल्यते—रक्षा की जाती है

अनुवर्तते—, अनुरुध्यते— } अनुसरती है

अनुबुध्यते—जानती है

मानयन्ति—सन्मान करते हैं

अभ्युत्तिष्ठन्ति—उठते हैं

उपशशाम—चुप होगया

अभिधाय कह कर

असूयन्ति—(मन में) जलते है, सहते नहीं

आपादयन्ति—लेजाते हैं

प्रयतेथाः—प्रयत्न करो

शोच्यसे—शोक किया जाता है (तेरा)

प्रतार्यसे—ठगाये जाओगे

अवकृष्यसे—नीचे जाओगे

खलीकरोति—दुष्ट बनाता है

उन्नमय—ऊंचा करो

आजगाम—आया

आरोपयितुं—उन्नत होने के लिये

कुप्यति—गुस्सा करते हैं

उद्भावयति—रचता है, ढोंग करता है।

उपहस्यसे—, उपालभ्यसे— } हंसी होगी (तुमारी)

अवलुप्यसे—नीचे होगा (तूं)

अपह्रियसे—नीचे जाओगे

अवनमय—नीचे करो

विजयस्व—विजय करो

अन्य ।

अहर्निशं--सदा, दिनरात

(३६) शुकनासस्य चन्द्रापीडाय उपदेशः

शुकनासका चंद्रापीड़ के लिये उपदेश ।

(१) समुपस्थित-यौवराज्याभिषेकं चन्द्रापीडं कदाचिद्दर्शनार्थं आगतं आरूढ-विनयमपि विनीततरं इच्छन् शुकनासः प्रोवाच । "तात चन्द्रापीड, निसर्गत एव अतिगहनं तमो यौवन-प्रभवम् ॥

(१) जिसका युवराज के गद्दी पर अभिषेक प्राप्त है ऐसे,(तथा जो) किसी समय देखने के लिये आया हुवा है । ऐसे, चंद्रापीड को, जो कि पहिले से ही नम्र है, परन्तु अधिक नम्र बनाने की इच्छा करने वाला शुकनास बोला । "हे प्रिय चंद्रापीड, स्वभाव से ही बड़ा घना अंधेरा यह है जो जवानी से उत्पन्न होता है ।

(२) दारुणः च लक्ष्मीमदः गर्भेश्वरत्वं अभिनवयौवनत्वं अप्रतिमरूपत्वं अमानुषशक्तित्वं चेति महती इयं खलु अनर्थ-परंपरा ॥

(२) ऐसः की घमंड भयानक है । गर्भ से राजापन, नूतन तारुण्य, सौंदर्य, अमानुषशक्ति इन (चारों की) बड़ी कष्ट उत्पन्न करने वाली परंपरा है ।

(३) अविनयानां एकैक-मपि एषां आयतनम् किमुत समवायः । यौवनाऽऽरम्भे च प्रायः शास्त्रजल-निर्मलाऽपि कालुष्यतां उपयाति बुद्धिः ॥

(३) इनमें से एक एक घमंड का घर है । (इनके) समुदाय की बात ही क्या ? जवानी के प्रारंभ में, बहुधा शास्त्रों के उदक से धो कर निर्मल हुवी हुवी बुद्धि भी मलिनता को प्राप्त होती है ।

(४) भवादृशा हि भवन्ति भाजनं उपदेशानाम् । अपगत-मले हि मनसि स्फटिकमणौ इव रजनिकर-गभस्तयः वि-शन्ति सुखेन उपदेशाः ॥

(४) आप जैसे ही होते हैं उपदेश के लिये योग्य । निर्मल मन के अंदर सुख से उपदेश घुसते हैं जैसे शुद्ध स्फटिक मणि में चांद के किरण ।

(५) विरला हि राज्ञां उप-देष्टारः । प्रतिशब्दक इव राज वचनं अनुगच्छति जनो भयात् । उद्दामदर्पाश्च ते उपादिश्यमाना न शृण्वन्ति । शृण्वन्तोऽपि च अवधीरयन्तः खेदयन्ति हितो-पदेश–दायिनो गुरून् ॥

(५) राजाओं को उपदेश देने वाले बहुत थोड़े । प्रतिध्वनि के समान राजा के भाषण को भय से लोक पालते हैं । बड़े गर्विष्ट वे उपदेश सुनकर भी नहीं सुनते । सुनते हुए भी तिरस्कार करते हुवे दुःख देते हैं हित का उपदेश करने वाले गुरुओं को ।

(६) आलोकयतु तावत् कल्याणाभिनिवेशी लक्ष्मीमेव प्रथमम् । लब्धाऽपि दुःखेन परिपाल्यते । न परिचयं रक्षति । न अभिजनं ईक्षते ॥

(६) विचार करो, पहिले हित चाहने वाला लक्ष्मी के विषय में । जो प्राप्त होने पर दुःख से रक्षित होती है । जो मित्रता नहीं रखती । जो कुलीनता देखती नहीं ।

(७) न रूपं अलोकयते । न कुलक्रमं अनुवर्तते। न शीलं पश्यति । न वैदग्ध्यं गणयति। न श्रुतं आकर्णयति ।

(७) जो सुंदरता को नहीं देखती । जो कुल के अनुसार आती नहीं । जो सदाचार की पर्वा नहीं करती । जो विद्वत्ता को गिनती नहीं । जो अध्ययन को सुनती नहीं ।

(८) न धर्मं अनुरुध्यते । न सत्यं अनुबुध्यते । न लक्षणं प्रमाणीकरोति । गंधर्वनगर-लेखेव पश्यत एव नश्यति ।

(८) जो धर्म को नहीं अनुसरती । जो सत्य को जानती नहीं । जो लक्षण को मानती नहीं । मेघों के लकीरों के समान जो देखते २ नाश को प्राप्त होती है ।

(९) एवंविधया अनया कथं अपि दैववशेन परिगृहीता विक्लवा भवन्ति राजानः सर्वा-

(९) इस प्रकार के संपत्ति ने किसी प्रकार दैव से स्वीकारे हुवे राजा लोग भ्रमित होते हैं और सब घमंड के स्थान को

ऽविनयानां अधिष्ठानतां च गच्छन्ति । व्यसनशतसंख्यतां उपगता वल्मीक-तृणाग्राव-स्थिता जलाबिंदव इव पतितं अपि आत्मानं न अवगच्छन्ति।

(१०) मिथ्या-माहात्म्य गर्व-निर्भराः च न प्रणमन्ति देवताभ्यः, न पूजयन्ति द्विजान्, न मानयंति मान्यान् नार्चयन्ति अर्चनीयान् ।

(११) न अभ्युत्तिष्ठन्ति गुरून्, जरा-वैक्लव्य-प्रल-पितं इति पश्यन्ति वृद्धो-पदे-शम्, आत्म-प्रज्ञा-परिभव इति असूयन्ति सचिवोपदेशाय कुप्यन्ति हितवादिने ।

पहुंचते हैं। कष्टों के शतसंख्या को प्राप्त होकर (वल्मीक) चिंउ-टियों के मकान पर के घांस के नोक पर ठहरे हुवे पानी के बूंदों के समान गिरने पर भी अपने आपको समझते नहीं।

(१०) झूटे बड़पन की घमंड भरे हुए,देवताओं को नमन नहीं करते, द्विजों का सत्कार नहीं करते, सन्मान के योग्यों को मानते नहीं, सज्जनों को पूजते नहीं।

(११) गुरुओं के लिये उठते नहीं, बुढ़ापे के कारण बड़बड़ (करता है) ऐसा देखते हैं वृद्धों के उपदेश की ओर, अपनी बुद्धी का पराभव हुवा ऐसा (समझकर) मन में जलते हैं मंत्री के उपदेश से, गुस्सा करते हैं हितकारक बोलने वाले के ऊपर।

(१२) सर्वथा तं अभिनंदन्ति, तं आलपन्ति, तं पार्श्वे कुर्वन्ति, तं संवर्धयन्ति, तेन सह सुखं अवतिष्ठन्ते, तस्मै ददति, तस्य वचनं शृणवन्ति, तं बहु मन्यन्ते, तं आप्ततां आपादयन्ति, यो अहर्निशं उपरचिताञ्जलिः अधिदैवतं इव स्तौति, यो वा महात्म्यं उद्भावयति।

(१३) तद् एवं दारुणे राज्यतन्त्रे, मोहकारिणि च यौवने,कुमार, तथा प्रयतेथाः, यथा नोपहस्यसे जनैः। न निंद्यसे साधुभिः, न धिक् क्रियसे गुरुभिः, नोपालभ्यसे सुहृद्भिः, न शोच्यसे विद्वद्भिः।

(१४) यथा च न प्रतार्यसे

(१२)सब प्रकार उसी का गौरव करते हैं, उसी के साथ बोलते हैं, उसी को पीठपर रखते हैं, उसीको बढ़ाते हैं, उसीके साथ सुख भोगते हैं, उसीको देते हैं, उसीका भाषण सुनते हैं, उसीको बड़ा मानते हैं, उसीको आप्त पुरुष समझते हैं, कि जो दिन रात हाथ जोड़ कर इनको देवता समझकर स्तुति करता है, अथवा जो इनको बड़ा बनाता है।

(१३) इस प्रकार भयानक राज्य तंत्र में, मोह उत्पन्न करने वाले जवानीमें, हे लड़के, वैसा प्रयत्न करो कि जिससे लोग हंसी नहि करेंगे। सज्जन निंदेंगे नहीं, गुरु धिक्कार नहीं करेंगे, मित्र ठट्ठा नहीं करेंगे। विद्वान शोक नहीं करेंगे।

(१४) और जैसा मखौलिये

विटैः, न प्रहस्यसे कुशलैः, न अवलुप्यसे सेवक—वृकैः न वंच्यसे धूर्तैः, न अवकृष्यसे रागेण, न अपह्रियसे सुखेन

(१५) कामं भवान् प्रकृत्यैव धीरः, पित्रा च समारोपित-संस्कारः, तरल—हृदयं अप्रतिबुद्धं च मदयन्ति धनानि। तथापि भवद्गुण-संतोषो मामेवं मुखरीकृतवान्।

(१६) विद्वांसमपि, सचेतनमपि, महासत्वमपि, धीरमपि, अभिजातमपि, प्रयत्नवन्तमपि, पुरुषं इयं दुर्विनीता खलीकरोति लक्ष्मीः इति !

(१७) अवनमय द्विषतां शिरांसि। उन्नमय स्वबंधुवर्गम्। विजयस्व वसुधाम्। अयं च

ठगायेंगे नही, प्रवीण हँसेंगे नहीं, सेवक सिरपर नहीं बैठेंगे। धूर्त लूटेंगे नहीं प्रीतिसे खेंचे नही जाओगे, सुख से गमाओगे नहीं॥

(१५) आप स्वभावतः काफी गंभीर है, और पिताने संस्कार भी किया है, चंचल मनवाले अज्ञानी को ही धन घमंड पैदा करता है तथापि आपके गुणों से हुए हुए सन्तोषने मुझे बोलने के लिये उत्साहित किया।

(१६) विद्वान को भी, जानने वाले को भी, महाशय को भी, धीरज वाले को भी, कुलीन को भी, उद्योगी को भी, पुरुष को यह घमंडी लक्ष्मी दुष्ट बनाती है।

(१७) द्वेषी लोकों के सिर नीचे दबाव। अपने बांधवों को ऊपर उठाव। पृथ्वी को जीतो। यही तेरा समय है प्रताप

ते कालः प्रतापं आरोपयितुम्। आरूढ–प्रतापो राजा त्रैलोक्यदर्शी इव सिद्धादेशो भवति।" इति एतावद् अभिधाय उपशशाम।

(१८) उपशांत–वचसि शुकनासे, चंद्रापीडः ताभिः उपदेशवाग्भिः प्रक्षालित इव, निर्मृष्ट इव, अलंकृत इव, अभिषिक्त इव, पवित्रीकृत इव, प्रीतहृदयो मुहूर्तं स्थित्वा स्वभवनं आजगाम।

कादंबरी।

के ऊपर चढ़ाने के लिये। जिस का प्रताप हुआ है ऐसा राजा त्रैलोक्य में दर्शनीय के समान होता है तथा उसी की आज्ञा सब मानते हैं।" इतना बोलकर चुप हुआ।

(१८) शुकनाश शांत होने के बाद चंद्रापीड उस उपदेश के वचनों से धोया हुआ, मांजा हुआ सुशोभित किया हुआ, स्नान किया हुआ, पवित्र बनाया हुआ, आनन्दित मनवाला हो कर, घडीभर ठहकर, अपने मकान को लौट आया॥



संस्कृत स्वयं-शिक्षक

तीसरा भाग

संस्कृत स्वयं शिक्षक का तीसरा भाग लिखा जारहा है। आशा है कि ४ महीनों के अंदर पाठकों के हाथ में पहुंचेगा। **इस पुस्तक में स्वयं शिक्षक प्रणाली की जो खास विशेषता है वह प्रारंभ होगी और चतुर्थ भाग तक चलेगी।** इस पुस्तक में वर्तमान, भूत, तथा भविष्य कालों के अत्यंत उपयोगी क्रियापदों के रूप बनाने की विधि बतायी जायगी। संधि प्रकरण का अत्यंत उपयोगी भाग समाप्त होगा और पाठकों की योग्यता नये शब्द बनाने तक पहुंच जायगी। साधारण बातचीत तो क्या परंतु इसके पढ़ने से विशेष रीति से लिखने पढ़ने बोलने का अभ्यास निसंदेह होजायगा। इस पुस्तक के पढ़ने से पाठक जान सकेंगे कि स्वयं शिक्षक की प्रणाली की विशेषता क्या है। आशा है कि पाठक इससे लाभ उठावेंगे॥ मूल्य १।)

संस्कृत स्वयं-शिक्षक

प्रथम भाग

(द्वितीय वार)

संस्कृत स्वयं शिक्षक के प्रणाली से संस्कृत पढ़ने वालों को कितना लाभ होरहा है यह बात, इस प्रथम भाग की पहिले वार की सब पुस्तकें ३, ४ महीनों में लग चुकीं और दूसरी वार छापने की बड़ी आवश्यकता हुई, इससे सिद्ध होती है। दूसरी वार छापने के समय इसको बढ़ाने तथा अधिक उपयोगी करने का विचार था इस लिये जैसा का वैसा ही दुबारा छापना पसंद नहीं किया। अब इस प्रथम भाग को बहुतांश में फिर लिखकर डेढ़ गुणे तक बढ़ा दिया है। ३०, ४० शब्दों के एकवचन के रूप दिये हैं तथा सैकड़ों समान शब्द ऐसे दिये हैं कि जिनके सब विभक्तियों के रूप पाठक स्वयं बना सकते हैं। इसमें व्याकरण का हिस्सा भी बढ़ाया हुआ है तथा वाक्य प्रायः दो गुणा अधिक बढ़ाये हैं। आशा है उत्साही पाठकों को पहिले से यह पुस्तक अधिक उपयोगी होगी॥ मूल्य १।)

राजपाल

प्रबंधकर्त्ता सरस्वती आश्रम लाहौर।